श्री
जैन धर्म विषयक प्रश्नोत्तर

रचयिता

न्यायाम्भोनिधि, महान शासन प्रभावक
प. पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय
विजयानंदसूरीश्वरजी म.सा.
(आत्मारामजी म.सा.)

प्रेरक-संपादक

वैराग्यवारिधि प. पू. आचार्यदेवश्रीमद् विजय
कुलचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.

द्रव्य सहायक

श्री श्वेताम्बर मूर्तिपूजक जैन संघ
जयवंत चौक, गणपति मंदिर रोड, नंदुरबार - 425412
Ph- 02564-228927

प्रकाशक

दिव्यदर्शन कार्यालय
३९, कलिकुंड सोसायटी, मफलीपुर चार रास्ता,
कलिकुंड, धोळका.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री

जैनधर्म विषयिक प्रश्नोत्तर

राजेश्री गीरधरलाल हीराभाई

पालणपुर दरबारी न्यायाधीशनी

खायेसथी.

न्यायाभ्योनिधि मुनि श्रीमद् आत्मारामजी

'आनंद विजयजी' महाराजे रच्या

ते.

शा. ललुभाई सुरचंदे

स्वधर्मीयोना हितने वास्ते छपावी प्रसिद्ध कर्या.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिद्धांत महोदधि स्व.प.पू.आचार्यदेव श्री प्रेमसूरीश्वरजी महाराजा

के शिष्य रत्न वैराग्य वारिधि

प.पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजय

कुलचंद्रसूरीश्वरजी महाराजा

द्वारा लिखित संपादित एवं *संकलित-साहित्य साधु-साध्वी*

भगवंत एवं ज्ञान भंडारों को भेंट

- श्री कल्प सूत्र अक्षर गमनिका (प्रताकार) प्राकृत संस्कृत.
- श्री महानिशीथ सूत्र सटीप्पण (प्रताकार) प्राकृत संस्कृत.
- श्री पंच कल्प भाष्य चूर्णि सटीप्पण (प्रताकार) प्राकृत संस्कृत.
- दशाश्रुत स्कन्ध चूर्णि सटीप्पण (प्रताकार) प्राकृत संस्कृत.
- श्राद्ध जीत कल्प (पुस्तकाकार) प्राकृत संस्कृत.
- नव्य यति जीत कल्प (पुस्तकाकार) प्राकृत संस्कृत
- विंशति विंशिका सटीक (पुस्तकाकार) प्राकृत संस्कृत.
- मार्गपारशुद्धि सटीक (पुस्तकाकार) प्राकृत संस्कृत
- सूत्रकृतांग भाग-१ अक्षर गमनिका (पुस्तकाकार) प्राकृत संस्कृत
- सूत्रकृतांग भाग-२ अक्षर गमनिका (पुस्तकाकार) प्राकृत संस्कृत (मुद्रणमां)
- आगमसार (पुस्तकाकार)
- प्रकरणचतुष्टयम् (जीवविचारादि प्रकरण टीका) (प्रताकार)
- संस्कृत शब्द रूपावली (पुस्तकाकार)
- संस्कृत सुलभ धातु रूप कोष भाग-१ पोकेट साईज
- संस्कृत सुलभ धातु रूप कोष भाग-२ पोकेट साईज
- संस्कृत सुलभ धातु रूप कोष भाग-३ पोकेट साईज

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

- संस्कृत सुलभ धातु रुप कोष भाग-४ पोकेट साईज
- सुबोध संस्कृत मार्गोपदेशिका संस्कृत बुक-१
- सुबोध संस्कृत मंदिरान्त : प्रवेशिका संस्कृत बुक-२
- सुबोध प्राकृत विज्ञान पाठशाला.
- ओघो छे अणमूलो (१०१ दीक्षा के गीत) श्रावक-श्राविका प्रति कॉपी रु. १५/-
- आत्म चिंतन कार्ड
- श्रावक-जीवन-दर्शन (श्राद्ध विधि का हिन्दी अनुवाद)
- विशेषणवती सटीक (मुद्रणमां)
- भगवती सूत्र (सटीक अनुवाद) भाग-१-२-३-४
- **श्री जैनधर्म विषयिक प्रश्नोत्तर**

प्राप्ति स्थान

१. **दिव्य दर्शन कार्यालय (कुमारपाळ वी. शाह)**
३९, कलिकुंड सोसायटी, मफलीपुर चार रस्ता, धोळका, जी. अमदावाद.

◆ मुद्रक ◆

राजुल आर्टस्, घाटकोपर (ई), मुंबई-४०० ०७७
फोन : २५०१ ००५६, २५०१ ०८६३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दैनिक कर्त्तव्य

श्रावक के लिए प्रथम दैनिक कर्त्तव्यों का उपदेश निम्न प्रकार से है -

नमस्कार महामन्त्र के स्मरण से दिन का आरम्भ

आज का दिन सफल व आनन्दमय बने। अतः प्रातः सूर्योदय के पहले एक प्रहर, चार घड़ी अथवा दो घड़ी रात्रि शेष रहे तब शय्या का त्याग करें । उठते ही महामंगलमय परमेष्ठी नमस्कार महामन्त्र का सात या आठ बार स्मरण करें । उठते समय चन्द्र बायाँ स्वर चलता हो तो प्रथम बायाँ पाँव एवं दाहिना स्वर चलता हो तो दायाँ पाँव प्रथम उठावें।

शौचादि की बाधा हो तो दिन में एवं संध्या समय उत्तराभिमुख होकर तथा रात्रि में दक्षिणाभिमुख होकर निर्जीव भूमि पर मौनपूर्वक टालें ।

दाद आदि हुआ हो तो उस पर बासी थूक घिसें ।

प्रातः पुरुष पुण्य-प्रकाशक अपने दाहिने हाथ को तथा स्त्री बायें हाथ को देखे ।

आत्म-चिन्तन करें

जगने के बाद शौचादि से निवृत्त होकर आत्म-चिन्तन करें । मैं कौन हूँ? मेरी जाति कौनसी है? कुल कैसा है? उपास्यदेव कौन हैं? उपकारी गुरु कौन हैं? हितकारी धर्म कौनसा है? मेरे क्या-क्या अभिग्रह हैं? मैं किस अवस्था में हूँ? अवश्य ही मैं कहीं से आया हूँ, तो यहीं मेरा जन्म क्यों हुआ? और यहाँ से अवश्य मुझे जाना है तो कहाँ जाऊंगा? इत्यादि चिन्तन से भौतिक पदार्थों के प्रति लगाव घटने लगता है और पाप-प्रवृत्तियों में कमी आती है। अतः प्रतिदिन आत्म-चिन्तन रूप धर्म जागरिका करें ।

नींद उड़ाने का उपाय

उक्त चिन्तन के बाद भी यदि सुस्ती लगे अर्थात् नींद न उड़े तो नाक से श्वास को कुछ क्षण के लिए रोक देवें । नींद उड़ जाएगी । ताजगी का अनुभव होगा ।

आवश्यक कार्य आदि की सूचना मन्द स्वर से करें

जल्दी सुबह उठने के बाद आवश्यक कार्य आदि की किसे भी सूचना करनी हो तो मन्द स्वर से करें । गाढ़ स्वर में बोलने पर हिंसक प्राणी जग जावे और हिंसा में प्रवृत्ति करे एवं पड़ोसी जग जावे और आरम्भ समारम्भ में लग जावे । इस प्रकार के फिजूल पापबन्ध से स्वयं को बचाइये ।

सामायिक, प्रतिक्रमण और स्वाध्याय करें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आत्मशुद्धि, समभाव की प्राप्ति और ज्ञान-वृद्धि के लिए सुबह सदा ही प्रतिक्रमण, सामायिक और स्वाध्याय आदि करें । फिर प्रमुदित होकर 'मंगलं भगवान् वीरो' आदि स्तुतिपाठ करें ।

बुरे स्वप्नों के अशुभ फल से बचने का उपाय

नित्य प्रतिक्रमण न करने वाले भी यदि अशुभ स्वप्न को देखें तो अवश्य ही अनिष्ट फल से बचने के लिए कायोत्सर्ग करें ।

सूर्योदय से पूर्व ही चौदह नियम धारण करें और नवकारसी आदि का पच्चक्खाण करें ।

तीर्थस्वरूप माता-पिता को प्रणाम करें

अत्यन्त उपकारी तीर्थस्वरूप माता-पिता आदि गुरुजनों को प्रणाम कर हमेशा तीर्थ-यात्रा के फल को प्राप्त करें। विनय से प्रसन्न गुरुजनों के आशीर्वाद से जीवन सफलता को पाता है ।

दर्पण में मुख-दर्शन

तिलक करने के लिए, मंगल-हेतु एवं काल-ज्ञान के लिए दर्पण में अपना मुँह देखें।

प्रभु दर्शन-वंदन-पूजन नित्य करें

अनन्त उपकारी श्री अरिहन्त परमात्मा के दर्शन-पूजन-वंदन अवश्य करें। दर्शन से अपने सम्यग्दर्शन को निर्मल करें । नित्य मासक्षमण के तप का फल प्राप्त करें । स्वद्रव्य से पूजन कर प्रभु-आज्ञापालन, चित्त-प्रसन्नता और अनन्त पुण्य के भागी बनें अर्थात् शीघ्र ही अभ्युदय एवं मोक्ष की प्राप्ति करें । कहा भी है -

दर्शनाद् दुरितध्वंसी, वंदनाद् वाञ्छितप्रदः ।
पूजनात् पूरकः श्रीणां, जिनः साक्षात् सुरद्रुमः ।।१।।

दर्शन से पापों के नाशक, वंदन से वांछितों के प्रदायक और पूजन से सम्पदाओं के पूरक श्री जिनेश्वर देव साक्षात् कल्पवृक्ष हैं ।।१।।

आगमों का भी कथन है कि श्रावक को दर्शन के बिना जलपान, पूजन किये बिना भोजन और शाम को मंगल दीपक, आरती आदि रूप पूजन बिना शयन करना उचित नहीं है। प्रभुपूजन में शुद्धियों का खास ध्यान रखें, जिनका स्वरूप निम्न प्रकार है-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रभु-पूजन की सात शुद्धियाँ

प्रभुपूजा में (१) देह (२) वस्त्र (३) मन (४) भूमि (५) उपकरण (६) द्रव्य और (७) विधि शुद्धि का विधान है ।

देह-शुद्धि - स्नान करने पर भी फोड़े-फुंसी, छाले, घाव आदि से पीप-मवाद निकलना बन्द न हो तो उसे स्वयं अंगपूजा न करनी चाहिए । किन्तु स्वयं के पुष्प, चन्दन आदि किसी को देकर पूजा करवानी चाहिए । स्वयं दूर से ही धूप, दीप, अक्षत, नैवेद्य, फल आदि से अग्रपूजा और चैत्यवंदन आदि रूप भावपूजा करे ।

वस्त्र-शुद्धि - नये या धुले, श्वेत, अखंड एवं बिना फटे, बिना जले हुए धोती और दुपट्टे को पुरुष तथा घाघरा, ओढ़नी और कंचुक को स्त्री पहने ।

मन-शुद्धि - भौतिक इच्छा, यश-कीर्ति की वांछा, कौतुक, व्यग्रता आदि दोषों को टालकर मन पूजा में एकाग्र रखें ।

भूमि-शुद्धि - मंदिर में सर्वत्र एवं विशेष रूप से जहाँ प्रभु-पूजा, चैत्यवंदन आदि करना हो उस भूमि को स्वयं या अन्य से साफ करे, करावें ।

उपकरण-शुद्धि - पूजा के भाजन एवं जल, केसर, चन्दन, पुष्प आदि सामग्री पवित्र एवं श्रेष्ठ होनी चाहिए ।

द्रव्य-शुद्धि - न्यायोपार्जित स्वद्रव्य से पूजा करें ।

विधि-शुद्धि - भक्ति और बहुमानपूर्वक दर्शन-पूजन करते समय विधि का पूरा ख्याल रखना चाहिए । संक्षेप में विधि निम्नलिखित पाँच अभिगम, दश त्रिक के विवरण आदि से जानें ।

पाँच अभिगम

मंदिर में प्रवेश करते समय पाँच बातों का ख्याल रखें -

(१) सजीव द्रव्य, उपलक्षण से स्वयं के खाने-पीने के काम में आने वाली वस्तुओं को तथा लकड़ी, शस्त्र आदि को मन्दिर के बाहर रखें ।

(२) निर्जीव वस्तु, उपलक्षण से आभूषण, धन आदि कीमती चीजों को मन्दिर जाते समय साथ ले जावें ।

(३) प्रभु के दर्शन होते ही दोनों हाथ जोड़कर सिर पर अंजलि रचें ।

(४) दुपट्टा-खेश डालें ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(५) मन को एकाग्र रखें अर्थात् संकल्प-विकल्प न करें ।

अथवा राजा इन पाँच राज्य-चिह्नों का त्याग करे - (१) मुकुट, (२) छत्र, (३) चामर, (४) तलवार, (५) पादुका-जूते ।

दश त्रिक

तीन पदार्थों की जोड़ को त्रिक कहते हैं। ये त्रिक दस प्रकार से हैं - (१) निस्सिहि, (२) प्रदक्षिणा, (३) प्रणाम, (४) पूजा, (५) अवस्था, (६) दिशात्याग, (७) प्रमार्जना, (८) आलंबन, (९) मुद्रा और (१०) प्रणिधानत्रिक ।

निस्सिही त्रिक - मन्दिर में प्रवेश करते समय प्रथम दाहिना पाँव रखते हुए दर्शन-पूजन आदि में चित्त की एकाग्रता के लिए (१) समस्त संसारी व्यापारों के निषेध रूप प्रथम निस्सिही, (२) गर्भद्वार में प्रवेश करते समय द्रव्यपूजा में एकचित्त बनने के लिए मन्दिर सम्बन्धी कार्यों के निषेध स्वरूप दूसरी निस्सिही और (३) चैत्यवंदनादि रूप भावपूजा में तल्लीन बनने के लिए द्रव्य-पूजा के त्याग रूप तीसरी निस्सिही का विधान है।

प्रदक्षिणा त्रिक - तीन प्रदक्षिणाएँ दर्शन-ज्ञान-चारित्र की आराधना के लिए, अनादि चार गति रूप संसार-भ्रमण निवारण हेतु तथा मन्दिर में आशातनादि टालने के लिए निरीक्षण हेतु लगानी है।

प्रणाम त्रिक - (१) मूलनायक भगवान के दर्शन होते ही सिर पर अञ्जलि रचते हुए 'नमो जिनाणं' बोले, इसे अञ्जलिबद्ध प्रणाम कहते हैं । (२) प्रदक्षिणा लगाने के बाद प्रभुसम्मुख स्तुति बोलते समय कमर से ऊपर के आधे भाग को झुकाना अर्धावनत प्रणाम है। (३) खमासमणा देते समय दो हाथ, दो घुटने और मस्तक इन पाँचों अंगों को भूमि पर एकत्रित करने को पंचांग प्रणिपात नाम का प्रणाम कहा जाता है ।

पूजा त्रिक - (१) जल, चन्दन, पुष्प, आभूषण आदि जो प्रभुजी के अंग पर चढ़ाया जावे उसे अंगपूजा कहते हैं । फल की अपेक्षा इसे विघ्ननाशिनी कहा है। (२) धूप, दीप, अक्षत, नैवेद्य, फल आदि प्रभुजी के सम्मुख रखे जाएँ, वह अग्रपूजा कहलाती है। फलतः इसे अभ्युदय-साधनी कहते हैं। (३) नृत्य, गीत, संगीत, चैत्यवंदन प्रमुख करना भावपूजा है। इसका फल मोक्ष-प्राप्ति है ।

अवस्था त्रिक - (१) पिण्डस्थ - जन्माभिषेक के समय चौंसठ इन्द्रों द्वारा अनुपम भक्ति, फिर भी प्रभु को अभिमान का लेश नहीं । राज्यावस्थामें राज्य-सुख के भोगकाल में तनिक भी आसक्ति नहीं । दीक्षा-स्वीकार के बाद श्रमणावस्था में परीषह और उपसर्ग आने पर भी निश्चलता रखना एवं घोर तप का करना । हे प्रभो ! ऐसी अवस्था मैं कब

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पाऊंगा ?

(२) पदस्थ अवस्था - कैवल्यज्ञान प्रकट कर समवसरण में विराज कर, शासन-स्थापना कर हे प्रभो ! आपने धर्मोपदेश से समस्त विश्व पर महान् उपकार किया । आपकी ही कृपा ने मुझे भी इस भूमिका तक पहुँचाया है। हे कृपालो ! अब मेरे प्रति आपकी उदासीनता ठीक नहीं ।

(३) रूपातीत अवस्था - जन्म, जरा, मृत्यु, रोग, शोक से रहित और अनन्तज्ञान और आनन्दमय अरूपी सिद्धावस्था को हे प्रभो ! आप पा चुके हो । इस अवस्था को मैं कब पाऊंगा ? इत्यादि चिन्तन करना ।

दिशात्याग त्रिक - दर्शन, पूजन और वन्दन करते समय प्रभुजी के सम्मुख दृष्टि रखना, आसपास की दो दिशाएँ एवं पिछली तीसरी दिशा अथवा आसपास की एक दिशा और ऊपर-नीचे की दो दिशाएँ कुल तीन दिशाओं में न देखना ।

प्रमार्जना त्रिक - चैत्यवन्दन करने की भूमिका जीवरक्षा हेतु ओघे, चरवले, दुपट्टे आदि के दशीवाले छोर से तीन बार प्रमार्जन करना ।

आलंबन त्रिक - सूत्र, अर्थ और प्रभु-प्रतिमा ये तीन आलंबन हैं। दृष्टि प्रतिमासम्मुख, वचन से सूत्रों का शुद्ध उच्चारण और मन से सूत्रों का अर्थ चिन्तन करना ।

मुद्रा त्रिक - (१) **योगमुद्रा** - बैठते समय दाहिने पाँव को नीचे रखें, बायें पैर को ऊपर उठावें, एवं दस उंगलियों को परस्पर शामिल कर, कमलकोश के आकार में दोनों हाथों को रखें, दोनों हाथों की कुहनी पेट पर रखे और मस्तक को थोड़ा झुका देवे। शरीर की इस स्थिति को योगमुद्रा कहा है। इसी मुद्रा में चैत्यवंदन, नमुत्थुणं आदि सूत्र पाठ बोले जाते हैं । (२) **जिनमुद्रा**-खड़े रहते समय दोनों पाँवों के बीच आगे की तरफ चार अंगुल और पीछे के भाग में दोनों एड़ियों के बीच कुछ कम फासला रख कर दोनों हाथों को लम्बा कर देना। कायोत्सर्ग ध्यान इस मुद्रा में करें। (३) **मुक्तासुक्तिमुद्रा**-दस उंगलियों को आमने-सामने रखकर मोती की छीप की आकृति में दोनों हाथों को जोड़कर ललाट पर लगाना । इसी मुद्रा में ''जावंति चेइआइं'' ''जावंत के वि साहू'' और ''जय वीयराय'' सूत्र बोले जाते हैं ।

प्रणिधान त्रिक - मन, वचन और काया इन तीनों का प्रणिधान अर्थात् एकाग्रता रखना ।

इस प्रकार दस त्रिकों का संक्षेप में वर्णन किया है। इनके अतिरिक्त भी सावधानी की कुछ बातें बताई जाती हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मन्दिर में बरतने की अन्य सावधानियाँ

(१) सामायिक पौषध के सिवाय खाली हाथ प्रभु-दर्शन आदि के लिए जाना उचित नहीं है। फल से फल की प्राप्ति होती है। कम से कम, अक्षत एवं घी अवश्य लेकर जायें।

(२) मन्दिर में दर्शन-पूजन-वन्दन आदि करते समय पुरुष वर्ग प्रभुजी की दाहिनी तरफ एवं स्त्री वर्ग बायीं तरफ रहे । ठीक सामने खड़े रहने से भी दूसरों को दर्शन आदि में अन्तराय होता है ।

(३) चैत्यवन्दन, स्तुति आदि मधुर एवं मन्द स्वर से बोलें ताकि दूसरों को साधना में विक्षेप न पड़े ।

(४) चैत्यवन्दन आदि प्रभुजी से कुछ दूर बैठकर करना चाहिए । इस दूरी को अवग्रह कहते हैं। इसका जधन्य प्रमाण नौ हाथ और उत्कृष्ट साठ हाथ जानें । घर-मन्दिर में स्थल के अभाव से जधन्य एक हाथ का रखें ।

(५) मन्दिर में प्रभुजी को अपनी पीठ न हो, इसका पक्का ख्याल रखें ।

(६) मन्दिर में विलास, हास्य, कलह, विकथा वगैरह आशातनाओं से बचें । छोटी-बड़ी कुल ८४ आशातनाएँ हैं । इन में से नीचे की दस बड़ी आशातनाएँ भयंकर हैं । इनसे अवश्य बचें ।

दस बड़ी आशातनाएँ

मन्दिर में (१) पान-सुपारी खाना, (२) भोजन करना, (३) पानी पीना, (४) थूकना, (५) मल और (६) मूत्र करना, (७) निद्रा करना, (८) स्त्री-सम्भोग करना, (९) जुगार खेलना और (१०) जूते ले जाना, ये दस बड़ी आशातनाएँ हैं ।

(७) दर्शन, पूजन, वन्दनादि के अन्त में अविधि आशातना के लिए क्षमायाचना रूप 'मिच्छामि दुक्कडं' अवश्य ही बोलें ।

(८) देवद्रव्य, ज्ञानद्रव्य और साधारण द्रव्य के रक्षण एवं वृद्धि का ध्यान रखें ।

गुरुवन्दन

मन्दिर से लौटकर श्रावक उपाश्रय मे दृढ़ पंचाचार के पालक गुरु भगवन्तों को वन्दन करें । आत्मसाक्षी तथा मन्दिर में किये हुए पच्चक्खाण का फिर से गुरु भगवन्त के पास करें । सुख-शाता पूछें और औषधादि के लिए विनती करें एवं गुरु महाराजा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संबंधी ''पाँव पर पाँव चढ़ाना, पाँव पसारना'' इत्यादि ३३ आशातनाओं का वर्जन करते हुए उपस्थित श्रोताओं को भी नमन कर बैठे और धर्मदेशना सुनें ।

गुरुवंदन और धर्मश्रवण से लाभ

गुरुवंदन से - (१) विनय गुण की प्राप्ति, (२) अहंकार का नाश, (३) गुरु-पूजा, (४) प्रभु-आज्ञा का पालन, (५) श्रुतधर्म की उपासना और (६) मोक्ष की प्राप्ति होती है।

धर्मदेशना सुनने से - (१) कर्त्तव्यों का भान, (२) पालन में उत्कर्ष की प्राप्ति, (३) दुर्बुद्धि का त्याग, (४) वैराग्य की प्राप्ति, (५) तुच्छ भोगसुख का त्याग, (६) अहिंसा, सत्य और तप से काम-क्रोधादि का समूल नाश और (७) सदा के लिए मुक्ति की प्राप्ति होती है ।

इस प्रकार धर्मदेशना सुनने के बाद साध्वीजी को भी अवश्य सुख-शाता पूछें । तत्पश्चात् सुपात्रदान कर विधिपूर्वक भोजन करें ।

भोजन-विधि

साधु भगवन्तों को विधिपूर्वक बहोरावें एवं साधर्मिक भाई को आमन्त्रण देकर साथ बैठकर सकुटुम्ब भोजन करें । भोजन में भक्ष्याभक्ष्य का विवेक रखें तथा अत्यंन्त आसक्ति का त्याग करें । भोजन करते समय मौन रखें । कहा भी है - 'भोजन, मैथुन, स्नान, वमन, दातुन और मल-मूत्र के अवसर पर मौन रखें।' भोजन के समय द्वार पर आये हुए दीन याचकों की उपेक्षा न करें, किन्तु यथायोग्य दान देवें। भोजन में ज्यादा समय न लगावें । विवेकी को चलते-फिरते पान-सुपारी भी नहीं खानी चाहिए ।

थकान, रोग, ग्रीष्म ऋतु आदि विशिष्ट कारण के बिना भोजन के बाद दिन में न सोवें । दिन में सोने से व्याधि की सम्भावना रहती है।

भोजन करने के पश्चात् अपने-अपने योग्य स्थानों में धर्म को बाधा न पहुँचे इस तरह धन कमाने जावें । धन कमाने में औचित्यपालन के साथ-साथ नीचे की बातों का खास ख्याल रखें, जिससे सफलता एवं उज्ज्वल यश की प्राप्ति हो सके ।

धन कमाने में सावधानियाँ

(१) उधार न देवें । देना ही पड़े तो साधर्मिक और सत्यवादी से व्यवहार रखे । (२) धन-समृद्धि में गर्व न करें । किसी से टंटा-फिसाद न करें । धन-हानि में दीन न बनें । किन्तु धर्म करणी ज्यादा करें । एवं किसी भाग्यशाली का साथ-सहयोग प्राप्त करें । (३) लेने की रकम लम्बे समय तक न खीचें किन्तु धर्मादा कर दें । वसूली में कठोरता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का त्याग करें । शान्ति से ही व्यवसायियों की अर्थसिद्धि होती है। (४) विवाद में मध्यस्तों को मान्य रखें। (५) न्याय-नीति ही धन कमाने की कुञ्जी है। न्याय से लाभान्तराय कर्म का क्षय होता है । अतः भविष्य में अवश्य धनलाभ होता है । (६) घर के बड़े और राज्याधिकारी को छोड़कर गोपनीयता को दूसरों के आगे खुली न करें और न ही झूठ बोलें । (७) विषम स्थिति में सहायक हो सके ऐसा मित्र रखें । मुख की मधुरता तो दुर्जनों के साथ भी रखें । (८) प्रीति के स्थान में लेन-देन के सम्बन्ध न रखें । (९) अमानत रखते और सौंपते समय साक्षी रखें । (१०) लेन-देन का ब्यौरा लिखने में आलस न करें। (११) किसी समर्थ नायक को आगे रखें । (१२) देव-गुरु-धर्म वगैरह की शपथ न लें एवं जमानत की झंझट में न पड़े। (१३) वाणिज्य निवासस्थान में करें । कभी परदेश में करना पड़े तो सावधानी रखे। (१४) क्रय-विक्रय के प्रारम्भ में परमेष्ठी वगैरह का स्मरण करें । (१५) धनोपार्जन की भूमिका रूप शुभ में व्यय के मनोरथ करें । शुभ में व्यय लक्ष्मी का वशीकरण मंत्र है। (१६) आयोचित व्यय रखें जो कि न्याय-नीति का मूल है। (१७) धन की अनन्त इच्छा को स्थूल परिग्रह विरमण व्रत के स्वीकार से सीमित करें।

परदेश-व्यवसाय में रखने की सावधानी

(१) शुभमुहूर्त में अच्छे शकुन-निमित्त लेकर, इष्ट देवता एवं घर के बड़ों को नमस्कार कर और गुरुभगवन्तों के श्रीमुख से मांगलिक सुनकर भाग्यशालियों के साथ परदेश जाना चाहिए। परदेश में भी अपनी जाति वालों के साथ रहें और व्यवसाय करें। (२) उचित आडम्बर और धर्म-निष्ठा को न छोड़े। (३) सदैव यथाशक्ति दान वगैरह से लक्ष्मी को सार्थक करें। अवसर पर पुण्य के बड़े कार्य भी करें।

गुरु भगवंत के पास ज्ञानाभ्यास

शाम को काम-धन्धे से लोटकर उपाश्रय में आकर सामायिक लेकर गुरु भगवन्त के पास ज्ञानाभ्यास करें । नित्य नूतन ज्ञानोपार्जन करें। ज्ञान से असीम आनन्द का अनुभव होता हैं ।

उपाश्रय से घर आकर एकाशनादि न हो तो शाम के भोजन से निवृत्त होकर सीमित जल से हाथ, पाँव और मुख की शुद्धि करें । पश्चात् मंगल दीपक, आरती आदि से श्री जिनेश्वर की पूजा करें तथा प्रतिक्रमण करें । इस प्रकार से दैनिक कर्त्तव्यों का पालन करने वाली आत्मा अवश्य शाश्वत सुख की भोक्ता बनती है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन प्रश्नोत्तरं

अनुक्रमणिका

विषय ..... प्रश्नोत्तर-अंक

जिन अरु जिन शासन १-२
तीर्थंकर ३-४
महाविदेह आदि क्षेत्रोमें मनुष्योंकों जानेकें
लिये हरकतो ५
भारतवर्ष ६
भारतवर्षमें तीर्थंकरों ७-८
प्रस्तुत चोवीसीके तीर्थंकरोका मातापिता
ऋषभदेवसें पहिलें भारतवर्ष में धर्मका
अभाव १०
ऋषभदेवने चलाया हुवा धर्म अद्यापि
चला आता है, तिस विषयक ब्यान ११
..... १२-१३-१४-२१-२२
..... २३-२४-२५-२६-२७
..... २८-२९-३०-३१-३२
..... ३३-३५-३६-३७-४२
महावीरचरित ४३-४४-४५-४६-४७
..... ४८-४९-५०-५१-५२
..... ५३-५४-५५-५७-५८
..... ५९-८३-८४-८५-८६
..... ८७-८८-८९-९२-९३
..... १३४-१३६-१३७-१३८
ज्ञातिवगेरा मदका फल १५-१९
जैनीयोएं अपने स्वधर्मिकों भ्राता सदृश
जाननां १६-१७
जैनीयोमें ज्ञाति १८-२०
परोपकार ३४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञान ३९-४०-४१
अछेरा ५६
मुनियों का धर्म ६६
श्रावकों का धर्म ६७
मुनियों का-अरु श्रावकों का कीस लीये
धर्म पालनां, तिस विषयक ब्यान ६८
महावीर स्वामीने दिखलाये हुए
धर्म विषयक पुस्तक ६९-७०-७१-७२-७३
जैनमत के आगम (सिद्धांत) ७४
देवर्द्धि गणिक्षमाश्रमणके पहिले जैन
मत के पुस्तक ७५
महावीर स्वामीके समयमें जैनीराजें ७६-७७
त्रेविशमें तीर्थंकर पार्श्वनाथ अरु तिनकी
पद परंपरा ७९-८०
जैन बौद्धमें से नही किंतु अलग चला आता है ८१
बुद्धकी उत्पत्ति ८२
आयुष बढता नही है ९०-९१
उत्तराध्ययन सूत्र ९४
निर्वाण शब्दका अर्थ ९५
आत्माका निर्वाण कब होता है अरु पिछें
तिसकों कोन कहां ले जाता है ९६-९७-९८-९९
अभव्य जीवका निर्वाण नही अरु
मोक्षमार्ग बंध नहीं १००-१०१-१०२
आत्मा का अमरपणां अरु तिसका
कर्त्ता ईश्वर नही. १०३-१०४-१०५-१०६
जीवकों पुनर्जन्म क्यों होता है अरु तिसके
बंध होने में क्या इलाज है १०७-१०८
आत्मा का कल्याण तीर्थंकर भगवान से
होने विषयक ब्यान १०९-११०
जिन पूजा का फल किस रीतिसें होता है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिस विषयक समाधान १११
पुण्य पाप का फल देनेवाला
ईश्वर नहीं किंतु कर्म ११२-११३-११४-११५-११६-११७-११८
जगत अकृत्रिमहै ११९
जिन प्रतिमाकी पूजा विषयक ब्यान १२०-१२१-१२२-१२३
देव अरु देवोंका भेद सम्यक्त्वी देवताकी
साधु श्रावक भक्ति करे, शुभाशुभ कर्मके
उदय में देवता निमित्त है.....१२४-१२५-१२६-१२७
संप्रतिराजा अरु तिसके कार्य १२८-१२९
लब्धि अरु शक्ति १३०-१३१-१३२-१३३-१३५
ईश्वर की मूर्त्ति १३९
बुद्ध की मूर्त्ति अरु बुद्ध सर्वज्ञ नही था
तिस विषयक ब्यान १४०-१४१-१४२
जैनमत ब्राह्मणो के मतसे नही किंतु
स्वतः अरु पृथक् है १४३
जैनमत अरु बुद्धमत के पुस्तकों का मुकाबला १४४-१४५
जैनमतके पुस्तकों का संचय १४६-१४७
जैन आगम विषयक जैनीयोंकी बेदरकारी
अरु इसी लीये उनोंको ओलंभा १४८-१४९-१५०
जैनमंदिर अरु स्वधर्मिवत्सल करने की रीति १५१
जैनमतका नियम सख्त अरु इसी लीये
तिसके पसारे में संकोच १५२
चौदपूर्व १५३
अन्य मतावलंबियोने जैनमतकी कीई हुई नकल
जैनमत मुजिब जगतकी व्यवस्था अष्ट कर्मका
ब्यान अरु तिसकी १४० प्रकृतियोंका स्वरूप १५४
महावीर स्वामिसें लेकर देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण
तलक आचार्योकी बुद्धि अरु दिगंबर श्वेतांबरसें
पिछें हुवा तिसका प्रमाण. १५५
देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण ने महावीर भगवानकी पदपरंपरासे चला आता ज्ञानको

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुस्तकोपर आरूढ कीया तिस विषयक ब्यान मथुरांके प्राचीन लेख दिगंबर, लूंपक, ढुंढक अरु तेरापंथी मतवालोंकों सत्यधर्म अंगीकार करने की विज्ञप्ति. १५६-१५७
जनमत मुजब योजनका प्रमाण १५८
गुरुके भेद तिनोकी उपमा अरु स्वरुप धर्मोपदेश किस पासें सुननां अरु किस पासें न सुननां १५९
जगतके धर्मका रूप अरु भेद १६०
जैनधर्मी राजोंकों राज्य चलाने में विरोध नही आता है, तिस विषयक ब्यान १६१
कुमारपाल राजाका बारांव्रत अरु तिसने वो किस रीतिसें पाले थे १६२
हिंदुस्तान के पंथो. १६३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री अर्हं नमः ।।

श्री जैन धर्म विषयिक प्रश्नोत्तर

प्र.१. जिन ओर जिनशासन इन दोनो शब्दोंका अर्थ क्यो है ।

उत्तर : जो राग द्वेष क्रोध मान माया लोन काम अज्ञान रति अरति शोक हास्य जुगुप्सा अर्थात् घ्रिणामिथ्यात्व इत्यादि भाव शत्रुयोंकों जीते तिसकों जिन कहते है यह जिन शब्दका अर्थ है अैसे पूर्वोक्त जिनकी जो शिक्षा अर्थात् उत्सर्गापवाद रुप मार्ग द्वारा हितकी प्राप्ति अहित का परिहार अंगीकार ओर त्याग करना तिसका नाम जिनशासन कहते है । तात्पर्य यह है कि जिनके कहे प्रमाण चलना यह जिनशासन शब्द का अर्थ है ? अनिध्यान चिंतामणि और अनुयोगद्वार वृत्यादिमे है ।

प्र.२- जिनशासनका सार क्या है ।

उत्तरः जिनशासन और द्वादशांग यह एकहीके दो नाम है इस वास्ते द्वादशांगका सार आचारंग है और आचारंगका सार तिसके अर्थका यथार्थ जानना तिस जानने का सार तिस अर्थका यथार्थ परकों उपदेश करना तिस उपदेशका सार यहकि चारित्र अंगीकार करना अर्थात् प्राणिवध १ मृषावाद २ अदत्तादान ३ मैथुन ४ परिग्रह ५ रात्रिभोजन ६ इनका त्याग करना इसकों चारित्र कहते है अथवा चरणसत्तरीके ७० सत्तर भेद और करण सत्तरिके ७० सत्तर भेद ये एकसौ चालीस १४० भेद मूलगुण उत्तरगुण रूप अंगीकार करे तिसकों चारित्र कहते है तिस चारित्र का सार निर्वाण है अर्थात् सर्व कर्म जन्य उपाधि रूप अग्निसें रहित शीतली भूत होना तिसका नाम निर्वाणका कहते है तिस निर्वाणका सार अव्याबाध अर्थात् शारीरिक और मानसिक पीडा रहित सदा सिद्ध मुक्त स्वरूप मे रहना यह पूर्वोक्त सर्व जिनशासनका सार है यह कथन श्री आचारंग की निर्युक्ति मे है ।

प्र.३. तीर्थंकर कौन होते है और किस जगें होते है और किस काल में होते है ।

उ. जे जीव तीर्थंकर होने के भवसें तीसरे भवमें पहिलें वीस स्थानक अर्थात् वीस धर्म के कृत्य करे तिन कृत्यों से बना नारी तीर्थंकर नाम कर्म रूप पुन्य निकाचित उपार्जन करे तब तहासें काल करके प्रायें स्वर्ग देवलोकमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्पन्न होते है तहांसें काल कर मनुष्य क्षेत्रमें बहुत भारी रिद्धि परिवारवाले उत्तम शुद्ध राज्य कुलमें उत्पन्न होते है जेकर पूर्व जन्ममे निकाचित पुन्यसें योग्य कर्म उपार्जन करा होवे तबतो तिस योग्य कर्मानुसार राज्य भोगविलास मनोहर भोगते है नही भोग्यकर्म उपार्जन करा होवे तब राज्यभोग नही करते है इन तीर्थंकर होनेवाले जीवांकों माताके गर्भमेंही तीन ज्ञान अर्थात् मति श्रुति अवधी अवश्यमेव ही होते है दीक्षाका समय तीर्थंकर के जीव अपने ज्ञान से ही जान लेते है जेकर माता पिता विद्यमान होवें तबतो निकरी आज्ञा लेके जेकर माता पिता विद्यमान नही होवे तब अपने भाइ आदि कुटुंबकी आज्ञा लेके दीक्षा लेने के एक वर्ष पहिले लोकांतिक देवते आकर कहते है हे भगवान् धर्म तीर्थ प्रवर्त्तावो तद पीछे एक वर्ष पर्यंत तीनसौ कोटि अठयास्सी करोड असी लाख इतनी सोने मोहरें दान देके बडि महोत्सव से दीक्षा स्वयमेव लेते है किसीको गुरु नही करते है क्योंकि वेतो आपही त्रैलोक्य के गुरु होनेवाले है और ज्ञानवंत है तद पीछे सर्व पापके त्यागी होके महा अद्भुत तप करके घाती कर्म चार क्षय करके केवली होते है तद पीछे संसार तारक उपदेश देकर धर्म तीर्थके करनेवाले ऐसे पुरुष तीर्थंकर होते है उपर कहे हुए वीस धर्म कृत्योंका स्वरुप संक्षेपसे नीचे लिखते है । अरिहंत १ सिद्ध २ प्रवचन संघ ३ गुरु आचार्य ४ स्थविर ५ बहुश्रुत ६ तपस्वी ७ इन सातों पदोका वात्सल्य अनुराग करने से इन सातों के यथावस्थित गुण उत्कीर्तन अनुरुप उपचार करने से तीर्थंकर नाम कर्म जीव बांधता है इन पूर्वोक्त सातों अर्हंतादि पदोंका अपने ज्ञान में वार वार निरंतर स्वरूप चिंतन करे तो तीर्थंकर नाम कर्म बांधे ८ दर्शन सम्यक्त्व ९ विनय ज्ञानादि विषये १० इन दोनोकों निरतिचार पालेतो तीर्थंकर नाम कर्म बांधे. जो जो संयमके अवश्य करने योग्य व्यापार है तिसकों अवस्यक कहते है तिसमें अतिचार न लगावे तो तीर्थंकर नाम कर्म बांधे ११ मूलगुण पांच महाव्रतमें और उत्तरगुण पिंडविशुद्धयादिक ये दोनो निरतिचार पाले तो तीर्थंकर नाम कर्म बांधे १२ क्षण लव मूहुर्त्तादि कालमें संवेग भावना शुभ ध्यान करनेसे तीर्थंकर नाम कर्म बांधता है १३ उपवासादि तप करने से यति साधु जनकों उचित दान देने से तीर्थंकर नाम कर्म बांधे है १४ दश प्रकार की वैयावृत्य करने से तो १५ गुरुआदिकांकों तिनके कार्य करणे गुरु आदिकोंके चित्त स्वास्थ रुप सामाधि उपजावनसे ती० १६ अपूर्वअर्थात् नवा नवा ज्ञान पढने से ती० १७ श्रुत भक्ति युक्त प्रवचन विषये प्रभावना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करने से ती० १९ शास्त्रका बहुमान करने से ती० १९ यथाशक्ति अर्ह उपदिष्ट मार्गकी देशनादि करके शासनकी प्रभावना करे तो तीर्थंकर नाम कर्म बांधे है २० कोई जीव इन वीसों कृत्यों मे चाहो कोइ एक कृत्यसें तीर्थंकर नाम कर्म बांधे है. कोइ दो कृत्यों से कोइ तीनसे एवं यावत् कोइ एक जीव वीस कृत्यों से बांधे है यह उपरका कथन ज्ञाताधर्मकथा १ कल्पसूत्र २ आवश्यकादि शास्त्रों मे है और तीर्थंकर पांच महाविदेह पांच भरत पांच ऐरावत इन पंदरां क्षेत्रोमें उत्पन्न होते है और इस भरत खंडमे आर्य देश साढे पच्चीसमे उत्पन्न होते है वे देश २५।। साढे पचवीस ऐसे है ।। उत्तर तर्फ हिमालय पर्वत और दक्षिण तर्फ विध्याचल पर्वत और पूर्व पश्चिम समुद्रांत तक इसकों आर्यावर्त्त कहते है इसके बीचही साढे पंचवीश देश है तिनमें तीर्थंकर उत्पन्न होते है यह कथन अभिध्यान चिंतामणि तथा पन्नवणा आदि शास्त्रों मे है अवसर्पिणी कालके अर्थात् छ हिस्से है तिनमे तीसरे चौथे विभागमे तीर्थंकर उत्पन्न होते है और उत्सर्पिणी कालके छ विभागो में से तीसरे चोथे विभाग मे उत्पन्न होते है यह कथन जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति आदि शास्त्रों मे है ।

प्र.४. तीर्थंकर क्या करते है और तीर्थंकरो के गुणा का बरनन् करो.

उत्तर. तीर्थंकर भगवंत बदले के उपकार की इच्छा रहित राजा रंक ब्राह्मण और चंडाल प्रमुख सर्व जाति के योग्य पुरुषांकों एकांत हितकारक संसार समुद्रकी तारक धर्म देशना करते है और तीर्थंकर भगवंत के गुणतो इंद्रादिभी सर्व बरनन् नही करसक्ते है तो फेर मेरे अल्प बुद्धीवालेकी तो क्या शक्ति है तोभी संक्षेपसे भव्य जीवांके जानने वास्ते थोडासा बरनन् करते है अनंत केवलज्ञान १ अनंत केवलदर्शन २ अनंत चारित्र ३ अनंत तप ४ अनंत वीर्य ५ अनंत पांच लब्धि ६ क्षमा ७ निर्लोभता ८ सरलता ९ निरभिमानता १० लाघवता ११ सत्य १२ संयम १३ निरच्छिकता १४ ब्रह्मचर्य १५ दया १६ परोपकारता १७ राग-द्वेषरहित १८ शत्रु मित्रभावरहित १९ कनक पथर इन दोनो ऊपर समभाव २० स्त्री और तृण उपर समभाव २१ मांसाहाररहित २२ मदिरापानरहित २३ अभक्ष्य भक्षणरहित २४ अगम्य गमनरहित २५ करुणासमुद्र २६ सूर २७ वीर २८ धीर २९ अक्षोभ्य ३० परनिंदा रहित ३१ अपनी स्तुति न करे ३२ जो कोइ तिनके साथ विरोध करे तिसकोंभी तारनेकी इच्छावाले ३३ इत्यादि अनंत गुण तीर्थंकर भगवंतो मे है सो कोइनी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शक्तिमान् नही है जो सर्व गुण कह सके और लिख सके.

प्र.५ जैन मतमें जे क्षेत्र माहविदेहादिक है तहां इहांका कोइ मनुष्य जा सक्ता है कि नही.

उ. नही जा सक्ता है क्योंकी रस्तेमें बर्फ पाणी जम गया है और बडे बडे उंचे पर्वत रस्ते मे है बडी बडी नदीयों और घना जंगल रस्ते मे है अन्य बहुत विघ्न है इस वास्ते नही जा सक्ता है ।

प्र.६. भरत क्षेत्र कौनसा है और कितना लांबा चोडा है ।

उ. जिसमे हम रहते है यही भरतखंड है इसकी चौडाइ दक्षिणसे उत्तर तक ५२६० किंचित अधिक उत्सेद्धांगुलके हिसाबसे कोस होते है और वैताढ्य पर्वतके पास लंबाइ कुबक अधिक ९०००० नवे हजार उत्सेद्धांगुलके हिसाबसे कोस होते है चीन रूसादि देश सर्व जैन मतवाले भरतखंडके बीचही मानते है यह कथन अनुयोगद्वारकी चुर्णि तथा अंगुल सत्तरी ग्रंथानुसारे है कितने क आचार्य भरतखंडका प्रमाण अन्यतरेंकें योजनों से मानते है परं अनुयोगद्वारकी चूर्णि कर्त्ता श्री जिनदासगणि क्षमाश्रमणजी तिनके मतकों सिद्धांतका मत नही कहते है ।

प्र.७. भरत क्षेत्रमे आज के कालसें पहिला कितने तीर्थंकर हुए है ।

उ. इस अवसर्पिणी काल में आज पहिलां चौवीस तीर्थंकर हुए है जेकर समुच्चय अतीत कालका प्रश्न पूछते हो तब तो अनंत तीर्थंकर उस भरत खंडमे हो गए है ।

प्र.८. इस अवसर्पिणि काल मे इस भरतखंडमें चोवीस तीर्थंकर हुए है तिनके नाम कहो ।

उ. प्रथम श्री ऋषभदेव १ श्री अजीतनाथ २ श्री संभवनाथ ३ श्री अभिनंदननाथ ४ श्री सुमतिस्वामी ५ श्री पद्मप्रभ ६ श्री सुपार्श्वनाथ ७ श्री चंद्रप्रभ ८ श्री सुविधिनाथ पुष्पदंत ९ श्री शीतलनाथ १० श्री श्रेयांसनाथ ११ श्री वासुपूज्य १२ श्री विमलनाथ १३ श्री अनंतनाथ १४ श्री धर्मनाथ १५ श्री शांतिनाथ १६ श्री कुंथुनाथ १७ श्री अरनाथ १८ श्री मल्लिनाथ १९ श्री मुनिसुव्रतस्वामी २० श्री नमिनाथ २१ श्री अरिष्टनेमि २२ श्री पार्श्वनाथ २३ श्री वर्द्धमानस्वामी महावीरजी २४ ये नाम है.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र ९. इन चौवीस तीर्थंकरोंके माता पिता के नाम क्या क्या थे.

उ. नाभि कुलकर पिता श्री मरुदेवी माता १ जितशत्रु पिता विजयामाता २ जितारि पिता सेना माता ३ संबर पिता सिद्धार्था माता ४ मेघ पिता मंगला माता ५ धर पिता सुसीमा माता ६ प्रतिष्ठ पिता पृथ्वी माता ७ महसेन पिता लक्ष्मण माता ९ सुग्रीव पिता रामा माता ९ दृढरथ पिता नंदामाता १० विश्नु पिता विश्नुश्री माता ११ वसुपूज्य पिता जया माता १२ कृतवर्म्मा पिता श्यामा माता १३ सिंहसेन पिता सुयशा माता १४ भानु पिता सुव्रता माता १५ विश्वसेन पिता अचिरा माता १६ सूर पिता श्री माता १७ सुदर्शन पिता देवी माता १९ कुंभ पिता प्रभावति माता १९ सुमित्र पिता पदमावति माता २० विजयसेन पिता वप्रा माता २१ समुद्रविजय पिता शिवा माता २२ अश्वसेन पिता वामा माता २३ सिद्धार्थ पिता त्रिशला माता २४ ये चौवीस तीर्थंकरोके क्रमसें माता पिताके नाम जान लेने चौवीसही तीर्थंकरोके पिता राजेथे. वीसमा २० और बावीसमा ये दोनो हरिवंश कुलमे उत्पन्न हुए थे और गौतम गोत्रीथे शेष २२ बावीस तीर्थंकर ईक्षाकुवंश मे उत्पन्न हुए थे और काश्यप गोत्रीथे.

प्र. १० श्री ऋषभदेवजी सें पहिलां इस भरत खंडमे जैन धर्मथा के नही.

उ. श्री ऋषभदेवजीसे पहिलां इस अवसर्पिणि कालमे इस भरत खंडमे जैनधर्मादि कोई मतकाभी धर्म नहीथा इस कथन में जैन शास्त्र ही प्रमाण है ।

प्र.११. जैसा धर्म श्री ऋषभदेवस्वामीने चलायाथा तैसाही आज पर्यंत चलाता है वा कुछ फेरफार तिसमें हुआ है.

उ. श्री ऋषभदेवजीनें जैसा धर्म चलायाथा तैसा ही श्री महावीर भगवंते धर्म चलाया इसमें किंचितमात्र भी फरक नही है सोइ धर्म आज काल जैन मतमें चलता है ।

प्र.१२. श्री महावीरस्वामी किस जगें जन्मेथे और तिनके जन्म हुआंकों आज पर्यंत १८४५ संवत तक कितने वर्ष हुए है ।

प्र. श्री महावीरस्वामी क्षत्रियकुंडग्राम नगर में उत्पन्न हुए थे और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आज संवत १८४५ तक २४९७ वर्षके लगभग हुए है विक्रम सें ५४२ वर्ष पहिले चैत्र शुदि १३ मंगलवारकी रात्रि और उत्तराफाल्गुनि नक्षत्रके प्रथम पादमें जन्म हुआ था ।

प्र.१३. क्षत्रियकुंड ग्रामनगर किस जगें था ।

उ. पूर्व देश में सूबे विहार अर्थात् बहार तिसके पास कुंडलपुरके निजदीक अर्थात् पास ही था ।

प्र.१४. महावीर भगवंत देवानंदा ब्राह्मणीकी कूखमें किस वास्ते उत्पन्न हुए.

उ. श्री महावीर भगवंतके जीवने मरीचीके भवमे अपने उंच गोत्र कुलका मद अर्थात् अभिमान करा था तिस्सें नीच गोत्र बांध्याथा सो नीच गोत्र कर्म बहुते भवों मे भोगना चडा तिसमें से थोडासा नीच गोत्र भोगना रह गया था तिसके प्रभावसे देवानंदाकी कूखमें उत्पन्न हुए पर नीच गोत्र भोगा.

प्र. १५ तो फिर जेकर हम लोक अपनी जात पर कुलका मद करे तो अच्छा फल होवेगा के नही, मद करना अच्छा है के नही.

उ. जेकर कोइभी जीव जातिका १ कुलका २ बलका ३ रूपका ४ तपका ५ ज्ञानका ६ लाभका ७ अपनी ठकुराइका ८ ये अत प्रकारका मद करेगा सो जीव घणे भवां तक ये पूर्वोक्त अपही वस्तु नीच तुब मिलेंगा इस वास्ते बुद्धिमान पुरुषकों पूर्वोक्त आठही वस्तुका मद करना यहा नही है.

प्र. १६ जितने मनुष्य जैन धर्म पालते होवे तिन सर्व मनुष्यों को अपने भाइ समान मानना चाहिए के नही. जेकर भाइ समान मानेतो तिनके साथ खाने पीनेकी कुछ अम चल है के नही.

उ. जितने मनुष्य जैन धर्म पालते होवे तिन सर्वके साथ अपने भाई करतांनी अधिक पियार करना चाहिए. यह कथन श्राद्ध दिनकृत्य ग्रंथ में है और तिनोकी जातीयां जेकर लोक व्यवहार अस्पश्य न होवें तदा तिनके साथ खाने पीनेकी जैन शास्त्रानुसार कुछ अडचल मालुम नही होती है क्योंकि जब श्री महावीरजीसें ७० वर्ष पीछे और श्री पार्श्वनाथजीके पीछे बडे पाट श्री रत्नप्रभ सूरिजीने जब मारवाडके श्रीमाल नगरसे जिस नगरीका नाम अब भिल्लमाल कहते है तिस नगरसे किसी कारण से भीमसेन राजेका पुत्र श्रीपुंज

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिसका पुत्र उत्पन्न कुमर तिसका मंत्री उहड ए दोनो जए १० हजार कुटुंब सहित निकलके योधपुर जिस जगेहै तिससें वी कोसके लगभग उत्तर दिशि मे लाखों आदमीयोकी वस्ती रूप उपकेश पट्टन नामक नगर वसाया, तिस नगर में सवालक्ष उपादमीयांकों रत्नप्रभ सूरिने श्रावक धर्ममे स्थाप्या तिस समय तिनके अठारह गोत्र स्थापन करे तिनके नाम तातहड गोत्र १ बापणा गोत्र २ कर्णाट गोत्र ३ वलहरा गोत्र ३ मोराक्ष गोत्र ५ कुलहट गोत्र ६ विरहट गोत्र ७ श्री श्रीमाल गोत्र ८ श्रेष्ठि गोत्र ९ सुचिंती गोत्र १० आइचणाग गोत्र ११ भूरि गोत्र भटेवरा १२ भाद्र गोत्र १३ चीचट गोत्र १४ कुंभट गोत्र १५ किंकु गोत्र १६ कनोज गोत्र १७ लघुश्रेष्ठी १८ येह अठारही जैनी होने से परस्पर पुत्र पुत्रीका विवाह करने लगे और परस्पर खाने पीने लगे इनमें सें कितने गोत्रांवाले रजपूतथे और कितने ब्राह्मण और बनियेभी थे इस वास्ते जेकर जैन शास्त्रसें यह काम विरुद्ध होता तो आचार्य महाराज श्री रत्नप्रभसूरिजी इन सर्वकों एकठे न करते इसी रीतीसें पीछे पोरवाड उंसवालादि वंश थापन करे गये है, अन्य कोइ अडचलतो नही है परंतु इस कालके वैश्य लोक अपने समान किसी दूसरी जातिवालेको नही समजते है यह अडचल है ।

प्र. १७. जैन धर्म नही पालता होय तिसके साथ तो खाने पीने आदिकका व्यवहार न करे परंतु जो जैन धर्म पालता होवे तिसके साथ उक्त व्यवहार होसके के नही.

उ. यह व्यवहार करना नाकरना तो बणिये लोकों के अधीन है और हमारा अभिप्रायतो हम उपरके प्रश्नोत्तरमें लिख आए है ।

प्र. १८. जैन धर्म पालने वालों में अलग अलग जाती देखने में आती है ये जैन शास्त्रानुसारे है के अन्यथा है और ए जातियों किस वखत मे हुइ है ।

उ. जैन धर्म पालने वाली जातियों शास्त्रानुसारे नही बनी है, परंतु किसी गाम, नगर पुरुष धंधेके अनुसारे प्रचलित हुइ मालम पडती है, श्रीमाल उसवालकातो संवत् उपर लिख आये है और पोरवाक वंश श्री हरिभद्रसूरिजीने मेवाड देशमे स्थापन करा और तिनका विक्रम संवत् स्वर्गवास होने का ५८५ का ग्रंथोमे लिखा है और जैपुरके पास खंकेला गाम है तहां वीरात् ६४३ मे वर्षे जिनसेन आचार्यने ८२ गाम रजपूतोकें और दो गाम सोनारोके एवं सर्व गाम ८४ जैनी करे तिनके चौरासी गोत्र स्थापन करे सो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सर्व खंडेलवाल बनिये जिनको जैपुरादिके देशों में सरावगी कहते है और संवत् विक्रम २१७ मे हंसारसें दश कोशके फासले पर अग्रोहा नामक नगरका उज्जड टेकरा बडा भारी है तिस अग्रोहे नगरमें विक्रम संवत २१७ के लगभग राजा अग्रके पुत्रांको और नगर वासी कितने ही हजार लोकांकों लोहाचार्यने जैनी करा, नगर उज्जड हुआ. पीछे राजभ्रष्ट होने से और व्यापार वणिज करने से अग्रवाल बनिये कहलाये इसी तरे इस कालकी जैनधर्म पालने वाली सर्व जातियां श्री महावीरसे ७० वर्ष पीछेसे लेके विक्रम संवत् १५७५ साल तक जैन जातियों आचार्योने बनाइ है तिनसें पहिलां चारोही वर्ण जैन धर्म पालतेथे इस समयेकी जातियों नहीथी इस प्रश्नोत्तर में जो लेख मैने लिखा है सो बहुत ग्रंथोमे मैने ऐसा लेख बांचा है परंतु मैने अपनी मन कल्पनासे नही लिखा है ।

प्र.१९. पूर्वोक्त जातीयोंमें से एक जाती वाले दूसरी जाति वालों सें अपनी जातिको उत्तम मानते है और जाति गर्व करते है तिनकों क्या फल होवेगा ।

उ. जो अपनी जातिकों उत्तम मानते है यह केवल अज्ञानसें रूढी चली हुइ मालम होती है क्योंके परस्पर विवाह पुत्र पुत्रीका करनां और एक नाणेंमें एकठे जीमणां और फेर अपने आपकों उंचा माननां यह अज्ञानता नहीतो दूसरी क्या है और जातिका गर्व करने वाले जन्मांतरमें नीच जाति पावेंगे यह फल होवेगा ।

प्र.२०. सर्व जैन धर्म पालन वालीयों वैश्य जातियां एकठी मिल जायें और जात न्यात नाम निकल जावे तो इस काममें जैन शास्त्रकी कुछ मनाइ है वा नही.

उ. जैन शास्त्रमेंतो जिस कामके करने सें धर्ममें दूषण लगे सो बातकी मनाइ है । शेष तो लोकोने अपनी अपनी रुढीयों मान रखी है । उपरसे प्रश्नोमें जब उसवाल बनाए थे तब अनेक जातियोकी एक जाति बनाइथी इस वास्ते अपनी कोइ समर्थ पुरुष सर्व जातियोंको एकठी करे तो क्या विरोध है ।

प्र.२१. देवानंदा ब्राह्मणीकी कूखथी त्रिशला क्षत्रियाणीकी कूखमें श्री महावीरस्वामीकों किसने और किसतरेंसें हरण किना ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उ. प्रथम देवलोक के इंद्रकी आज्ञासें तिसके सेवक हरिनगमेषी देवतानें संहरण कीना तिसका कारण यह है कि कदाचित् नीच गोत्रके प्रभावसें तीर्थंकर होने वाला जीव नीच कुलमें उत्पन्न होवे, परंतु तिस कुलमें जन्म नही होता है इस वास्तै अनादि लोक स्थीतीके नियमोसें इंद्र सेवक देवतासें यह काम करवाता है ।

प्र.२२. अपनी शक्तिसें महावीरस्वामी त्रिशलाकी कूखमें क्यों न गये.

उ. जन्म मरण गर्भमें उत्पन्न होनां यह सर्व कर्मके अधीन है । निकाचित् अवश्य भोगे विना जे न दूर होवे ऐसे कर्मके उदयमे किसीकीभी शक्ति नही चल सक्ति है और जो लोक इश्वरावतार देहधारीकों सर्वशक्तिमान् मानते है सो निकेवल अपने माने ईश्वर की महत्वता जनाने वास्ते जेकर पक्षपात छोडके विचारीये तो जो चाहेसो कर सके ऐसा कोइनी ब्रह्मा, शिव, हरि, क्रायस वगेरे मानुष्योमे नही हुआ है. इनोंके कर्तव्योकी इनका पुस्तकें वांचीये तब यर्थार्थ सर्व शक्ति विकल मालुम होजावेंगे. इस कारण सें सर्व जीव अपने करे कर्माधीनहै इस हेतुसे श्री महावीरस्वामी अपनी शक्तिसें त्रिशला माताकी कूखमें नही जा सकते है ।

प्र.२३. महावीरस्वामीके कितने नामथे.

उ. वीर १ चरमतीर्थकृत २ महावीर ३ वर्द्धमान ४ देवार्य ५ ज्ञातनंदन ६ येह ६ नाम है १ वीर बहुत सूत्रों मै नाम है १ चरमतीर्थकृत कल्पादि सूत्रें २ महावीर ३ वर्द्धमान यह तो प्रसिद्ध है बहुत शास्त्रों मे, देवार्य, आवश्यकमें, ज्ञातनंदन, ज्ञातपुत्र, आचारंग दशाश्रुतस्कंधे ७ छहों एकथे हेमाचार्यकृत् अभिधानचिंतामणि नाममालामे है.

प्र.२४. श्री महावीरस्वामीका बड़ाभाइ और तिनकी बहिनका क्या क्या नाम था ।

उ. श्री महावीरस्वामीके बड़ा भाइका नाम नंदिवर्धन और बहिनका नाम सुदर्शना था ।

प्र.२५. श्री महावीर के उपर तिनके माता पिताका अत्यंत राग था के नही.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उ. श्री महावीर के उपर तिनके माता पिताका अत्यंत राग था क्योंकि कल्पसूत्रमें लिखा है कि श्री महावीरजीने गर्भमें ऐसा विचार कराके मेरे हलने चलने सें मेरी माता दुख पावे है। इस वास्ते अपने शरीर कों गर्भमें ही हलाना चलाना बंद करा. तब त्रिशला माताने गर्भके न चलने से मनमें ऐसे मानाके मेरा गर्भ चलता हलता नही है इस वास्ते गल गया है, तबतो त्रिसला माताने खान, पान, स्नान, राग, रंग सब छोडके बहुत आर्त्त ध्यान करना शुरु करा, तब सर्व राज्य भवन शोक व्याप्त हुआ। राजा सिद्धार्थनी शोक वंत हुआ. तब श्री महावीरजीने अवधिज्ञानसे यह बनाव देखा तब विचार कराके गर्भमे रहे मेरे उपर माता पिताका इतना बडा भारी स्नेह है तो जब में इनकी रुबरु दीक्षा लेऊंगा तो मेरे माता पिता अवश्य मेरे वियोगसें मर जाएगे, तब श्री महावीरजीने गर्भमेही यह निश्चय करा कि माता पिताके जीवते हुए मैं दीक्षा नही लेवुंगा।

प्र. २६. इन श्री महावीरजीका वर्द्धमान नाम किस वास्ते रखा गया।

उ. जब श्री महावीरजी गर्भमें आये तबसें सिद्धार्थराजाकी सप्तांग राज्य लक्ष्मी वृद्धिमान् हुइ, तब माता पिताने विचाराके यह हमारे सर्व वस्तुकी वृद्धि गर्भके प्रभावसें हुई है। इस वास्ते इस पुत्रका नाम हम वर्द्धमान रखेंगे, भगवंतके जन्म पीछे सर्व न्यात वंशीयोंकी रूबरू पुत्रका नाम वर्द्धमान रखा।

प्र.२७. इनका महावीर नाम किसनें दीना।

उ. परीषह और उपसर्गसें इनकों भारी मरणांत कष्ट तक हुए तोभी किंचित मात्र अपना धीर्य और प्रतिज्ञासें नही चलायमान हुए है, इस वास्ते इंद्र, शक्र और भक्त देवतायोंने श्री महावीर नाम दीना. यह नाम बहुत प्रसिद्ध है।

प्र.२८. श्री महावीरकी स्त्रीका नाम क्या था और वह स्त्री किसकी बेटी थी।

उ. श्री महावीरकी स्त्रीका नाम यशोदा था, और सिद्धार्थ राजाका सामंत समरवीर की पुत्री थी जिसका कौडिन्य गोत्र था।

प्र.२९. श्री महावीजीने यशोदा स्त्रीके साथ अन्य राज्य कुमारोंकी तरे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महिलोंमें भोग विलास कराया ।

उ. श्री महावीरजीके भोग विलासकी सामग्री महिला बागादि सर्वथी. परंतु महावीरजी तो जन्म से ही संसारिक भोग विलासों से वैराग्यवान् निस्पृह रहते थे, और यशोदा परणी सोभी माता पिताके आग्रह सें और किंचित् पूर्व जन्मोपार्जित भोग्य कर्म निकाचित भोगने वास्तें. अन्यथातो तिनकी भोग्य भोगने मे रति नही थी ।

प्र.३०. श्री महावीरजीके कोइ संतान हुआ था तिसका नाम क्या था ।

उ. एक पुत्री हुइ थी तिसका नाम प्रियदर्शना था ।

प्र.३१. श्री महावीरस्वामी अपने पिताके घरमें मूलसें त्यागी वा भोगी रहे थे ।

उ. श्री महावीरजी २८ अठावीस वर्ष तकतो भोगी रहे पीछे माता पिता दोनो श्री पार्श्वनाथजी २३ में तीर्थंकर के श्रावक श्राविका थे । वेह महावीरजीकी २८ मे वर्षकी जिंदगी में स्वर्गवासी हुए पीछे श्री महावीरजीने अपने बडे भाइ राजा नंदिवर्द्धनकों दीक्षा लेने वास्ते पूछा, तब नंदिवर्द्धनने कहाकी अबहीतो मेरे माता पिता मरे है और तत्कालही तुम दीक्षा लेना चाहते हो यह मेरे कों बडा भारी वियोगका दुख होवेगा, इस वास्ते दो वर्ष तक तुम घरमे मेरे कहने से रहों, तब महावीरजी दो वरस तक साधुकी तरे त्यागी रहे.

प्र.३२. महावीरजीकी बेटीका किसके साथ विवाह करा था ।

उ. क्षत्रियकुंडका रहने वाला कौशिक गोत्रिय जमालि नामा क्षत्रिय कुमारके साथ विवाह करा था ।

प्र.३३. श्री महावीरजीकों त्यागी होने का क्या प्रयोजन था ।

उ. सर्व तीर्थंकरोका यही अनादि नियम है कि त्यागी होके केवलज्ञान उत्पन्न करके स्व-परोपकारके वास्ते धर्मोपदेश करनां. तीर्थंकर अपने अवधिज्ञानसे देख लेते है कि अब हमारे संसारिक भोग्य कर्म नही रहा है और अमुक दिन हमारे संसार गृहवास त्यागने का है तिस दिन ही त्यागी हो जाते है. श्री महावीरस्वामीकी बाबतभी इसी तरें जान लेनां.

प्र.३४. परोपकार करनां यह हरेक मनुष्यकों करनां उचित है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उ. परोपकार करनां यह सर्व मनुष्यों कों करनां उचित है, धर्मी पुरुषकोंतो अवश्य ही करनां उचित है ।

प्र.३५. श्री महावीरजीने किस वस्तुका त्याग करा था ।

उ. सर्व सावद्य योग का अर्थात् जीवहिंसा १ मृषावाद २ अदत्तादान ३ मैथुन स्त्री आदिकका प्रसंग ४ सर्व परिग्रह ५ इत्यादि सर्व पापके कृत्य करने करावने अनुमतिका त्याग करा था.

प्र.३६. श्री महावीरजीने अनगारपणा कब लीनाथा और किस जगेमें लीनाथा और कितने वर्षकी उमर में लीनाथा ।

उ. विक्रमसें पहिलें ५१२ वर्षे मगसिर वदी दशमीके दिन पिछले पहरमे उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें विजय महुर्त्तमें चंद्रप्रभा शिबिकामें बैठके चार प्रकारके देवते और नंदिवर्द्धन राजाप्रमुख हजारों मनुष्योंसे परिवरे हुए नानाप्रकारके वाजिंत्र बजते हुए बडिभारी महोत्सवसें न्यातवनषंड नाम बागमे अशोकवृक्षके हेठि जन्मसें तीस वर्ष व्यतीत हुए दीक्षा लीनीथी. मस्तक के केश अपने हाथसें लुंचन करे और अंदरके क्रोध, मान, माया, लोभका लुंचन करा.

प्र.३७. श्री महावीरजीकों दीक्षा लेनेसें तुरत ही किस वस्तुकी प्राप्ति हुइथी ।

उ. चौथा मनः पर्यवज्ञान उत्पन्न हुआ था ।

प्र. ३८. मनःपर्यवज्ञान भगवंतकों गृह स्थावस्थामें क्युं न हुआ.

उ. मनः पर्यवज्ञान निर्ग्रंथ संयमीकोही होता है अन्यको नही.

प्र.३९. ज्ञान कितने प्रकारके है

उ. पांच प्रकार के ज्ञान है ।

प्र.४० तिन पांचो ज्ञानके नाम क्या क्या है ?

उ. मतिज्ञान १ श्रुतिज्ञान २ अवधिज्ञान ३ मनः पर्यवज्ञान ४ केवलज्ञान ५.

प्र.४१. इन पांचो ज्ञानोंका थोडासा स्वरुप कहो.

उ. मतिज्ञान विनाही सुने के जो ज्ञान होवे तथा चार प्रकारकी जो बुद्धि है सो मतिज्ञान है. इसके ३३६ तीनसौ छत्तीस भेद है । जो कहने सुनने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मे आवे सो श्रुतज्ञान है, तिसके १४ चौद भेद है । अवधिज्ञान सर्व रुपी वस्तुकों जाने देखे, तिसके ६ भेद है । मनः पर्यवज्ञान अढाइ द्वीपके अंदर सर्वके मन चिंतित अर्थको जाने, देखे, तिसके दोय २ भेद है । केवलज्ञान भूत, भविष्यत्, वर्त्तमानकालकी वस्तु सूक्ष्म बादर रूपी अरूपी व्यवध्यान रहित व्यवधान सहित दूरने झे अंदर बाहिर सर्व वस्तुकों जाने, देखे है, इस ज्ञान के भेद नही है, इन पांचो ज्ञानोका विशेष स्वरुप देखना होवे तो नंदिसूत्र मलयगिरि वृत्ति सहित वांचना वा सुन लेना ।

प्र.४२. श्री महावीरस्वामी अनगार होकर जब चलने लगे ते तब तिनके भाइ राजा नंदिवर्धनने जो विलाप करा था सो थोडासा श्लोको में कह दिखलावो.

उ. त्वया विना वीर कथं व्रजामो ।। गृहेऽधुना शून्य वनोपमाने ।। गोष्टी सुखं केन सहाचरामो । भोक्ष्यामहे केन सहाथ बंधो ।।१।। अस्यार्थः ।। हे वीर तेरे एकलेको छोड के हम सूने बन समान अपने घरमें तेरे विना क्युं कर जावेंगे, अर्थात् तेरे विना हमारे राजमहिलमे हमारा मन जानेको नही करता है, तथा हे बंधव तेरे विना एकांत बेठके अपने सुख दुखकी बातां करन रूप गोष्टी किसके साथ मैं करूंगा तथा हे बंधव तेरे विना मैं किसके साथ बैठके भोजन जीमुगा, क्योंके तेरे विना अन्य कोइ मेरा त्रिशलाका जाया भाइ नही है १ सर्वेषु कार्येषु च वीर वीरे ।। त्यामंत्रणदर्शनतस्तवार्य ।। प्रेमप्रकर्षादभजाम हर्ष ।। निराश्रया श्चाथकमाश्रयामः ।।२।। अर्थ ।। हे आर्य उत्तम सर्व कार्यके विषे वीर वीर ऐसे हम तेरेकों बुलाते थे और हे आर्य तेरे देखनेसें हम बहुत प्रेमसें हर्षकों प्राप्त होते थे, अब हम निराश्रय होगये है, सो किसकों आश्रित होवे, अर्थात् तेरे विना हम किसकों हे वीर हे वीर कहेंगे, और देखके हर्षित होवेंगे ।।२।। अति प्रियं बांधव दर्शनं ते ।। सुधांजनं भाविक दास्मदक्ष्णोः ।। नीराग चित्तोपिकदाचिदस्मान् ।। स्मरिष्यसि प्रौढ गुणाभिराम ।।३।। अस्यार्थः ।। हे बांधव तेरा दर्शन मेरेकों अधिक प्रिय है, सो तुमारे दर्शन रूप अमृतांजन हमारी आंखो में फेर कद पडेगा. हे महागुणवान् वीर तूं निराग चित्तवाला है तोभी कदेक हम प्रिय बंधवांकों स्मरण करेंगा ३ इत्यादि विलाप करेथे.

प्र.४३. श्री महावीरस्वामी दीक्षा लेके जब प्रथम विहार करनें लगे थे तिस अवसरमें शक्रइंद्रनें श्री महावीरजी को क्या बिनती करीथी.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उ. शक्रइंद्रनें कहाकि हे भगवन् तुमारे पूर्व जन्मोंके बहुत असाता वेदनीयादि कठिन कर्मोके बंधन है तिनके प्रभावसें आपकों छद्मस्थावस्थामें बहुत भारी उपसर्ग होवेंगे जेकर आपकी अनुमति होवे तो मैं तुमारे साथही साथ रहुं और तुमारे सर्व उपसर्ग टालुं अर्थात् दूर करुं.

प्र.४४ तब श्री महावीरजीने इंद्रको क्या उत्तर दीनाथा.

उ. तब श्री महावीरजीने इंद्रकों ऐसे कहा के हे इंद्र यह वात कदापि अतीत कालमें नही हुइ है अपनी नही है और अनागत कालमेभी नही होवेगी के किसीनी देवेंद्र असुरेंद्रादिके साहाय्यसें तीर्थंकर कर्मक्षय करके केवलज्ञान उत्पन्न करते है, किंतु सर्व तीर्थंकर अपने २ प्राक्रमसें केवलज्ञान उत्पन्न करते है इस वास्ते हमभी दूसरेकी साहाय्य विना अपने ही प्राक्रमसें केवलज्ञान उत्पन्न करेंगे ।

प्र.४५. क्या श्री महावीरजीकी सेवामें इंद्रादि देवते रहते थे ।

उ. छद्मस्थावस्थामें तो एक सिद्धार्थ नामा देवतां इंद्रकी आज्ञासें मरणांत कष्टदूर करने वास्ते सदा साथ रहता था, और इंद्रादि देवते किसि किसि अवसरमें वंदना करने सुखसाता पूछने वास्ते और उपसर्ग निवारण वास्ते आते थे और केवलज्ञान उत्पन्न हुआ पीछेतो सदाही देवते सेवामे हाजर रहते थे ।

प्र.४६. श्री महावीरजीने दीक्षा लीया पीने क्या नियम धारण करा था ।

उ. यावत् छद्मस्थ रहुं तावत् कोइ परीषह उपसर्ग मुझकों होवे ते सर्व दीनता रहित अन्य जनकी साहायसें रहित सहन करुं. जिस, स्थान मे रहने से तिस मकानवालेकों अप्रीति उत्पन्न होवे तो तहां नही रहेनां १ सदा ही कायोत्सर्ग अर्थात् सदा खडा होके दोनो बाहां शरीरके अनलगती हुइ हैठकों लांबी करके पगोंमे चार अंगुल अंतर रखके थोडासा मस्तक नीचा नमावी एक किसी जीवरहित वस्तु उपर द्रष्टि लगाके खडा रहुंगा २, गृहस्थका विनय नही करुंगा ३, मौन धारके रहुंगा ४, हाथमेही लेके भोजन करुंगा, पात्रमे नही ५. ये अभिग्रह नियम धारण करे थे.

प्र.४७ श्री महावीरस्वामीजीने छद्मस्थ काल मे कैसे कैसे परीषह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपसर्ग सहन करे थे तिनका संक्षेपसें ब्यान करो.

उ. प्रथम उपसर्ग गोवालीयेने करा १ शूलपाणिके मंदिरमें रहे तहां शूलपाणी यक्षने उपसर्ग करे ते ऐसे अदद हासी करके डराया १ हाथीका रूप करके उपसर्ग करा २ सर्पके रूप में ३ पिशाच के रूप सें ४ उपसर्ग करा. पीछे मस्तकमे १ कानमे २ नाकमे ३ नेत्रों मे ४ दांतोमे ५ पुंठकेमं ६ नखेमें ७ अन्य सुकुमार अंगोमें ऐसी पीडा कीनीके जेकर सामान्य पुरुषके एक अंगमेभी ऐसी पीडा होवे तो तत्काल मरण पावे, परं भगवंतनेतो मेरुकी तरें अचल होके अदीन मनसें सहन करे, अंतमे देवता थकके श्री महावीरजीका सेवक बना शांत हुआ. चंडकौशिक सर्पने डंख मारा पर भगवंततो मरा नही, सर्प प्रतिबोध हुआ. सुदंष्ट्र नागकुमार देवताका उपसर्ग संबल कंबल देवतायोंने निवारा. भगवंततो कायोत्सर्गमें खडे थे. लोकोंने बनमे अग्नि बाली लोकतो चले गये पीते अग्नि सूके घासादिकों बालती हुइ भगवंतके पगों हेतु आ गइ, तिसें भगवंतके पग दग्ध हुए परं भगवंतने तो कायोत्सर्ग छोडा नही. तहांही खडे रहे. कटपूतना देवीने माघमासके दिनोमें सारी रात भगवंतके शरीरकों अत्यंत शीतल जल छांटा, भगवंततो चलायमान नही हुए. अंतमे देवी थकके भगवंतकी स्तुति करने लगी. संगम देवताने एक रात्रिमें वीस उपसर्ग करे वे ऐसे है भगवंतके उपर धूलिकी वर्षा करी जिस्सें भगवंत के आंख कानादि श्रोत बंद होने से खासोत्सासस्सें रहित हो गये तोभी ध्यानसे नही चले १ पीछे बज्रमुखी कीकीयों बनाके भगवंतका शरीर चालनिवत् सछिद्र करा २ बज्र चूंचवाले दंशोने बहु पीडा करी ३ तीक्ष्ण चूंचवाली धीमेल बनके खाया ४ बिछु ५ सर्प्प ६ नउल ७ मूसे ८ के रूपोसें डंक मारा और मांस नोची खाधा. हाथी ९ हथणी १० बनके सूंड दांतका घाव करा पग हेतु मर्दन करा तोभी भगवंत वज्रऋषभनाराच नामक संहनन वाले होने से नही मरे. पिशाच बनके अददहास्य करा ११ सिंहवनके नख दाडायोंसे बिदारया, फाडया १२ सिद्धार्थ त्रिशलाका रूप करके पुत्रके स्नेहके बिलाप करे १३ स्कंधावारके लोक बनाके भगवंतके पगों उपर हांकी रांधी १४ चंडालके रूपसें पंखियों के पंजरे भगवंतके कान बाहु आदि मे लगाये तिन पक्षीयोंने शरीर नोंचा १५ पीछे खर पवनसें भगवंतकों गेंदकी तरे उछाल २ के धरती उपर पटका १६ पीछे कलिका पवन करके भगवंतकों चक्रकी तरे घुमाया १७ पीछे चक्र मारा जिससें भगवंत जानु

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तक भूमिमे घस गये १८ पीछे प्रभात विकुर्वी कहने लगा विहार करो. भगवंततो अवधिज्ञानसें जानते थे के अबीतो रात्रि है १९ पीछे देवांगनाका रूप करके हावभावादि करके उपसर्ग दीना २० इन वीसों उपसर्गोसें जब भगवंत किंचित् मात्रभी नही चले तब संगमदेवताने छमास तक भगवंतके साथ रहके उपसर्ग करे, अंतमें थकके अपनी प्रतिज्ञासें भ्रष्ट होके चला गया. अनार्य देशमे भगवंतको बहुत परीषह उपसर्ग हुए। अंतमे दोनो कानोमें गोवालीयोंने कांसकी सलीयो डाली तिनसें बहुत पीडा हुइ सो मध्यम पावापुरी नगरीमे खरकवैद्य सिद्धार्थ नामा बाणियाने कांसकी सलीयों कानोमेंसे काढी भगवंत निरुपक्रमायुवाले थे इससें उपसर्गोमे मरे नही, अन्य सामान्य मनुष्यकी क्या शक्ति है, जो इतने दुःख होने से न मरे. विशेष इनका देखना होवे तो आवश्यक सूत्रसें देख लेना.

प्र.४७. श्री महावीरस्वामीकों उपसर्ग होने का क्या कारण था।

उ. पूर्व जन्मांतरोमें राज्य करणेसें अत्यंत पाप करे वे सर्व इस जन्ममेही नष्ट होने चाहिये इस वास्ते असाता वेदनीय कर्म निकाचित्तमें अपने फल रूप उपसर्गसें कर्म भोग्य कराके दूर हो गये, इस वास्ते बहुत उपसर्ग हुए।

प्र.४९. श्री महावीरजीने परीषहे किस वास्ते सहन करे और तप किस वास्ते करा.

उ. जेकर भगवंत परीषहे न सहन करते और तप न करते तो पूर्वोपार्जित पापकर्म क्षय न होते, तबतो केवलज्ञान और निर्वाण पद ये दोनो न प्राप्त होते इस वास्ते परीषहे उपसर्ग सहन करे, और तपभी करा.

प्र.५०. श्री महावीरजीने छद्मस्थावस्थामें तप कितना करा और भोजन कितने दिन करा था।

उ. इसका स्वरूप नीचले यंत्र से समझलेनां.

छ मासी तप १	छ मासी तप १	चार मासी	तीन मासी	अढाइ मास तप	दो मासी तप	डेढ मास तप	मास क्षपण तप	पखवाडीया तप
तप १	पांच दिन न्यून	९	२	२	६	२	१२	७२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भद्र प्रतिमा तप	महा भद्र तप	सर्वतो भद्र तप	छठ तप	अट्ठम तप	सर्वपारणां	दिक्षा दिन	सर्व काल तप उर पारणा एकत्र करै
दिन २	४	१०	२२९	१२	३४९	१	१२ वर्ष मास ६ दिन १५

प्र.५१. श्री महावीरजीकों दीक्षा लीये पीछे कितने वर्ष गये केवलज्ञान उत्पन्न हुआ था।

उ. १२ वर्ष ६ मास ऊपर १५ पंदरादिन इतने काल गये पीछे केवलज्ञान उत्पन्न हुआ था।

प्र. ५२. श्री महावीरजीकों केवलज्ञान कैसी अवस्थामें और किस जगें, उत्पन्न हुआ था।

उ. वैशाख शुदि १० दशमीके दिन पिछले चौथे पहरमें जृंभिक गाम नगरके बाहिर ऋजुबालुका नामे नदीके कांठे उपर वैयावृत्त नामा व्यंतर देवताके देहरेके पास श्यामाक नामां गृहपतिके खेतमें साल वृक्षके नीचे गाय दोहने के अवसरमें जैसें पगथलीयोंके भार बैठते है तैसें उत्कटिका नाम आसने बैठे आतापना लेनेकी जगें आतापना लेते हुए तिस दिन दूसरा उपवास छठ भक्त पाणिरहित करा हुआ था. शुक्लध्यान के दूसरे पादमे आरूढ हुआकों केवलज्ञान हुआ था।

प्र.५३. भगवंतकों जब केवलज्ञान उत्पन्न हुआ था तब तिनकी कैसी अवस्था हुई थी।

उ. सर्वज्ञ सर्वदर्शी अरिहंत जिन केवली रूप अवस्था हुई थी।

प्र. ५४. भगवंतकी प्रथम देशनासें किसीकों भान हुआ था।

उ. नही ।। सुनने वालेतो थे, परंतु किसीकों तिस देशनासें गुण नही उत्पन्न हुआ।

प्र.५५. प्रथम देशना खाली गइ तिस बनावकों जैन शास्त्रमें क्या नाम कहते है।

उ. अछ्छेराभूत अर्थात् आश्चर्यभूत जैन शास्त्रमें इस बनावका नाम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कहा है ।

प्र. ५६. अछ्छेरा किसकों कहते है ।

उ. जो वस्तु अनंते काल पीछे आश्चर्य कारक होवे तिसकों अछ्छेरा कहते है, क्योंकि कोइभी तीर्थंकरकी देशना निःफल नही जाती है और श्री महावीरजीकी देशना निष्फल गइ, इस वास्ते इसको अछ्छेरा कहते है ।

प्र. ५७. श्री महावीरजीतो केवलज्ञानसें जानते थे कि मेरी प्रथम देशनासें किसीकोंभी कुछ गुण नही होवेगा, तो फेर देशना किस वास्ते दीनी.

उ. सर्व तीर्थंकरोंका यह अनादि नियमहै कि जब केवलज्ञान उत्पन्न होवे तब अवश्यही देशना देते है तिस देशनासें अवश्यमेव जीवांकों गुण प्राप्त होता हैं, परं श्री वीरकी प्रथम देशनासें किसीको गुण न हुआ, इस वास्ते अछ्छेरा कहा है ।

प्र. ५८. श्री महावीर भगवंते दूसरी देशना किस जगें दीनीथी ।

उ. जिस जगें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ था तिस जगासें ४८ कोसके अंतरे अपापा नामा नगरी थी, तिससें इशान कोनमे महासेन वन नामे उद्यान था तिस वनमें श्री महावीरजी आए, तहां देवतायोने समवसरण रचा. तिसमें बैठके श्री महावीर भगवंते देशना दूसरी दी.

प्र. ५९. दूसरी देशना सुनने वास्ते तहां कोन कोन आये थे ।। और तिस दूसरी देशना में क्या बडा भारी बनाव बना था और किस किसनें दीक्षा लीनी, और भगवंतके कितने शिष्य साधु हुए, और बडी शिष्यणी कौन हुइ.

उ. चार प्रकारके देवता और चार प्रकारकी देवी मनुष्य, मनुष्यणी इत्यादि धर्म सुननेकों आये थे ।

भगवंतकी देशना सुनके बहुत नर नारी अपापा नगरीमें जाके कहने लगे, आजतो हमारी पुन्यदशा जागी जो हमने सर्वज्ञके दर्शन करे, और तिसकी देशना सुनी हमनेतो ऐसी रचनावाला सर्वज्ञ कदेइ देखा नही, यह वात नगर मे विस्तरी तिस अवरमें तिस अपापा नगरीमें सोमल नामा ब्राह्मणनें यज्ञ करनेका प्रारंभ कर रखा था, तिस यज्ञके कराने वाले इग्यारें ब्राह्मणोंके मुख्याचार्य बुलवाये थे, तिनके नामादि सर्व ऐसे थे, इंद्रभूति १ अग्निभूति २

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वायुभूति ३ ये तीनो सगे भाइ, गौतम गोत्री, इनका जन्म गाम मगधदेशमें गोर्बरगाम, इनका पिता बसुभूति, माताका नाम पृथिवी, उमर तीनोकी गृहवासमें क्रमसे ५०/४६/४२ वर्षकी इनके विद्यार्थी ५०० पांच पांचसौ चतुर्दश विद्याके पारगामी चौथा अव्यक्त नामा १ भारद्वाज गोत्र २ जन्म गाम कोल्लाक सन्निवेस ३ पिताका नाम धनमित्र ४ माता वारुणी नामा ५ गृहवासें उमर ५० वर्षकी ६ विद्यार्थी ५०० सौ ७ विद्या १४ का जान पांचमा सुधर्म नामा १ अग्नि वैश्यायन गोत्री २ जन्म गाम कोल्लाक सन्निवेस ३ पिता धम्मिल ४ अद्रिला माता ५ गृहवास ५० वर्ष ६ विद्यार्थी ५०० सौ ७ विद्या । १४। ८. छट्ठा मंदिकपुत्र नाम १ बाशिष्ट गोत्र २ जन्म गाम मौर्य सन्निवेश ३ पिता धनदेव ४ माता विजयदेवा ५ गृहवास ६५ वर्ष ६ विद्यार्थी ३५० सौ ७ विद्या ।१४। ८. सातमा मौर्य पुत्र नाम १ काश्यप गोत्र २ जन्म गाम मौर्य सन्निवेस ३ पिता मौर्य नाम ४ माता विजयदेवी ५ गृहवास ५३ वर्ष ६ विद्यार्थी ३५० सौ ७ विद्या ।१४। ८. आठमा अकंपित नाम १ गौतम गोत्र २ जन्म गाम मिथिला ३ पिता नाम देव ४ माता जयंती ५ गृहवास ४८ वर्ष ६ विद्यार्थी ३०० सौ, विद्या १४ । ८. नवमा अचलभ्राता नाम १ गोत्र हारीत २ जन्म ठाम कोशला ३ पिता नाम वसु ४ नंदा माता ५ गृहवास ४६ वर्ष ६ विद्यार्थी ३०० सौ, विद्या १४/८. दसमेका नाम मेतार्य १ गोत्र कौडिन्य २ जन्म गाम कौशला वत्स भूमिमे ३ पिता दत्त ४ माता बरुणदेवा ५ गृहवास ३६ वर्ष ६ विद्यार्थी ३०० तीनसौ ७ विद्या १४ । ८. इग्यारमा प्रभास नामा १ गोत्र कौडिन्य २ जन्म राजगृह ३ पिता बल ४ माता अतिभद्रा ५ गृहवास १६ वर्ष ६ विद्यार्थी ३०० सौ ७ विद्या १४/८. इस स्वरूप वाले इग्यारे मुख्य ब्राह्मणा यज्ञ पाडेमें थे तिनोके कानमें पूर्वोक्त शब्द सर्वज्ञकी महिमाका पडा, तब इंद्रभूति गौतम अभिमानसें सर्वज्ञका मान भंजन करने वास्ते भगवंतके पास आया । तिनकों देखके आश्चर्यवान् हुआ, तब भगवंतने कहा हे इंद्रभूति, गौतम तुं आया, तब गौतम मनमें चिंतने लगा मेरे नाम लेनेसें तो मै सर्वज्ञ नही मानुं, परं मेरे रिदय गत संशय दूर करे तो सर्वज्ञ मानुं. तब भगवंतने तिनके वेदज पद और युक्तिसे संशय दूर करा. तब ५०० सौ छात्रा सहित गौतमजीने दीक्षा लीनी, ए बडा शिष्य हुआ. इसी तरे इग्यारहीके मनके संशय दूर करे और सर्वने दीक्षा लीनी. सर्व ४४०० सौ इग्यारे अधिक शिष्य हुए. इग्यारोंके मनमें जीव है के नही १ कर्महै के नही २ जो जीव है सोइ शरीर है वा शरीर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से जीव अलग है ३ पांच भूत है वा नही ४ जैसा इस जन्म मे जीव है जन्मांतरमें ऐसी ही होवेगा के अन्य तरेंका होवेगा ५ मोक्ष है के नही ६ देवते है के नही ७ नरकी है के नही ८ पुन्य है के नही ९ परलोक है के नही १० मोक्षका उपाय है के नही ११ इनके दूर करने का संपूर्ण कथन विशेषावश्यक मे है तिस दीनही चंपाके राजा दधिवाहनकी पुत्री कुमारी ब्रह्मचारणी चंदन बालाने दीक्षा लीनी. यह बडी शिष्यणी हुइ. इसके साथ कितनीही स्त्रीयोंने दीक्षा लीनी. दूसरी देशनामे यह बनाव बना था ।

प्र.६०. गणधर किसकों कहते है ।

उ. जिस जीवनें पूर्व जन्ममे शुभ करणी करके गणधर होने का पुन्य उपार्जन करा होवे सो जीव मनुष्य जन्म लेके तीर्थंकरके साथ दीक्षा लेता है अथवा तीर्थंकर अर्हंतको जब केवलज्ञान होता है तिनके पास दीक्षा लेता है, और बडा शिष्य होते है: तीर्थंकर के मुखमें त्रिपदी सुनके गणधर लब्धिसें चौदहे पूर्व रचता है और चार ज्ञानका धारक होता है तिसकों तीर्थंकर भगवंत गणधर पद देते है और साधुयों के समुदाय रूप गणकों धारण करता है, तिसकों गणधर कहते है ।

प्र.६१. श्री महावीरजीके कितने गणधर हुए थे ।

उ. इग्यारें गणधर हुए थे, तिनके नाम उपर लिख आए है ।

प्र.६२. संघ किसकों कहते है ।

उ. साधु १ साध्वी २ श्रावक ३ श्राविका ४ इन चारोंको संघ कहते है ।

प्र.६३. श्री महावीर भगवंतके संघमे मुख्य नाम किस किसका था ।

उ. साधुयोंमे इंद्रभूति गौतम स्वामी नाम प्रसिद्ध १ साधवीयोंमें चंपा नगरीके दधिबाहन राजाकी पूत्री साधवी चंदनबाला २ श्रावकों में मुख्य श्रावस्ति नगरीके वसने वाले संख १ शतक २ श्राविकायोंमें सुलसा ३ रेवती ४ सुलसा राजगृहके प्रसेनिजित राजाका सारथी नाग तिसकी आर्या, और रेवती मेंढिक ग्रामकी रहनेवाली धनाढ्य गृह पत्नी थी ।

प्र.६४. श्री महावीरस्वामीने किसतरेंका धर्म प्ररुप्या था ।

उ. सम्यक्त पूर्वक साधुका धर्म और श्रावकका धर्म प्ररूप्या था ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.६५. सम्यक्त पूर्वक किसकों कहते है ।

उ. भगवंतके कथनकों जो सत्य करके श्रद्धे, तिसकों सम्यक्त कहते है, सो कथन यह है लोककी अस्ति है १ अलोकभी है २ जीवभी है ३ अजीवभी है ४ कर्मका बंधनो है ५ कर्मका मोहभी है ६ पुन्यभीहै ७ पापभीहै ८ आश्रव कर्मका आवणाभी जीवमे है ९ कर्म आवने के रोकणेका उपाय संबरभी है १० करे कर्मका वेदना भोगनाभी है ११ कर्मकी निर्जराभी है कर्म फल देके खिरजाते है १२ अरिहंत है १३ चक्रवर्ती है १४ बलदेव बासुदेवभी है १५ नरक है १६ नारकी है १७ तिर्यंच है १८ तिर्यंचणी है १९ माता पिता ऋषी है २० देवता और देवलोक है २१ सिद्धि स्थान है २२ सिद्ध है २३ परिनिर्वाण है २४ परिनिवृत्त है २५ जीवहिंसा है २५ जूठ है २६ चौरी है २७ मैथुन है २८ परिग्रह है २९ क्रोध, मान माया, लोन, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन, परनिंदा, माया, मृषा, मिथ्यादर्शन, शल्ययें सर्व है । इन पूर्वोक्त जीव हिंसासें लेके मिथ्यादर्शन पर्यंत अठारह पापों के प्रतिपक्षी अठारह प्रकार के त्यागभी है ३० सर्व अस्ति श्रावकों अस्ति रुपे और नास्तिभावकों नास्तिरुपें भगवंतने कहा है ३१ अच्छे कर्मका अच्छा फल होता है बुरे कर्मका बुरा फल होता है ३२ पुण्य पाप दोनो संसारावस्था में जीव के साथ रहते है ३३ यह तो निर्ग्रंथोंके वचन है वे अति उत्तम देवलोक और मोक्षके देने वाले है ३४ चार काम करने बाला जीव मरके नरक गतिमें उत्पन्न होता है । महा हिंसक, क्षेत्र वाडी कर्षण सर सोसादिसें महाजीवांका बध करनेवाला १ महा परिग्रहतृश्ना वाला २ मांसका खाने वाला ३ पंचेंद्रिय जीवका मारने वाला ४ ।। चार काम करने वाला मरके तिर्यंच गति में उत्पन्न होता है. माया कपटसें दूसरे के साथ ठगी करे १ अपने करे कपट के ढांकने वास्ते जुठ बोले २ कमथी तोल देवे अधिक तोल लेवे ३ गुणवंतके गुण देख सुनके निंदा करे ४ चार काम करने सें मनुष्य गतिमें उत्पन्न होता है, भद्रिक स्वभाव वाले स्वभावें कुटलितासें रहित होवे १ स्वभावेहीं विनयवंत होवे २ दयावंत होवे ३ गुणवंतके गुणसुनके देखके द्वेष न करे ४।। चार कारण सें देवगतिमें उत्पन्न होता है, सरागी साधुपणा पालने सें १ गृहस्थ धर्म देश वृत्ति पालन सें २ अज्ञान तप करने सें ३ अकाम निर्जरासें ४ तथा जैसी नरक तिर्यंच गति मे जीव वेदना भोगताहै और मनुष्यपणा अनित्य है, व्याधि, जरा, मरण वेदना करके बहुत भरा हुआ है, इस वास्ते धर्म करणे में उद्यम करो. देवलोकमें देवतायोंकों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मनुष्य करतां बहुत सुख है, अंत मे सोभी अनित्यहै, जैसें जीव कर्मोसें बंधाता है और जैसे जीव कर्म से छुटके निर्वाण पदकों प्राप्त होता है, और षट्कायके जीवां का स्वरुप ऐसा है पीछे साधुका धर्म और श्रावक के धर्मका यह स्वरूप है इत्यादि धर्म देशना श्री महावीर भगवंते सर्वजातिके मनुष्यादिकों कों कथन करीथी ।

प्र.६६. साधुके धर्मका थोडेसे में स्वरुप कह दिखलानुं.

उ. पांच महाव्रत और रात्रि ओजनका त्याग यह छ वस्तु धारण करे. दश प्रकारका यति धर्म और सत्तरेंभेदे संयम पालन करे, ४२ बैतालीस दोष रहित भिक्षा ग्रहण करे, दशविध चक्रवाल समाचारी पाले.

प्र.६७. श्रावक धर्मका थोडे से में स्वरूप कह दिखलानुं.

उ. त्रस जीवकी हिंसाका त्याग १ बडे जुठका त्याग, अर्थात् जिसके बोलने से राजसें दंड होवे, और जगत में जुठ बोलने वाला प्रसिद्ध होवे. ऐसे चोरीमेंभी जानना २ बडी चोरीका त्याग ३ परस्त्रीका त्याग ४ परिग्रह का प्रमाण ५ छहें दिशामें जानेका प्रमाण करे, आगे परिभोगका प्रमाण करे, बावीस अभक्ष्य न खाये, योग्य वस्तुका ओर बत्तीस अनंत कायका त्याग करे. और पंदर १५ बुरे वाणिज व्यापार करनेका त्याग करे. बिनाप्रयोजन पाप न करे. सामायिक करे, देशावकाशिक करे, पोषध करे, दान देवे, त्रिकाल देव पूजन करे.

प्र. ६८. साधु श्रावकका धर्म किस वास्ते मनुष्योंको करना चाहिये ।

उ. जन्म मरणादि संसार भ्रमण रूप दुखसें छूटने वास्ते साधु और श्रावक का पूर्वोक्त धर्म करना चाहिये ।

प्र.६९. श्री भगवंत महावीरजीने जो धर्म कथन करा था. सो धर्म श्री महावीरजीनें अपने हाथों से किसी पुस्तकमें लिखा था वा नही.

उ. नही लिखा था ।

प्र.७०. श्री महावीर भगवंतका कथन करा हुआ सर्व उपदेश भगवंतकी रूबरू किसी दूसरे पुरुषनें लिखा था ।

उ. दूसरे किसी पुरुषने सर्व नही लिखा था ।

प्र. ७१. क्या लिखने लोक नही जानते थे, इस वास्ते नही लिखा वा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्य कोइ कारण था ।

उ. लिखनेतो जानते थे, परं सर्व ज्ञान लिखने की शक्ति किसीभी पुरुषमें नही थी, क्योंकें भगवंतने जितना ज्ञानमें देखा था तिसके अनंतमें भागका स्वरूप वचन द्वारा कहा था । जितना कथन करा था तिसके अनंतमें भाग प्रमाण गणधरोने द्वादशांग सूत्रमें ग्रंथ करा, जेकर कोइ १२ बारमें अंग द्रष्टिबादका तीसरा पूर्व नामा एक अध्ययन लिखेतो १६३८३ सोलांहजार तीन सौ त्रिराशी हाथीयों जितने साहीके ढेर लिखने में लगें, तो फेर संपूर्ण द्वादशांग लिखनेकी किसमे शक्ति हो सकती है, और जब तीर्थंकर गणधरादि चौदह पूर्व धारी विद्यमान थे तिनके आगे लिखने का कुछ भी प्रयोजन नही था और देशमात्र ज्ञान किसी साधु, श्रावकने प्रकरण रूप लिख लीया होवे, अपने पठन करने वास्ते, तो निषेध नही.

प्र.७२. पूर्वोक्त जैनमतके सर्व पुस्तक श्री महावीरसें और विक्रम संवत की शुरु यातसें कितने वर्ष पीछे लिखे गये है ।

उ. श्री महावीरजीसें ९८० नवसौ अस्सी वर्ष पीछे और विक्रम संवत् ५१० में लिखे गये है ।

प्र.७३. इन शास्त्रों के कंठ और लिखने में क्या व्यवस्था बनी थी, और यह पुस्तक किस जगे किसने किस रीती से कितने लिखे थे ।

उ. श्री महावीरजीसें १७० वर्ष तक श्री भद्रबाहु स्वामी यावत् (द्वादशांग) चौदह पूर्व और इग्यारे अंग जैसें सुधर्म स्वामीने पाठ ग्रंथन करा था तैसाही था, परं भद्रबाहु स्वामीने बारां १२ चौमासे निरंतर नैपाल देशमें करे थे, तिस समयमें हिंदुस्थानमें बारां वर्षका काल पडा था, तिसमें भिक्षा ना मिलने सें एक भद्रबाहु स्वामीकों बर्जके सर्व साधुयों के कंठसें सर्व शास्त्र बीच बीचसें कितनेही स्थान विस्मृत हो गये, जब बारां वरसका काल दूर हुआ, तब सर्व आचार्य साधु पाडलिपुत्र नगरमें एकठे हुए । सर्व शास्त्र आपसमें मिलान करे तब इग्यारे अंग तो संपूर्ण हुए, परंतु चौदह पूर्व सर्व सर्वथा भूल गए, तब संघकी आज्ञासें स्थुलभद्रादि ५०० सौ तीक्ष्ण बुद्धिवाले साधु नैपाल देशमे श्री भद्रबाहु स्वामीके पास चौदह पूर्व सीखने वास्ते गये, परंतु एक स्थुलभद्र स्वामीने दो वस्तु न्यून दश पूर्व पाठार्थसें सीखे. शेष चार पूर्व केवल पाठ मात्र सीखे. श्री भद्रबाहुके पाट उपर श्री स्थुलभद्र स्वामी बैठे, तिनके शिष्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आर्य महागिरि सुहस्तिसे लेके श्री वज्रस्वामी तक जो वज्रस्वामी श्री महावीरसें पीछे ५८४ में वर्ष विक्रम संवत् ११४ में स्वर्गवासी हुए है तहां तक येह आचार्य दश पूर्व और इग्यारे अंगके कंठयाग्र ज्ञानवाले रहे, तिनके नाम आर्य महागिरि १ आर्यसुहस्ति २ श्री गुणसुंदर सूरि ३ श्यामाचार्य ४ स्कंधिलाचार्य ५ श्वेतीमित्र ६ श्री धर्मसूरि ७ श्री भद्रगुप्त ८ श्री गुप्त ९ वज्रस्वामी १० श्री वज्रस्वामीके समीपे तोसलीपुत्र आचार्यका शिष्य श्री आर्यरक्षितसूरिजीनें साडे नव पूर्व पाठार्थसें पठन करे. श्री आर्यरक्षितसूरि तक सर्व सूत्रोंके पाठ उपर चारोही अनुयोगकी व्याख्या अर्थात् जिस श्लोक में चरण करणानुयोगकी व्याख्या जिन अक्षरोंसे करते थे तिसही श्लोकके अक्षरोंसे द्रव्यानुयोगकी व्याख्या और धर्मकथानुयोगकी और गणितानुयोगकी व्याख्या करते थे. इसतरें अर्थ करणेकी रीती । श्री सुधर्मस्वामीसे लेके श्री आर्यरक्षित सुरि तक रही, तिनके मुख्य शिष्य विंध्यदुर्वलिकापुष्पादिकी बुद्धि जब चारतेरें के अर्थ समझने में गभराइ तब श्री आर्यरक्षित सूरिजीने मनमें विचार करा इन नव पूर्वधारीयोंकी बुद्धिमें जब चार तरेंका अर्थ याद रखना कठिन पडता है, तो अन्य जीव अल्प बुद्धिवाले चार तरेंका सर्व शास्त्रोंका अर्थ क्युं कर याद रखेंगे. इस वास्ते सर्व शास्त्रोंके पाठोंका अर्थ एकैक अनुयोगकी व्याख्या शिष्य प्रशिष्योंकों सिखाइ. शेष व्यवच्छेद करी सोइ व्याख्या जैन श्वेतांबर मतमे आचार्योंकी अविच्छिन्न परंपरायसे आज तक चलती है, तिनके पीछे स्कंधिला आचार्य श्री महावीरजीके २४ मे पाट हुए है. नंदी सूत्रकी वृत्तिमें श्री मलयगिरि आचार्ये ऐसा लिखाहैकि श्री स्कंधिलाचार्यके समय में बारां वर्ष १२ का दुर्भिक्ष काल पडा, तिसमें साधुयोंकों भिक्षा न मिलनेसें नवीन पढना और पिछला स्मरण करना बिलकुल जाता रहा और जो चमत्कारी अतिशयवंत शास्त्रथे वेभी बहुत नष्ट हो गये. और अंगोपांगभी भावसें अर्थात् जैसे स्वरूप वालेथे तैसे नही रहै. स्मरण परावर्त्तनके अभावसें जब बारां वर्षका दुर्भिक्ष काल गया और सुभिक्ष हुआ, तब मथुरा नगरीमें स्कंधिलाचार्य प्रमुख श्रमण संघने एकठे होके जो पाठ जितना जिस साधुके जिस शास्त्रका कंठ याद रहा सो सर्व एकत्र करके कालिक श्रुत अंगादि और कितनाक पूर्व गत श्रुत किंचितमात्र रहा हुआ जोडके अंगादि घटन करे, इस वास्ते इसकों माथुरि वाचना कहते है कितनेक आचार्य ऐसे कहते है १२ वर्षके कालके वससें एक स्कंधिलाचार्यकों वर्जके शेष सर्वाचार्य मर गये थे. गीतार्थ अन्य कोइनी नही रहा था, परं सर्व

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शास्त्र भूलेतो नही थे, परंतु तिस कालमें इतनाही कंठ था, शेष अल्प बुद्धिके प्रभावसें पहिलांही भूल गया था, तिस स्कंधिलाचार्यके पीछे आठमे पाट और श्री वीरसें ३२ में पाट देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण हुए, तिनका वृत्तांत ऐसे जैन ग्रंथोमें लिखा है, सोरठ देशमें वेलाकूलपत्तनमें अरिदमन नामे राजा, तिसका सेवक काश्यप गोत्रीय कामर्द्धि नाम क्षत्रिय, तिसकी आर्या कलावती, तिनका पुत्र देवर्द्धिनामे, तिसने लोहित्य नामा आचार्यके पास दीक्षा लीनी, इग्यारे अंग और पूर्व गत ज्ञान जितना अपने गुरुकों आताथा, तितना पढ लिया, पीछे श्री पार्श्वनाथ अर्हंतकी पदावलिमे प्रदेशी राजाका प्रतिबोधक श्रीकेशी गणधरके पद परंपरामें श्री देवगुप्त सूरिके पासों प्रथम पूर्व पठन करा, अर्थसें, दूसरे पूर्वका मूल पाठ पढते हुए श्री देवगुप्त सूरि काल कर गये, पीछे गुरुने अपने पद उपर स्थापन करा. एक गुरुने गणि पद दीना, दूसरेने क्षमाश्रमण पद दीना, तब देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण नाम प्रसिद्ध हुआ. तिस समयमें जैन मतकै ५०० पांचसौ आचार्य विद्यमान थे, तिन सर्वमें देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण युगप्रधान और मुख्याचार्य थे, वे एकदा समय श्री शत्रुंजय तीर्थमें वज्रस्वामि प्रतिष्ठा हुइ. श्री ऋषभदेवकी पितलमय प्रतिमाकों नमस्कार करके कपर्दि यक्षकी आराधना करते हुए. तब कपर्दि यक्ष प्रगट होके कहने लगा, हे भगवान्, मेरे स्मरण करनेका क्या प्रयोजन है, तब देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमणजीने कहा, एक जिनशासनका काम है, सो यह है कि बारें वर्षी दुकालके गये, श्री स्कंधिलाचार्यने माथुरी वाचना करी है, तोभी कालके प्रभावसें साधुयोंकी मंद बुद्धिके होने से शास्त्र कंठसें भूलते जाते है. कालांतरमें सर्व भूल जावेंगे. इस वास्ते तुम साहाय्य करो. जिस्सें मै ताड पत्रो उपर सर्व पुस्तकों का लेख करुं, जिससें जैन सास्त्रकी रक्षा होवे. जो मंदबुद्धिवालाभी होवेगा सोभी पत्रों उपरि शास्त्राध्ययन कर सकेगा, तब देवतानें कहा मैं सान्निध्य करुंगा, परंतु सर्व साधुयोंकों एकठे करो और स्याही ताड पत्र बहुत संचित करो, लिखारियोंको बुलाउ, और साधारण द्रव्य श्रावकोंसें एकठा करावो, तब श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणनें पूर्वोक्त सर्व काम वल्लभीनगरीमें करा, तब पांचसौ आचार्य और वृद्ध गीतार्थोने सर्वांगोपांगादिकांके आलापक साधु लेखकोने लिखे, खरडा रुपसें, पीछे देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणजीने सर्व अंगोपांगो के आलापक जोड के पुस्तक रुप करे. परस्पर सूत्रांकी भुलावना जैसे भगवती मे जहा पन्नवणाए इत्यादि अति देशकरे सर्व शास्त्र शुद्ध करके लिखवाए. देवताकी सान्निध्यतासें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक वर्षमें एक कोटी पुस्तक १०००००० लिखे. आचारंगका महाप्रज्ञा अध्ययन किसी कारण सें न लिखा, परं देवार्द्धिगणि क्षमाश्रमणजी प्रमुख कोइभी आचार्यने अपनी मन कल्पनासें कुछभी नही लिखा है, इस वास्ते जैन शास्त्र सर्व सत्य कर मानने चाहिए । जो कोइ कोइ कथन समजमें नही आता है, सो यथार्थ गुरु गम्यके अभावसें, परं गणधरो के कथनमें किंचित् मात्रभी भूल नही है, और जो कुछ किसी आचार्यके भूल जाने सें अन्यथा लिखानी गया होवे तोभी अतिशय ज्ञानी विना कोन सुधार सके, इस वास्ते तहमेव सच्चंजं जिणेहिं पन्नत्तं, इस पाठके अनुयायी रहना चाहिये ।

प्र.७४. जैन मतमें जिसकों सिद्धांत तथा आगम कहते है, वै कौनसे कौनसे है, और तिनमे विषय क्या क्या है, और तिनके मूल पाठ १ निर्युक्ति २ भाष्य ३ चूर्णि ४ टीका ५ के कितने कितने ३२ बत्तीस अक्षर प्रमाण श्लोक संख्या है, यह संक्षेप सें कहो.

उ. इस कालमें किसी रुढिके सबबसें ४५ पैंतालीस आगम कहै जाते है, तिनके नाम और पंचांगीके श्लोक प्रमाण आगे लिखे हुए, यंत्रसें जान लेने और इनमें विषय विधेय इस तरेका है. आचारंगमें मूल जैन मतका स्वरूप और साधुके आचारका कथन है १ सूयगडांगमे तीनसौ ३६३ त्रेसठ मतका स्वरूप कथनादि विचित्र प्रकारका कथन है २ ठाणांगमें एकसें लेके दश पर्यंत जे जे वस्तुयो जगत में है तिनका कथन है ३. समवायांगमें एक सें लेके कोटाकोटि पर्यंत जे पदार्थ है तिनका कथन है ४. भगवतीमें गौतमस्वामीके करे हुए विचित्र प्रकारके ३६००० छत्तीस हजार प्रश्नोके उत्तर है. ५ ज्ञातामे धर्मी पुरुषोंकी कथा है ६ उपाशक दशामे श्री महावीर के आनंदादि दश श्रावकों के स्वरूपका कथन है ७. अंतरडमें मोक्षगये ९० नव्वे जीवांका कथन है ९. अणुत्तरोववाइमें जे साधु पांच अनुत्तर विमानमे उत्पन्न हुए हे, तिनका कथन है. ९ प्रश्नव्याकरणमें हिंसा १, मृषावाद २ चौंरी ३ मैथुन ४ परिग्रह ५ इन पांचो पापांका कथन और अहिंसा १, सत्य २, अचौरी ३, ब्रह्मचर्य ४, परिग्रह त्याग ५ इन पांचो संबरोका स्वरुप कथन कराहे. १० विपाक सूत्रमें दश दुःख विपाकी और दश सुख विपाकी जीवांके स्वरूपका कथन है ११ इति संक्षेपसें अंगाभिधेय उववाइमें २२ बावीस प्रकारके जीव काल करके जिस जिस जगें उत्पन्न होते है तिनका कथनादि, कोणककी वंदना विधि महावीर की धर्म देशनादिका कथन है. १ राजप्रश्नीयमें प्रदेशी राजा नास्तिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मतीका प्रतिबोधक केशी गणधरका और देव विमानादिकका कथन है. २ जीवाभीगममें जीव अजीवका विस्तारमें चमत्कारी कथन करा है. ३ पन्नवणामें ३६ बत्तीस पदमे बत्तीस वस्तुका बहुत विस्तारमें कथन है. ४ जंबुद्वीप पन्नत्तिमें जंबूद्वीपादिका कथन है. ५ चंद्रप्रज्ञप्ति, सूर्यप्रज्ञप्तिमें ज्योतिष चक्रके स्वरुपका कथन है, ६, ७ निरावलिकामें कितनेक नरक स्वर्ग जाने वाले जीव और राजायोंकी लडाइ आदिकका कथन है. ८।९।१०।११।।१२ आवश्यकमें चमत्कारी अति सूक्ष्म पदार्थ नय निक्षेप ज्ञान इतिहा सादिका कथन है, १ दशवैकालिकमें साधुके आचारका कथन है २ पिंडनिर्युक्तिमें साधुके शुद्धाहारादिकके स्वरूपका कथन है ३ उत्तराध्ययनमेंतो बत्तीस अध्ययनोमें विचित्र प्रकारका कथन करा है ४ छहों छेद ग्रंथोमें पद विभाग समाचारी प्रायश्चित्त आदिका कथन है ६ नंदीमे ५ पांच ज्ञानका कथन करा है. १ अनुयोगद्वारमें सामायिकके उपर चार अनुयोगद्वारमें सामायिकके उपर चार अनुयोगद्वारोंसें व्याख्या करी है २ चउसरण में चारसरणेका अधिकार है १, रोगीके प्रत्याख्यानकी विधी २, अनशन करणेकी विधि ३, बडे प्रत्पाख्यानके करणेका स्वरूप ४, गर्भादिका स्वरूप ५, चंद्र बेध्यका स्वरूप ६, ज्योतिषका कथन ७, मरणके समय समाधिकी रीतिका कथन ८, इंद्रोंके स्वरूपका कथन ९, गच्छाचारमें गच्छका स्वरूप, १० और संस्थारपइन्नेमें संथारेकी महिमाका कथनहै, यह संक्षेपसें पैंतालीस आगममें जो कुछ कथन करा है, तिसका स्वरूप कहा, परंतु यह नही समझ लेनाके जैन मतमें इतनेही शास्त्र प्रमाणिक है, अन्य नही, क्योंकि उमास्वाति आचार्यके रचे हुए, ५०० प्रकरण है, और श्री महावीर भगवंतका शिष्य श्री धर्मदासगणि क्षमाश्रमणजीकी रची हुइ उपदेशमाला तथा श्री हरिभद्र सूरिजीके रचे १४४४ चौदहसौ चौतालीस शास्त्र इत्यादि प्रमाणिक पूर्वधरादि आचार्योंके कर्मप्रकृति शतकादि हजारोही शास्त्र विद्यमान है, वे सर्व प्रमाणिक आगम तुल्य है, राजा शिवप्रसादजीने अपने बनाए इतिहास तिमर नासकमें लिखा है. बुलरसाहिबने १५०००० देढ लाख जैन मतके पुस्तकोंका पता लगाया है, और यहभी मनमें कुविकल्प न करना के यह शास्त्र गणधरोंके कथन करे हुए है, इस वास्ते सच्चे है, अन्य सच्चे नही, क्योंके सुधर्मस्वामीने जैसे अंग रचेथे वैसेतो नही रहे है. संप्रति कालके अंगादि सर्व शास्त्र स्कंधिलादि आचार्योंने वांचना रूप सिद्धांत वांथे है, इस वास्ते पूर्वोक्त आचार्योंके रचे प्रकरण सत्य करके मानने, यही कल्याणका हेतु है.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंक.	सूत्र नामा नि.	सूत्र मूल संख्या	निर्युक्ति	भाष्यं	चूर्णिः	टीका.	सर्वसंख्या
				अथांगानि			
१	आचारांग मूत्रं	२५००	४५०	०	८३००	१२०००	२३२५०
२	सूयगडांग सूत्रं	२१००	२५०	०	१००००	१२८५०	२५२००
३	ठाणंगसूत्रं	३७७५	०	०	०	१५२५०	१९०२५
४	समवायांग सूत्रं	१६६७	०	०	४००	३७७६	५८४३
५	भगवती सूत्रं	१५७५२	०	०	४०००	१८६१६	३८३६८
६	ज्ञाताधर्म कथा सूत्रं	६०००	०	०	०	४२५२	१०२५२
७	उपाशक दशांग सूत्रं	८१२	०	०	०		
८	अंतगड सूत्रं	७९०	०	०	०	१३००	३०९४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९	अनुत्तरोववाइ सूत्रं.	१९२	०	०	०		
१०	प्रश्न व्याकरण सूत्रं.	१२५०	०	०	०	४६००	५८५०
११	विपाक श्रु तांग सूत्रं	१२१६	०	०	०	९००	२११६

अथोपांगानि

१ १२	उववाइ सूत्रं.	११६७	०	०	०	३१२५	४२९२
२ १३	राजप्रश्नीय सूत्रं	२०७८	०	०	०	६०००	८०७८
३ १४	जीवाभिगम सूत्रं	४७००	०	०	१५००	१३००० टिप्पन ११००	२०३००
४ १५	पन्नवणा सूत्रं	७८००	०	०	०	लघु ३७२८ वृहत् १४०००	२५५२८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५ १६	जंबूद्वीप पन्नत्ति सूत्रं	४१४६	०	०	१८६०	१६०००	२२००६
६ १७	चंद पन्नत्ति सूत्रं	२२००	०	०	०	९११४	११३१४
७ १८	सूर्य पन्नत्ति सूत्रं निरावलि या सुयखंध सूत्रं	२२००	०	०	०	९०००	११२००
८ १९	कप्पिया सूत्रं						
९ २०	कप्पवडंसिया सूत्रं	११०९	०	०	०	७००	१८०९
१० २१	पुप्फिया सूत्रं						
११ २२	पुप्फचूलि या सूत्रं						
१२ २३	वन्हिदशांग सूत्रं						

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१ २४	आवश्यकं.	१००	३१००	०	१८०००	२२००० टिप्पन ४६००	४७८००
	विशेषावश्यकं	५०००	०	०	०	लघु १४००० वृहत् २८०००	४७०००
	पाक्षिकं सूत्रं ओघनिर्युक्तिः	३०० ११७०	० ०	० ३०००	४०० ७००	२७०० ७८००	३४०० ११८७०
२ २५	दशवैकालिकं सूत्रं	७००	४५०	०	७०००	लघु २७०० हत् ६८१०	१७६६०
३ २६	पिंडनिर्युक्तिः	७००	०	०	०	लघु ४००० हत् ७०००	११७००
४ २७	उत्तराध्ययन सूत्रं	२०००	५००	०	६०००	लघु १२००० हत् १७६४५	३८१४५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अथ छेद सूत्राणि

१ २८	दशाश्रुतस्कंध सूत्रं	१८३०	१६८	०	२२२५	०	४२२३
२ २९	बृहत्कल्प सूत्रं	४७३	०	लघु ८००० बृहत् १२०००	१४००० विशेष ११०००	४२०००	८७४७३
३ ३०	व्यवहार सूत्रं	६००	०	६०००	१०३६१	३३६२५	५०५८६
४ ३१	पंचकल्प सूत्रं	११३३	०	३१२५	३१३०	०	७३८८
	जीतकल्प सूत्रं	२०५	०	३१२४	१००० विशेषचूर्णि ११०००	७०००	२२३२९
५ ३२	निशिथसूत्रं	८१५	०	लघु ७४०० षृहत् १२०००	२८०००	०	४८२१५

६ ३३	महानिशिथ.	लघुवांचना ३५००		मध्यम वांचना ४२००		वृहद्वांचना ४५००	१२२००

पइन्ना सूत्राणि

१ ३४	चतु:शरण सूत्रं	६४	०	०	०	०	६४
२ ३५	आनुरप्रत्याख्यानं सूत्रं	८४	०	०	०	०	८४
३ ३६	भक्तपरिज्ञा सूत्रं	१७१	०	०	०	०	१७१
४ ३७	महाप्रत्याख्यानं सूत्रं	१३४	०	०	०	०	१३४
५ ३०	तंदुलवेयालीय सूत्रं	४००	०	०	०	०	४००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६ ३९	चंद्रवेध्यक सूत्रं	१७६	०	०	०	०	१७६
७ ४०	गणिविद्या सूत्रं	१००	०	०	०	०	१००
८ ४१	मरणसमाधि सूत्रं	६५६	०	०	०	०	६५६
९ ४२	देवेंद्र स्तव सूत्रं वीर स्तव सूत्रं	२००	०	०	०	०	२००
१० ४३	गच्छाचार सूत्रं संस्तारक सूत्रं	१३० १२२	० ०	० ०	० ०	० ०	१३० १२२
	चूलिका सूत्रं	रुषिभाषित सूत्र	ज्योतिस्क करंड सूत्र	सिद्धप्राभृत सूत्र	वसुदेवहिंडि प्रथम	मध्यमखंड १८०००	तीर्थोडार सूत्र १५००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

		७००	१८५०	१३३५	खंड ११०००	द्वीपसागर पन्नत्ति २५००	अंगविद्या ९००० ये भी ४५ के अं तरभूतही है
१ ४४	नंदि सूत्रं	७००	०	०	२००१	लघु २३१२ बृहत् ७७३५	१२७४८
२ ४५	अनुयोगद्वार सूत्रं	१८९९	०	०	३०००	लघु ३५०० बृहत् ६५००	१४८९९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.७५ श्री देबर्धिगणि क्षमाश्रमणसें पहिलां जैन मतका कोइ पुस्तक लिखा हुआ था के नही.

उ. अंगोपांगादि शास्त्रतो लिखे हुए नही मालुम होते है, परंतु कितनेक अतिशय अद्भुत चमत्कारी विद्याके पुस्तक और कितनीक आम्नायके पुस्तक लिखे हूए मालुम होते है, क्योंकि विक्रमादित्यके समयमें श्री सिद्धसेन दिवाकर नामा जैनाचार्य हुआ है, तिनोंनें चित्रकुटके किल्लेमें एक जैन मंदिर में एक बडा भारी एक पथरका बीचमे पोलाडवाला स्तंभ देखा, तिसमे श्री सिद्धसेनसें पहिले होगए कितनेक पूर्वधर आचार्योंने विद्यायोंके कितनेक पुस्तक स्थापन करेथे, तिस स्तंभका ढांकणा ऐसी किसी उषधीके लेपसें बंद करा था कि सर्व स्तंभ एक सरीषा मालुम पडताथा, तिस स्तंभका ढांकणा श्री सिद्धसेन दिवाकरकों मालुम पडा, तिनोंने किसीक औषधीका लेप करा तिससें स्तंभका ढांकणा खुल गय. जब पुस्तक देखनेकों एक निकाला तिसका एक पत्र वांच्या, तिसके उपर दो विद्या लिखी हूइथी. एक सुवर्ण सिद्धी १ दूसरी पर चक्र सैन्य निवारणी २ इन दोनो विद्यायोंके बांचे पीछे जब आगे बांचने लगे तब तिन विद्यायोंके अधिष्ठाता देवताने श्री सिद्धसेन कों कहा कि आगे मत वांचो, तुमारे भाग्य में ये दोही विद्या है। तब श्री सिद्धसेन दिवाकरजीनें स्तंभका मुख बंद करा. वो एक पुस्तक अपने पास रखा, पीछे तिस पुस्तक कों उज्जयन नगरीके श्री आवंती पार्श्वनाथजीके मंदिर मे गुप्तपणे कही रख दीया. पीछे वो पुस्तक श्री जिनदत्तसूरिजी महाराज जो विक्रम संवत् १२०४ में थे तिनकों तिस मंदिरमें से मिला. अब वोही पुस्तक जैसलमेरके श्री चिंतामणि पार्श्वनाथजीके मंदिर मे बडे यत्नसें रखा हुआ है, ऐसा हमने सुना है और चित्रकुटका स्तंभ भूमिमें गरक हो गया, यह कथन कितनेक पट्टावलि प्रमुख ग्रंथोंमें लिखा हुआ है. इस वास्ते श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणसें पहिलांनी कितनेक पुस्तक लिखे हुए मालुम होते है।

प्र.७६. श्री महावीरजीके समय में कितने राजे श्री महावीरके भक्त थे।

उ. राजगृहका राजे श्रेणिक जिसका दूसरा नाम बंभसार था, १ चंपाका राजा बंभसारका पुत्र अशोकचंद्र जिसका नाम कोणिक प्रसिद्ध था, २ वैशालिनगरीका राजा चेटक, ३ काशी देशके नव मल्लिक जाति के राजे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और कोशल देशके नव मल्लिक जातिके राजे २१ पुलासपुरका विजयनामा राजा २२ अमलकल्पा नगरीका श्वेतनामा राजा, २३ वीतभय पटनका उदायन राजा २४, कौशांबीका उदायन वत्सराजा, २५, क्षत्रियकुंड ग्राम नगरका नंदिवर्धन राजा, २६ उज्जयनका चंदप्रद्योत राजा, २७ हिमालय पर्वतके उत्तर तर्फ पृष्टचंपाके शाल महाशाल दो भाइ राजे २८ पोतनपुरका प्रसन्नचंद्र राजा, २९ हस्तिशीर्ष नगरका अदिनशत्रु राजा, ३० ऋषभपुरका धनावह नामा राजा, ३१ वीरपुर नगरका वीरकृश्न मित्र नामा राजा, ३२ विजयपुरका वासवदत्त राजा, ३३ सोगंधिक नगरीका अप्रतिहत नामा राजा, ३४ कनकपुरका प्रियचंद्र राजा, ३५ महापुरका बलनामा राजा, ३६ सुघोस नगरका अर्जुन राजा, ३७ चंपाका दत्त राजा, ३८ साकेतपुरका मित्रनंदी राजा ३९ इत्यादि अन्यभी कितनेक राजे श्री महावीरके भक्त थे, येह सर्व राजायोंके नाम अंगोपांग शास्त्रोमें लिखे हुए है ।

प्र.७७. जो जो नाम तुमने महावीर भगवंतके भक्त राजायोंके लिखे है, बौद्धमतके शास्त्रोंमें तिनही सर्व राजायोंकों बौद्धमति लिखा है, तिसका क्या कारण है ।

उ. जितने राजे श्री महावीर भगवंत के भक्त थे, तिन स्वकों बौद्धशास्त्रोंमें बौद्धमति अर्थात् बुधके भक्त नहि लिखे है, परंतु कितने क राजायों का नाम लिखा है, तिसका कारणतो ऐसा मालुम होता है कि पहिलें तिन राजायोंने बुधका उपदेश सुनके बुधके मतकों माना होवेगा, पीछे श्री महावीर भगवंतका उपदेश सुनके जैनधर्ममें आये मालुम होते है, क्योंकि श्री महावीर भगवंत सें १६ वर्ष पहिलें गौतम बुधने काल करा, अर्थात् गौतम बुधके मरण पीछे श्री महावीरस्वामी १६ वर्ष तक केवलज्ञानी विचरे थे, तिनके उपदेशमें कितनेक बौद्ध राजायोंने जैन धर्म अंगीकार करा, इस वास्ते कितनेक राजायों का नाम दोनो मतोमें लिखा मालुम होता है ।

प्र. ७८. क्या महावीर स्वामीसें पहिलां भरतखंडमें जैनधर्म नही था ?

उ. श्री महावीर स्वामीसें पहिलां भरत खंडमें जैनधर्म बहुत कालसें चला आता था, जिस समयमें गौतम बुधने बुध होनेका दावा करा, और अपना धर्म चलाया था, तिस समयमें श्री पार्श्वनाथ २३मे तीर्थंकरका शासन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चला था, तिनके केशी कुमार नामे आचार्य पांचसो ५०० साधुयों के साथ विचरते थे, और केशी कुमारजी गृहवासमें उज्जायिनिका राजा जयसेन और तिसकी पटराणी अनंगसुंदरी नाम तिनके पुत्र थे, विदेशि नामा आचार्यके पास कुमार ब्रह्मचारीने दीक्षा लीनी, इस वास्ते केशी कुमार कहे जाते है, श्री पार्श्वनाथके बडे शिष्य श्री शुभदत्तजी गणधर १ तिनके पद उपर श्री आर्यसमुद्र ३, तिनके पद उपर श्री केशी कुमारजी हुए है, जिनोंने श्वेतंबिका नगरीका नास्तिकमति प्रदेशी नामा राजेकों प्रतिबोधके जैनधर्मी करा, और श्री महावीरजीके बडे शिष्य इंद्रभूति गौतमके साथ श्रावस्ति नगरीमें श्री केशी कुमार मिले तहां गौतम स्वामीके साथ प्रश्नोत्तर करके शिष्यों का संशय दूर करके श्री महावीरका शासन अंगीकार करा तथा श्री पार्श्वनाथजीके संतानो मेंसे कालिक पुत्र १ मैथिली २ आनंदरक्षित ३ काश्यप ४ ये नामके चार स्थविर पांचसौ साधुयोंके साथ तुंगिका नगरीमें आये तिस समयमें श्री महावीर भगवंत इंद्रभूति गौतमादि साधुयोंके साथ राजगृह नगरमें विराजमान थे, तथा साकेतपुरका चंद्रपाल राजा तिसकी कलासवेश्या नामा राणी तिनका पुत्र कलासवैशिक नामे तिसने श्री पार्श्वनाथके संतानीये श्री स्वयंप्रभाचार्यके शिष्य वैकुंठाचार्यके पास दीक्षा लीनी. पीछे राजगृहनगरमें श्री महावीरके स्थविरोसें चर्चा करके श्री महावीरका शासन अंगीकार करा इसीतरे पार्श्वसंतानीये गंगेय मुनि तथा उदकपेडाल पुत्र मुनिने श्री महावीरका शासन अंगीकार करा. इन पूर्वोक्त आचार्योके समयमे वैशालि नगरीका राजा चेटकादि और क्षत्रियकुंडनगरके ज्ञातवंशी काश्यप गोत्री सिद्धार्थ राजादि श्रावक थे, और त्रिसलादि श्राविकायो थी. बुधधर्मके पुस्तकमें विशालि नगरीके राजाकों बुधके समय में पाषंड धर्मके मानने वाला अर्थात् जैनधर्म के मानने वाला लिखा है, और बुधधर्मके पुस्तकमें ऐसान लिखा है कि एक जैन धर्मी बडे पुरुषकों बुधने अपने उपदेशसें बौद्ध धर्मी करा, इस वास्ते श्री महावीरसें पहिलां जैनधर्म भरतखंडमें श्री पार्श्वनाथके शासनसें चलता था ।

प्र.८९. श्री महावीरजीसें पहिले तेवीसमें तीर्थंकर श्री पार्श्वनाथजी हुए है इस कथनमें क्या प्रमाण है.

उ. श्री पार्श्वनाथजीसें लेके आजपर्यंत श्री पार्श्वनाथकी पद परंपरामें ८३ तैरासी आचार्य हुए है, तिनमेंसे सर्वसें पिछला सिद्ध सूरि नामे आचार्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सांप्रति कालमें मारवाडमें विचरे है, हमने अपनी आंखोसें देखा है, जिसकी पट्टावलि आज पर्यंत विद्यमान है, तिस पार्श्वनाथजीके होने मे यही प्रत्यक्ष और अनुमान प्रमाण बलवंत है ।

प्र.८०. कौ जाने किसी धूर्त्तनें अपनी कल्पनासें श्री पार्श्वनाथ और तिनकी पद परंपराय लिख दीनी होवेगी, इससे हमकों क्योंकर श्री पार्श्वनाथ हुए निश्चित होवें ?

उ. जिन् जिन आचार्योंके नाम श्री पार्श्वनाथजीसें लेके आज तक लिखे हुए है, तिनोमें से कितनेक आचार्योंने जो जो काम करेहे वे प्रत्यक्ष देखनेमें आते है जैसें श्री पार्श्वनाथजीसें छठे ६ पट्ट उपर श्री रत्नप्रभसूरिजीने वीरात् ७० वर्ष पीछे उपकेश पट्ट में श्री महावीर स्वामीकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा करी सो मंदिर और प्रतिमा आज तक विद्यमान है, तथा अयरणपुरकी बावनीसें ६ कोसके लगभग कोरंटनामा नगर उज्जड पडा है, जिस जगो कोरटा नामें आजके कालमें गाम वसता है, तहांभी श्री महावीरजीकी प्रतिमा मंदिरकी श्री रत्नप्रभ सूरिजीकी प्रतिष्ठा करी हुइ अब विद्यमान कालमें सो मंदिर खडा है, तथा उसंवाल और श्रीमाणि जो बणिये लोकोंमें श्रावक ज्ञाति प्रसिद्ध है, वेभी प्रथम श्री रत्नप्रभसूरिजी नेही स्थापना करी है, तथा श्री पार्श्वनाथजीसें १७, सत्तरमें पट्ट उपरि श्री यक्षदेव सूरि हुए है, वीरात ५८५ वर्षे जिनोनें बारा वर्षीय कालमें वज्रस्वामीके शिष्य वज्रसेन के परलोक हुए पीछे तिनके चार मुख्य शिष्य जिनकों वज्रसेनजीने सोपारक पटणमें दीक्षा दीनी थी, तिनके नामसे चार शाखा तथा कुल स्थापन करे, वे ये है, नागेंद्र १, चंद्र २, निवृत्त ३ विद्याधर ४. यह चारों कुल जैन मतमें प्रसिद्ध है, तिनमें से नागेंद्र कुलमें उदयप्रभ मल्लिषेणसूरि प्रमुख और चंद्रकुलमें वड, गच्छ, तप गच्छ, खरतर गच्छ, पूर्णवल्लीय गच्छ, देवचंद्रसूरि कुमारपालका प्रतिबोधक श्री हेमचंद्रसूरि प्रमुख आचार्य हुए है, तथा निवृत्तकुलमें श्री शीलांकाचार्य श्री द्रोणसूरि प्रमुख आचार्य हुए है, तथा विद्याधरकुलमें १४४४ ग्रंथका कर्त्ता श्री हरिभद्रसूरि प्रमुखाचार्य हुए है, तथा मैं इसग्रंथका लिखने वाला चंद्रकुलमें हुं, तथा पैंतीसमें पट्ट उपर श्री देवगुप्तसूरिजी हुए है, जिनोंके समीपे श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणजीने पूर्व २ दो पढे थे, तथा श्री पार्श्वनाथजीके ४३ मे पट्ट उपर श्री कक्कसूरि पंच प्रमाण ग्रंथके कर्त्ता हुए है, सो ग्रंथ विद्यमान है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तथा ४ मे पट्ट उपर श्री देवगुप्तसूरिजी विकमात् १०७२ वर्षे नवपद प्रकरणके कर्ता हुए है, सोभी ग्रंथ विद्यमान है, तथा श्री महावीरजीकी परंपराय वाले आचार्योने अपने बनाए कितनेक ग्रंथोमें प्रगट लिखा है कि, जो उपकेश गच्छ है सो पद परंपरायसें श्री पार्श्वनाथ २३ तेवीसमें तीर्थंकरसें अविच्छिन्न चला आता है, जब जिन आचार्योका प्रतिमा मंदिरकी प्रतिष्ठा करी हुइ और ग्रंथ रचे हुए विद्यमान है तो फेर तिनके होने में जो पुरुष संशय करता है तिसकों अपने पिता, पितामह, प्रपितामह आदिकी वंशपरंपरामेभी संशय करनां चाहिये, जैसे क्या जाने मेरी सातमी पेढीका पुरुष आगे हुआ है के नही. इस तरेंका जो संशय कोइ विवेक विकल करे तिसकों सर्व बुद्धिमान् उन्मत्त कहेंगे. इसी तरें श्रीपार्श्वनाथकी पद परंपरायके विद्यमान जो पुरुष श्री पार्श्वनाथ २३ तेवीसमें तीर्थंकरके होनेमे नही करे अथवा संशय करे तिसकोंनी प्रेक्षावंत पुरुष उन्मत्तोहीकी पंक्तिमे समझते है, तथा धूर्त्त पुरुष जो काम करता है सो अपने किसी संसारिक सुखके वास्ते करता है. परंतु सर्व संसारिक इंद्रिय जन्य सुखसे रहित केवल महा कष्ट रूप परंपराय नही चला सक्ता है, इस रास्ते जैनधर्मका संप्रदाय धूर्त्तका चलया हुआ नही, किंतु अष्टादश दूषण रहित अर्हंतका चलाया हुआ है.

प्र.८१. कितनेक यूरोपीअन पंकित प्रोफेसर ए. वेबर साहिबादि मनमे ऐसी कल्पना करते है कि, जैन मतकी रीती बुध धर्मके पुस्तकों के अनुसारे खडी करी है. प्रोफेसर वेबर ऐसेभी मानते है कि, बौध धर्मके कितने साधु बुधकों ना कबूल करके बुधके एक प्रतिपक्षीके अर्थात् महावीरके शिष्यबनें और एक वार्त्ता नवीन जोड के जैनमत नामे मत खडा करा, इस कथनकों आप सत्य मानते होके नहीं ?

उ. इस कथनकों हम सत्य नहीं मानते है, क्योंकि प्रोफेसर जेकोबीने आचारंग और कल्पसूत्रके अपने करे हुए इंग्लीश भाषांतरकी उपयोगी प्रस्तावनामें प्रोफेसर ए. वेबर और मी० ए. वार्थकी पूर्वोक्त कल्पनाकों जूठी दिखाइहै, ओर प्रोफेसर जेकोबीने यह सिद्धांत अंतमे बताया है कि जैन मतके प्रतिपक्षीयोंने जैन मतके सिद्धांत शास्त्रों उपर भरोंसा रखनां चाहिये, कि इनमें जो कथन है सो मानने लायक है. विशेष देखनां होवे तो डाफ्त बूलरसाहिब कृत जैन दंतकथा की सत्यता वास्ते एक पुस्तकका अंतर हिस्सा भाग है, सो देख

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लेनां. हमभी अपनी बुद्धिके अनुसारे इस प्रश्नकां उत्तर लिखते है. हम उपर जैनमतकी व्यवस्था श्री पार्श्वनाथजीसें लेके आज तक लिख आए है, तिससें प्रोफेसर ए. वेबरका पूर्वोक्त अनुमान सत्य नही सिद्ध होता है. जेकर कदाचित् बौध मतके मूल पिडग ग्रंथोमें ऐसा लेख लिखा हुआ होवेकि, बुधके कितनेक शिष्य बुधकों नाकबूल करके बुधके प्रतिपक्षी निर्ग्रंथोके सिरदार न्यात पुत्रके शिष्य बने, तिनोंने बुधके समान नवीन कल्पना करके जैनमत चलाया है. जेकर ऐसा लेख होवे तबतो हमकोंभी जैनमतकी सत्यता विषे संशय उत्पन्न होवे, तबतो हमभी प्रोफेसर ए. वेबरके अनुमानकी तर्फ ध्यान देवें, परंतु ऐसा लेख जुता बुधके पुस्तकोंमे नही है क्योंकि बुधके समयमे श्री पार्श्वनाथजी के हजारों साधु विद्यमान थे तिनके होते हुए ऐसा पुर्वोक्त लेख कैसें लिखा जावे, बलके जैन पुस्तकोंमें तो बुधकी बाबत बहुत लेख है, श्री आचारंगकी टीकामें ऐसा लेख है. मौद्गलिस्वातिपुत्राभ्यां शौद्धोंदनिं ध्वजीकृत्य प्रकाशितः अस्यार्थ ।। मौद्गलिपुत्र अर्थात् मौद्गलायन और स्वातिपुत्र अर्थात् सारीपुत्र इन दोनोंने श्रुद्धौदनके पुत्रकों ध्वजीकृत्य अर्थात् ध्वजाकी तरें सर्व मताध्यक्षोंसे अधिक ऊंचा सर्वोत्तम रूप करके प्रकाश्याहै. आचारांगके लेख लिखनेवालेका यह अभिप्राय है कि श्रुद्धौदनका पुत्र सर्वज्ञ अतिशयमान् पुरुष नही थी, परंतु इन दोनों शिष्योंने अपनी कल्पनासें सर्रसें उत्तम प्रकाशित करा, इस वास्ते बौद्धमत स्वरुचिसें बनाया है, तथा श्री आचारंगजीकी टीकामें एक लेख ऐसाभी लिखा है. तच्चनिकोपासकोनेंदबलात्, बुद्धोत्पत्ति कथानकात् द्वेषमुपगच्छेत्. अर्थ बुधका उपासक आनंद तिसकी बुद्धिके बलसें बुधकी उत्पत्ति हुइ है, जेकर यह कथा सत्सत्य पर्षदामें कथन करीयेतो बौद्धमतके मानने वालोंकों सुनके द्वेष उत्पन्न होवे, इस वास्ते जिस कथा के सुनने सें श्रोताकों द्वेष उत्पन होवे तैसी कथा जैनमुनि परिषदामें न कथन करे, इस लेखसें यह आशय निकलता है कि बुधकी उत्पत्तिरूप सच्ची कथा बुधकी सर्वज्ञता और अति उत्तमता और सत्यता और तिसकी कल्पित कथाकी विरोधनी है, नहीतो तिसके भक्तोकों द्वेष क्यों कर उत्पन्न होवे, इस वास्ते जैन मत इस अवसर्पिणिमे श्री ऋषभदेवजीसें लेकर श्री महावीर पर्यंत चौवीस तीर्थंकरोंका चलाया हुआ चलता है, परंतु कल्पित नही है.

प्र.९२. बुद्धकी उत्पतिकी कथा आपने किसी श्वेतांबरमतके पुस्तको में बांची है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उ. श्वेतांबरमतके पुस्तकोमें तो जितना बुधकी बाबत कथन हमने श्री आचारंगजीकी टीकामें देखा बांचा है तितनातो हमने उपरके प्रश्नमें लिखा दीया है, परंतु जैनमतकी दुसरी शाखा जो दिगंबरमतकी है तिसमे एक देवसेनाचार्यने अपने रचे हुए दर्शनसार नामक ग्रंथमे बुधकी उत्पत्ति इस रीतीसें लिखी है. गाथा ।। सिरि पासणाह तित्थे ।। सरक्त तीरे पलासणयर त्थे ।। पिहि आसवस्स सीहे ।। महा लुदो बुद्धकित्ति मुणी ।।१।। तिमिपूरणासणेया ।। अहिगयपवड्वउपरमनते ।। रत्तंबरंधरित्ता ।। पवड्वियतेणएयतं ।।२।। मंसस्सनत्थिजीवो ।। जहाफलेदहियउद्धसक्कराए ।। तम्हातंमुणित्ता ।। भरकंतोणत्थिपाविको ।।३।। मंगएवड्गणिंग ।। दव्वदवंजहजलंतहएदं ।। इतिलोएघोसिता ।। पवत्तियंसंघसावं ।।४।। अणोकरेदिकम्मं ।। अणोतंनुंजदीदिसिद्धंतं ।। परिकप्पिउणणूणं ।। वसिकिच्चाणिरयमुववणो ।।५।। इति इनकी भाषा अथ बौद्धमतकी उत्पत्ति लिखते है. श्री पार्श्वनाथके तीर्थमे सरयू नदीके कांते उपर पलासनामे नगर में रहा हुआ, पिहिताश्रव नामा मुनिका शिष्य बुद्धकीर्ति जिसका नाम था, एकदा समय सरयू नदीमें बहुत पानीका पूर चढि आया तिस नदीके प्रयाहमें अनेक मरे हुए मच्छ वहते हुए कांठे उपर आ लगे, तिनको देखके तिस बुद्धकीर्त्तिने अपने मनमें ऐसा निश्चय कराकि स्वतः अपने आप जो जीव मर जावे तिसके मांस खानेमे क्या पाप है, तब तिसने अंगीकार करी हुइ प्रवज्याव्रत रूप छोड दीनी, अर्थात् पूर्वे अंगीकार करे हुए धर्मसें भ्रष्ट होके मांस भक्षण करा और लोकों के आगे ऐसा अनुमान कथन कराकी मांस में जीव नही है, इस वास्ते इसके खानें मे पाप नही लगता है. फल, दुध, दहिं तरें तथा मदीरा पीने में भी पाप नही है. ढीला द्रव्य होने सें जलवत्. इस तरेंका प्ररूपणा करके तिसने बौद्धमत चलाया, और यह भी कथन करा के सर्व पदार्थ क्षणिक है, इस वास्ते पाप पुन्यका कर्त्ता अन्य है, और भोक्ता अन्य है. यह सिद्धांत कथन करा बौद्धमतके पुस्तको में ऐसानी लेका हो कि, बुधका एक देवदत्तनामा शिष्य था, तिसने बुधके साथ बुधकों मांस खाना छुडाने के वास्ते बहुत उगका करा, तोभी शाक्यमुनि बुधनें मांस खाना न छोड, तब देवदत्तने बुधकों छोड दीया, अब बुधने काल करा था, तिस दिननी चंदनामा सोनीके घरसें चावलोंके बीच सूयरका मांस रांधा हुआ खाके मरणको प्राप्त हुआ. यह कथनभी बुधमतके पुस्तकों में है, और श्वेतांबराचार्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साढेतीन करोड नवीन श्लोकोंका कर्त्ता श्री हेमचंद्रसूरिजीने अपने रचे हूए योगशास्त्रके दूसरे प्रकाशकी वृत्तिमें यह श्लोक लिखा है। स्वजन्मकालएवात्म, जनन्युदरदारिणः मांसोपदेशदातुश्च, कथंशौद्धोदनेर्दया ॥११॥ अर्थ। अपने जन्म काल में ही अपनी माता मायाका जिसनें उदर विदारण करा तिसके, और मांस खानेके उपदेशके देनेवाले शुद्धोदनके पुत्रके दया कहांसे थी, अपितु नही थी. इस उपरके श्लोकसें यह आशय निकलता है कि जब बुध गर्भमें था, तब तिसके सबबसें इसकी माता का उदर फट गया था, अथवा उदर विदारके इसकों गर्भमें सें निकाला होवेगा. चाहो कोइ निमित्त मिला होवे, परंतु इनकी माता इनके जन्म देनेसें तत्काल मरगइ थी. तत्काल मरणांतो इनकी माताका बुद्ध धर्मके पुस्तकोमेंनी लिखा है. और बुद्ध मांसाहार गृहस्थावस्थामेंभी करता होवेगा, नहीतो मरणांत तकभी मांसके खानेसें इसका चित्त तृप्तही न हुआ ऐसा बौद्ध मतके पुस्तकों सें ही सिद्ध होता है, इस वास्ते ही बौद्धमतके साधु मांस खाने मे घृणा नही करते है, और बेखटके आज तक मांस भक्षण करे जाते है, परंतु कच्चे मांसमें अनगिनत कृमि समान जीव उत्पन्न होते है, वे जीव बुधकों अपने ज्ञानसें नही दीखे है, इस वास्तेही बुध मतके उपासक गृहस्थ लोक अनेक कृमि संयुक्त मांसकों रांधते है और खाते है. इस मतमें मांसखानेका निषेध नही है, इस वास्तेही मांसाहारी देशोंमें यह मत चलता है।

प्र.८३. श्री महावीरजी छद्मस्थ कितने काल तक रहे और केवली कितने वर्ष रहे ?

उ. बारां वर्ष १२ व ६ मास १५ पंदरा दिन छद्मस्थ रहे, और तीस वर्ष केवली रहे है.

प्र.८४. भगवंतने छद्मस्थावस्थामें किस जगे चौमासे करे, और केवली हुए पीछे किस किस जगे चौमासे करे थे ?

उ. अस्थि ग्राममें १, दूसरा राजगृहमें २, तीसरा चंपामे ३, चौथा पृष्ठ चंपामें ४, पांचमा भद्रिकामे ५, छठा भद्रिकामें ६, सातमा आलभियामे ७, आठमा राजगृह मे ८, नवमा अनार्यदेशमे ९, दशमा सावस्तीमे १०, इग्यारमा विशालामे ११, बारमा चंपामे १२, येह १२, छद्मस्थावस्थाके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चौमासे करे केवली हुए. पीछे १२ राजगृह में ११ विशालामें ६ मिथलामें १ पावापुरीमें एवं सर्व ३० हुए.

प्र.८५. श्री महावीरस्वामीका निर्वाण किस जगें और कब हुआ था ?

उ. पावापुरी नगरी के हस्तिपाल राजा की दफतर लिखनेकी सभामें निर्वाण हुआ था, और विक्रम सें ४७० वर्ष पहिलें और संप्रति कालके १८४५ के सालसें २४१५ वर्ष पहिलें निर्वाण हुआ था.

प्र.८६. जिस दिन भगवंतका निर्वाण हुआ था सो कौनसा दिन वा रात्रिथी ?

उ. भगवंतका निर्वाण कार्त्तिक वदि अमावस्याकी रात्रिके अंतमें हुआ था।

प्र.८७. तिस दिन रात्रिकी यादगीरी वास्तके कोइ पर्व हिंदुस्थानमें चलता है वा नही ?

उ. हिंदु लोकमें जो दिवालीका पर्व चलता है, सो श्री महावीरके निर्वाणके निमित्तसेंही चलता है।

प्र.८८. दिवालिकी उत्पत्ति श्री महावीरके निर्वाणसें किसतरें प्रचलित हुइ है ?

उ. जिस रात्रि में श्री महावीरका निर्वाण हुआ था, तिस रात्रिमें नव मल्लिक जातिके राजे और नव लेउकी जातिके राजे जो चेटक महाराजा के सामंत थे, तिनोने तहां उपवास रूप पोषध करा था, जब भगवंतका निर्वाण हुआ, तब तिन अठारहही राजायोंने कहाकि इस भरतखंड सें भाव उद्योत तो गया, तिसकी नकलरूप हम द्रव्योद्योत करेंगे, तब तिन राजायोनें दीपक करे, तिस दिनसें लेकर यह दीपोत्सव प्रवृत्त हुआ है. यह कथन कल्पसूत्रके मूल पाठ में है. जो अन्य मत वाले दिवालीका निमित्त कथन कर तेहे, सो कल्पित है क्योंकि किसि मतकेभी मुख्यशास्त्रमें इस पर्वकी उत्पत्तिका कथन नही है.

प्र.८९ भगवंत के निर्वाण होने के समय में शक्रंइंद्रे आयु वधावनेके वास्ते क्या विनती करी थी, और भगवंत श्री महावीरजीयें क्या उत्तर दीनाथा ?

उ. शक्रइंद्रे यह विनती करीथी के, हे स्वामि एक क्षणमात्र अपना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आयु तुम वधावो, क्योंकि तुमारे एक क्षणमात्र अधिक जीवने सें तुमारे जन्म नक्षत्रोपरि भस्म राशिनामा तीस ३० मा ग्रह आया है, सो तुमारे शासनकों पीडा नही दे सकेगा, तब भगवंतने ऐसे कहाके हे इंद्र, यह पीछे कदेइ हूआ नही, और होवेगाभी नही कि कोइ आयु वधा सके, और जो मेरे शासनकों पीडा होवेगीं सो अवश्य होनहार है, कदापि नही टलेगी.

प्र.९०. तबतो कोइभी देह धारी आयु नही वधा सका है यह सिद्ध हुआ ?

उ. हां, कोइभी क्षणमात्र आयु अधिक नही वधा सक्ता है.

प्र.९१. कितनेक मतावलंबी कहते है कि योगाभ्यासादिके करने सें आयु वध जाता है, यह कथन सत्य है वा नही ?

उ. यह निकेवल अपनी महत्वता वधाने वास्ते लोकों गप्पे ठोकते है, क्योंकि चौवीस तीर्थंकर ब्रह्मा, विष्नु, महेश, पातंजली, व्यास, ईशामसींह, महम्मद प्रमुख जे जगतमें मतचलाने वाले सामर्थ पुरुष गिने जाते है, वेभी आयु नही वधा सके है, तो फेर सामान्य जीवोंमें तो क्या शक्ति है के आयु वधा सके, जेकर किसीने वधाइ होवे तो अब तक जीता क्यों नही रहा.

प्र.९२. भगवंतका भाइ नंदिवर्द्धन, और भगवंतकी संसारावस्थाकी यशोदा स्त्री, और भगवंतकी बेटी प्रियदर्शना और भगवंतका जमाइ जमाली, इनका क्या वर्त्तंत हुआ था ?

उ. नंदीवर्द्धन राजातो श्रावक धर्म पालता रहा और यशोदानी श्राविका तो थी, परंतु यशोदाने दीक्षा लीनी मैने किसी शास्त्र में नही बांचा है और भगवंतकी पुत्रीने एक हजार स्त्रीयोंके साथ और जमाइ जमालिने ५०० पांचसौ पुरुषों के साथ भगवंत श्री महावीरजीके पास दीक्षा लीनी थी ।

प्र.९३. श्री महावीर भगवंतने जो अंतमें सोलां पोहर तक देशना दीनीथी, तिसमे क्या क्या उपदेश करा था ?

उ. भगवंतने सर्वसें अंतकी देशनामें ५५ पचपन अशुभ कर्मोके जैसें जीव भवांतरमे फल भोगते है, ऐसे अध्ययन और पचपन ५५ शुभकर्मोके जैसे भवांतर में जीव फल भोगते है, ऐसे अध्ययन और छत्तीस ३६ विना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूछ्यां प्रश्नोके उत्तर कथन करके पीछे ५५, पचपन शुभ विपाक फल नामे अध्ययनों में सें एक प्रधान नामे अध्ययन कथन करते हुए निर्वाण प्राप्त हुए थे. यह कथन संदेह विषौषधी नामे ताड पत्रोपर लिखी हुइ पुरानी कल्पसूत्रकी टीकामे है. येह सर्वाध्यायन श्री सुधर्मस्वामीजीने सूत्र रूप गूंथे होवेंगे के नही, ऐसा लेख मेरे देखनेमें किसी शास्त्रमें नही आया है.

प्र.९४. जैनमतमे यह जो रूढिसें कितनेक लोक कहते है कि श्री उत्तराध्ययनजीके छत्तीस अध्ययन दिवालीकी रात्रिमें कथन करके और ३७ सैंतीसमा अध्ययन कथन करते हुए मोक्षगये, यह कथन सत्य है, वा नही ?

उ. यह कथन सत्य नही, क्योंकि कल्प सूत्रकी मूल टीकासें विरुद्ध है, और श्री भद्रबाहुस्वामीने उत्तराध्ययनकी निर्युक्तिमें ऐसा कथन करा है कि उत्तराध्ययनका दूसरा परीषहाध्ययनतो कर्मप्रवाद पूर्वके १७ सत्तरमें पाहुडसें उद्धार करके रचा है, और आठमाध्ययन श्री कपिल केवलीने रचा है, और दशमाध्ययन जब गौतमस्वामी अष्टापदसें पीछे आए है, तब भगवंतने गौतमको धीर्य देने वास्ते चंपानगरीमें कथन करा था, और २३ मा अध्ययन कथन करा था, और २३ मा अध्ययन केशीगौतमके प्रश्नोत्तर रूप स्थविरोने रचा है. कितने अध्ययन प्रत्येक बुद्ध मुनियोके रचे हुए है, और कितनेक जिन भाषित है. इस वास्ते उत्तराध्ययन दिवालीकी रात्रि मे कथन करा सिद्ध नही होता है।

प्र.९५. निर्वाण शब्दका क्या अर्थ है ?

उ. सर्व कर्म जन्य उपाधि रूप अग्निका जो बुझ जाना तिसकों निर्वाण कहते है, अर्थात् सर्वोपाधिसें रहित केवल शुद्ध, बुद्ध सच्चिदानंद रूप जो आत्माका स्वरूप प्रगट होना, तिसकों निर्वाण कहते है।

प्र.९६. जीवकों निर्वाण पद कब प्राप्त होता है ?

उ. जब शुभाशुभ सर्व कर्म जीव के नष्ट हो जाते है तब जीवको निर्वाणपद प्राप्त होता है।

प्र.९७. निर्वाण हूआ पीछे आत्मा कहां जाता है, और कहां रहता है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उ. निर्वाण हूआ पीछे आत्मा लोक के अग्र भागमे जाता है, और सादि अनंत काल तक सदा तहांही रहता है ।

प्र.९८. कर्म रहित आत्माकों लोकाग्र में कौन ले जाता है ?

उ. आत्मामें उर्द्धगमन स्वभाव है, तिस सें आत्मा लोकाग्र तक जाता है ।

प्र.९९. आत्मा लोकाग्रसें आगे क्यों नही जाता है ?

उ. आत्मामें उर्द्धगमन स्वभाव तो है, परंतु चलनेसे गति साहायक धर्मास्तिकाय लोकाग्रमें आगे नही हैं, इस वास्ते नही जाता है, जैसें मनमे तरने की शक्तितो है, परंतु जल विना नही तरसक्ता है, तैसें मुक्तात्माभी जानना.

प्र.१००. सर्व जीव किसी कालमें निर्वाणपद पावेंगे के नही ?

उ. सर्व जीव निर्वाण पद किसी कालमें नही पावेंगे.

प्र.१०१. क्या सर्व जीव एक सरीषे नही है, जिससें सर्व जीव निर्वाण पद नही पावेंगे.

उ. जीव दो तरे के है, एक भव्य जीव है १, दुसरे अभव्य जीव है, तिनमें जो अभव्य जीव होवे तो कदेभी निर्वाण पदकों प्राप्त नही होवेंगे, क्योंकि तिनमे अनादि स्वभावसेंही निर्वाण पद प्राप्त होने की योग्यताही नही है, और जो भव्य जीव है तिनमें निर्वाणपद पावनेकी योग्यता तो है, परंतु जिस जिसकों निर्वाण होनेके निमित्त मिलेंगे वे निर्वाणपद पावेंगे, अन्य नही.

प्र.१०२. सदा जीवां के मोक्ष जाने सें किसी कालमें सर्व जीव मोक्षपद पावेंगे, तबतो संसार में अभव्य जीवही रह जावेंगे, और मोक्ष मार्ग बंद हो जावेगा ?

उ. भव्य जीवांकी राशि सर्व आकाश के प्रदेशोंकी तरे अनंत तथा अनागत कालके समयकी तरें अनंत है. कितना ही काल व्यतीत होवे तोभी अनागत कालका अंत नही आता है, इसी तरें सदा मोक्ष जानेसें जीवभी खूटते नही है. इस लोक में निगोद जीवां के असंख्य शरीर है, एकैक शरीर में अनंत अनंत जीव है, एक शरीर में जितने अनंत अनंत जीव है, तिनमें से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंत मे भाग प्रमाण जीवअतीत काल में मोक्षपद पाये है, और तिनमें से अनंतमें भाग प्रमाण अनंत जीव अनागत काल में मोक्ष पद पावेंगे, इस रास्ते मोक्ष मार्ग बंद नही होवेगा.

प्र.१०३. आत्मा अमर है के नाशवंत है ?

उ. आत्मा सदा अविनाशी है, सर्वथा नाशवंत नही है.

प्र.१०४. आत्मा अमर है, अविनाशी है, इस कथनमें क्या प्रमाण है ?

उ. जिस वस्तुकी उत्पत्ति होती है, सो नाशवंत होता है, परंतु आत्माकी उत्पत्ति नही हुइ है, क्योंकि जिस वस्तुकी उत्पत्ति होती है तिसका उपादान अर्थात् जिसकी आत्मा बन जारे जैसे धडेका उपादान मिंट्टीका पिंडे है, तो उपादान कारण कोइ अरूपी ज्ञानवंत वस्तु होनी चाहिये, जिससें आत्मा बने, ऐसा तो आत्मासें पहिलां कोइभी उपादान कारण नही है, इस वस्ते आत्मा अनादि अनंत अविनाशी वस्तु है ।

प्र.१०५. जेकर कोइ ऐसे कहे आत्मा का उपादान कारण ईश्वर है, तबतौ तुम आत्माकों अनित्य मानोगेके नही.

उ. जब ईश्वर आत्माका उपादान कारण मानोगे, तबतो ईश्वर और सर्व अनंत संसारी आत्मा एकही हो जावेगी, क्योंकि कार्य अपणे उपादान कारण सें भिन्न नही होती है ।

प्र.१०६. ईश्वर और सर्व संसारी आत्मा एकही सिद्ध होवेगेतो इसमे क्या हानि है ?

उ. ईश्वर और सर्व संसारी आत्मा एकही सिद्ध होवेगे तो नरक तिर्यंचकी गतिमेभी ईश्वरही जावेगा और धर्माधर्मभी सर्व ईश्वरही करनेवाला और चौर, यार, लुच्चा, लफंगा, अगम्यगामी इत्यादि सर्व कामका कर्त्ता ईश्वरही सिद्ध होवेगा, तबतो वेदपुराण, बैबल, कुरान प्रमुख शास्त्रनी ईश्वरने अपनेही प्रतिबोध वास्ते रचे सिद्ध होवेंगे, तबतो ईश्वर अज्ञानी सिद्ध होवेगा. जब अज्ञानी सिद्ध हुआ तबतो तिसके रचे शास्त्रभी जूठे और निष्फल सिद्ध होवेगे, ऐसे जब सिद्ध होगा तबतो माता, बहिन, बेटीके गमन करनेकी शंका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नही रहेगी, जिसके मनमें जो आवे सो पाप करेगा, क्योंके सर्व कुछ करने कराने फल भोगने भुक्ताने वाला सर्व ईश्वरही है, ऐसे मानने से तो जगतमे नास्तिक मत खडा करना सिद्ध होवेगा.

प्र.१०७. जीवकों पुनर्जन्म किस कारणसें कारण पडता है ?

उ. जीवहिंसा,१ जूठ बोलना, २ चौरी करनी, ३ मैथुन, स्त्रीसें भोग करना, ४ परिग्रह रखना, ५ क्रोध १ मान २ माया ३ लोभ ४ एवं ८ राग १० द्वेष ११ कलह १२ अभ्याख्यान अर्थात् किसीकों कलंक देना १३ पैशुन १४ परकी निंदा करनी १५ रति अरति १६ माया मृषा १७ मिथ्यादर्शन शल्ल, अर्थात् कुदेव, कुगुरु, कुधर्म, इन तीनोको सुदेव, सुगुरु, सुधर्म करके मानना १८, जब तक जीव येह अष्टादश पाप सेवन करता है, तब तक इसकों पुनर्जन्म होता है ।

प्र.१०८ जीवकों पुनर्जन्म बंद होने का क्या रस्ता है ?

उ. उपर लिखे हुए अष्टादश पापका त्याग करे, और पूर्व जन्मांतरोमें इन अष्टादश पापोंके सेवने से जो कर्मांका बंध करा है, तिसकों अर्हंतकी आज्ञानुसार ज्ञान श्रद्धा जप तप करने से सर्वथा नाश करे तो फेर पुनर्जन्म नही होता है.

प्र.१०९. तीर्थंकर महाराजके प्रभाव सें अपना कल्याण होवेगा, के अपनी आत्मा के गुणा के प्रभावसें हमारा कल्याण होवेगा ?

उ. अपनी आत्माका निज स्वरूप केवल ज्ञान दर्शनादि जब प्रगट होवेगे, तिसके प्रभावसें हमारी तुमारी मोक्ष होवेगी.

प्र.११०. जेकर निज आत्माके गुणों से ही मोक्ष होवेगी, तबतो तीर्थंकर भगवंतकी भक्ति करनेका क्या प्रयोजन है ?

उ. तीर्थंकर भगवंतकी भक्ति करने में तीर्थंकर भगवंत निमित्त कारण है. विना निमित्तके अपनी आत्मा के गुणरूप उपादान कारण कदेइ फल नही देता है. तीर्थंकर निमित्तभूत होवे तब भक्तिरूप उपादान कारण प्रगट होता है तिससेंही, आत्मा के सर्व गुण प्रगट होते है, तिनसें मोक्ष होता है. जैसे घट होने मे मिट्टी उपादान कारन है, परंतु विना कुलाल चक्र दंभ चीवरादि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निमित्तके कदापि घट नही होता है, तैसेंही तीर्थंकर रूप निमित्त कारण विना आत्माकों मोक्ष नही होता है, इस वास्ते तीर्थंकरकी भक्ति अवश्य करने योग्य है ।

प्र.११२. जगत में जीव पुन्य पाप करते है तिनके फलका देनेवाला परमेश्वर है वा नही ?

उ. पुन्य पाप के फलका देनेवाला परमेश्वर नही है.

प्र.११३. पुन्य पाप के फलका दाता ईश्वर मानिये तो क्या हरज है ?

उ. ईश्वर पुन्य पापका फल देवे तब तो ईश्वर की ईश्वरताकों कलंक लगता है.

प्र.११४. क्या कलंक लगता है ?

उ. अन्यायता, निर्दयता असमर्थता अज्ञानतादि.

प्र.११५. अन्यायता दूषण ईश्वरकों पुन्य पापके फल देनेसें कैसें लगता है ?

उ. जब एक आदमीनें तलवारादिसें किसी पुरुषका मस्तक छेदा, तब मस्तकके छिदनेसें उस पुरुषकों जो महा पीडा भोगनी पडी है, सो फल ईश्वरने दूसरे पुरुषके हाथमें उसका मस्तक कटवाके भुक्ताया, तद पीछे तिस मारने वालेकों फांसी आदिकसें मरवाके तिसकों तिस शिर छेदन रूप अपराधका फल भुक्ताया, ईश्वरनें पहिलां तिसका शिर कटवाया, पीछे तिसकों फांसी देके तिस शिर छेदनेका फल भुक्ताया, ऐसे काम करने सें ईश्वर अन्यायी सिद्ध होता है.

प्र.११६. पुन्य पापके फल भुक्ताने से ईश्वरमें निर्दयता क्यों कर सिद्ध होती है ?

उ. जब ईश्वर कितने जीवांकों महा दुखी करता है, तब निर्दयी सिद्ध होता है. शास्त्रोंमें तो ऐसे कहता है किसी जीवकों मत मारना, दुःखीभी न करनां, भूखेकों देखके खानेकों देनां, और आप पूर्वोक्त काम नही करता है, जीवां को मारता है, महा दुःखी करता है. भूखसें लाखो करोडो मनुष्य कालादिमें मर जाते है, तिनकों खानेकों नही देता है, इस वास्ते निर्दयी सिद्ध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होता है.

प्र.११७. ईश्वरतो जिस जीवने जैसा जैसा पुन्य पाप करा है तिसकों तैसा तैसा फल देता है. इसमे ईश्वरकों कुछ दोष नही लगता है, जैसें राजा चौरकों दंड देता है और अच्छे काम करने वालेकों इनाम देता है ।

उ. राजातो सर्व चोरकों चोरी करने सें बंद नही कर सकता है. चाहता तो है कि मेरे राज्य में चोरी न होवे तो ठीक है, परंतु ईश्वरकों तो लोक सर्व सामर्थ्यवाला कहते है, तो फेर ईश्वर सर्व जीवांको नवीन पाप करने से क्यों नही मनै करता है. मनै न करने सें ईश्वर जान बूझके जीवो सें पाप करता है. फेर तिसका दंड देके जीवोंकों दुःखी करता है. इस हेतुसेंही अन्यायी, निर्दयी, असमर्थ ईश्वर सिद्ध होता है. इस वास्ते ईश्वर भगवंत किसी कों पुन्य पापका फल नही देता है. इस चर्चाका अधिक स्वरूप देखनां होवे तो हमारा रचा हुआ जैनतत्वादर्शनामा पुस्तक बांचनां.

प्र.११८. जब ईश्वर पुन्य पापका फल नही देता है, तो फेर पुन्य पापका फल क्यों कर जीवांको मिलता है ?

उ. जब जीव पुन्य पाप करते है तब तिनके फल भोगनेके निमित्तभी साथही होने वाले बनाता करता है, तिन निमित्तो द्वारा जीव शुभाशुभ कर्मोका फल भगोते है, तिन निमित्तोका नामही यज्ञ लोकोने ईश्वर रख छोडा है.

प्र.११९. जगतका कर्त्ता ईश्वर है के नही ?

उ. जगततो प्रवाहसें अनादि चला आता है. किसीका मूलमें रचा हुआ नही है. काल १ स्वभाव २ नियति ३ कर्म ४ चेतन आत्मा और जड पदार्थ इनके सर्व अनादि नियमोसें यह जगत विचित्ररूप प्रवाहसें चला हुआ उत्पाद व्यय ध्रूव रूपसें इसी तरे चला जायेगा ।

प्र.१२०. श्री महावीरस्वामीए तीर्थंकरो की प्रतिमा पूजनेका उपदेश करा है के नही ?

उ. श्री महावीरजीने जिन प्रतिमाकी पूजा द्रव्ये और भावेतो गृहस्थकों करनी बतायिहै, और साधूयोंकी भावपूजा करनी बताइ है ।

प्र.१२१. जिन प्रतिमाकी पूजा विना जिनकी भक्ति हो शक्ति है के नही ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उ. प्रतिमा विना भगवंतका स्वरूप स्मरण नही हो सकता है, इस वास्ते जिन प्रतिमा विना गृहस्थलोकोसे जिनराजकी भक्ति नही हो सकती है।

प्र.१२२. जिन प्रतिमातो पाषाणादिकी बनी हुई है, तिसके पूजने गुणस्तवन करने सें क्या लाभ होता है ?

उ. हम पथ्थर जानके नही पूजते है, किंतु तिस प्रतिमा द्वारा साक्षात् तीर्थंकर भगवंत की पूजा स्तुति करते है. जैसे सुंदर स्त्रीकी तसबीर देखनेसे असल स्त्रीका स्मरण होकर कामी काम पीडित होता है तैसे ही जिन प्रतिमा के देखने सें भक्तजनोको असली तीर्थंकरका रूपका स्मरण होकर भक्तोंका जिन भक्तिसें कल्याण होता है.

प्र.१२३. जिन प्रतिमाकी फूलादिसें पूजा करने सें श्रावकों को पाप लगता है के नही ?

उ. जिन प्रतिमाकी फूलादिसें पूजा करने सें संसारका क्षय करे, अर्थात् मोक्ष पद पावे, और जो किंचित् द्रव्य हिंसा होती है, सो कूपके द्रष्टांतसें पूजा के फलसे ही नष्ट हो जाति है, यह कथन आवश्यक सूत्र में है.

प्र.१२४. सर्व देवते जैन धर्मी है ?

उ. सर्व देवते जैन धर्मी नही है, कितनेक हे.

प्र.१२५. जैन धर्मी देवता की भगती श्रावक साधु करे के नही ?

सम्यग् द्रष्टी देवताकी स्तुति करनी जैनमतमें निषेध नही, क्योंकि श्रुत देवता ज्ञान के विघ्नोकों दूर करते है, सम्यग् द्रष्टि देवते धर्ममे होते विघ्नोकों दुर करते है, और कोइ भोला जीव इस लोकार्थके वास्ते सम्यग् द्रष्टि देवतायोंका आराधन करेतो तिसकाभी निषेध नही है. साधुभी सम्यग् द्रष्टि देवताका आराधना स्तुति जैनधर्मकी उन्नति तथा विघ्न दुर करने बास्ते करे तो निषेध नही. यह कथन पंचाशकादि शास्त्रों मे है.

प्र.१२६. सर्व जीव अपने करे हुए कर्मका फल भोगते है. तो फेर देव ते क्या कर सक्ते है ?

उ. जैसें अशुभ निमित्तो कें मिले अशुभ कर्मका फल उदय होता है, तैसे शुभ निमित्तोके मिलने सें अशुभ कर्मोदय नष्टभी हो जाता है, इस वास्ते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अशुभ कर्मांके उदयकों दूर करने में देवताभी निमित्त है.

प्र.१२७. जैनधर्मी अथवा अन्यमति देवते विना कारण किसी कों दुख दे सकते है के नही ?

उ. जिस जीव के देवताके निमित्त सें अशुभ कर्मका उदय होना है, तिसकों तो द्वेषादि कारणसें देवते दुःख दे सकते है, अन्य कों नही.

प्र.१२८. संप्रतिराजा कौन था ?

उ. राजगृह नगरका राजा श्रेणिक जिसका दूसरा नाम बंभसार था, तिसकी गद्दी उपर तिसका बेटा अशोकचंद्र दूसरा नाम कोणिक बैठा, तिसने चंपानगरीकों अपनी राजधानी करी, तिसके मरां पिछे तिसकी गद्दी उपर तिसका बेटा उदायि बैठा, तिसने अपनी राजधानी पाटलीपुत्र नगरमें करी सो उदायि बिना पुत्रके मरण पाया, तिसकी गद्दी उपर नायिका पुत्र नंद बैठा, तिसकी नव पेढीयोने नंदही नामसें राज्य करा, वे नव नंद कहलाए. नवमें नंदकी गद्दी उपर मौर्य वंशी, चंद्रगुप्तराजा बैठा, तिसकी गद्दी उपर तिसका पुत्र बिंदुसार बैठा, तिसकी गद्दी उपर तिसका बेटा अशोकश्रीराजा बैठा, तिसका पुत्र कुणाल आंखासें अंधा था, इस वास्ते तिसकों राज गद्दी नही मिली, तिस कुणालका पुत्र संप्रति हुआ, सो जिस दिन जन्म्याथा तिस दिनही तिसकों अशोकश्री राजाने अपनी राजगद्दी ऊपर बैठाया, सो संप्रति नामे राजा हुआ है. श्रेणिक १ कोणिक २ उदायि ३ यह तीनो तो जैनधर्मी थे, नव नंदोकी मुझे खबर नही, कौनसा धर्म मानते थे. चंद्रगुप्त १ बिंदुसार ए दोनो जैनीराजे थे, अशोकश्रीजी जैनराजा था, पीछेसें केइक बौद्धमति हो गया कहते है, और संप्रति तो परम जैनधर्मीराजा था.

प्र.१२९ संप्रति राजाने जैनधर्मके वास्ते क्या क्या काम करे थे.

उ. संप्रतिराजा सुहस्ति आचार्यका श्रावक शिष्य १२ बारां व्रतधारी था, तिसने द्रविक अंध करणाटादि और काबुल कुराशानादि अनार्य देशोमें जैनसाधुयोका विहार करके तिनके उपदेशसें पूर्वोक्त देशोमें जैन धर्म फैलाया, और निनानवे ९९००० हजार जीर्ण जिन मंदरोंका उद्धार कराया, और बव्वीस २६००० हजार नवीन जिनमंदिर बनवाए थे, और सवाकिरोड १२५००००० जिन प्रतिमा नवीन बनवाइ थी, जिनके बनाए हुए जिनमंदिर गिरनार नडोलादि स्थानोमे अबभी मौजूद खडे है, और तिनकी बनवाइ हुइ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सैंकडो जिन प्रतिमाभी महा सुंदर विद्यमान कालमे विद्यमान है, और संप्रति राजाने ७०० सौ दानशाला करवाइ थी. और प्रजाके महा हितकारी उषधशालादिनी बनवाइथी, इत्यादि संप्रतिराजाने जैनमतकी वृद्धि और प्रभावना करी थी. विरात् २९१ वर्ष पीछे हुआ है.

प्र.१३०. मनुष्यों मे कोइ ऐसी शक्ति विद्यमान है कि जिसके प्रभाव सें मनुष्य अद्भुत काम कर सकता है ?

उ. मनुष्य में अनंत शक्तियों कर्माके आवरणसें ढंकी हुइ है, जेकर वे सर्व शक्तियां आवरण रहित हो जावेंतो मनुष्य चमत्कारी अद्भुत काम कर सतके है.

प्र.१३१. वे शक्तियां किसने ढांकनोकी है ?

उ. आठ कर्माकी अनंत प्रकृतियोने आच्छादन कर छोडी है ।

प्र.१३२. हमनेतो आ कर्मकी १४८ वा १५८ प्रकृतियां सुनी है, तो तुम अनंत किस तरेसें कहेते है ?

उ. एकसो १४९ वा १५८ यह मध्य प्रकृतियांके भेद है और उत्कृष्टतो अनंत भेद है, क्योंके आत्माके अनंत गुण है, तिनके ढांकनेवालीयां कर्म प्रकृतियांभी अनंत है.

प्र.१३३. मनुष्य में जो शक्तियां अद्भुत काम करनेवालीयां है तिनका थोडासा नाम लेके बतलाउ, और तिनका किंचितस्वरूपभी कहौ, और यह सर्व लब्धियां किस जीवकों किस कालमें होतीयां है ?

उ. आमोसहि लद्धी १-जिस मुनिके हाथादिके स्पर्श लग्नेसें रोगीका रोग जाए, तिसका नाम आमर्षोषधि लब्धि है, मुनि तिस लब्धिवाळा कहा जाता है, यह लब्धि साधुही कों होती है.

विप्पोसहि लद्धी २-जिस साधुके मल मूत्रके लगने सें रोगीका रोग जाए, तिसका नाम विप्पोषधि लब्धि है, इस लब्धिवाले मुनिका मल, विष्टा और मूत्र सर्व कर्प्पूरादिवत् सुगंधिवाला होता है, यह लब्धि साधुकोही होती है.

खेलोसहि लद्धी ३-जिस साधुका श्लेष्म थूंकही उषधिरूप है, जिस रोगीके शरीरकों लग जावेतो तत्काल सर्व रोग नष्ट हो जावे, यह सुगंधित होता है, यह लब्धि साधुकों होती है, इसकों श्लेष्मोषधि लब्धि कहते है.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जल्लोसहि लद्धी ४-जिस साधुके शरीरका पसीना तथा मैलभी रोग दूर कर सके, तिसकों जल्लोषधि लब्धि कहते है, यहनी साधुकोंभी होती है.

सर्वोसहि लद्धी ५-जिस साधुके मलमूत्र केश रोम नखादिक सर्वोषधि रूप हो जावे, सर्व रोग दूर कर सकें, तिसकों सर्वोषधि लब्धि कहते है, यह साधुको होती है.

संभिन्नासोए लद्धी ६-जो सर्व इंद्रियोंसे सुणे, देखे, गंध सूंघे, स्वाद लेवे, स्पर्श जाणे एकैके इंद्रियसें सर्व इंद्रियांकी विषय जाणे अथवा बारा योजन प्रमाण चक्रवर्तिकी सेनाका पडाव होता है, तिसमे एक साथ वाजते हुए सर्व वजंत्रोकों अलग अलग जान सके तिसको संभिन्न श्रोत्र लब्धि कहते है, यह साधुको होवे है.

इहिनाण लद्धी ७-अवधिज्ञानवंतको अवधिज्ञान लब्धि होती है, यह चारो गतिके जीवांको होती है, विशेष करके साधुकों होती है.

रिउमइलद्धी ८-जिस मनः पर्यायज्ञानसें सामान्य मात्र जाणें, जैसें इस जीवने मनमें घट चिंतन करा है इतना ही जाणे, परंतु ऐसा न जानेकि वैसा घट किस क्षेत्रका उत्पन्न हूआ किस कालमें उत्पन्न हुआ है, अथवा अढाइ द्वीपके मनुष्यो के मनके बादर परिणामा जाणे तिसकों उजुमति लब्धि कहते है, यह निश्चय साधुकों होती है अन्य कों नही.

विउलमइ लद्धी ९-जिस मनः पर्यायसे रुजुमतिसें अधिक विशेष जाणें, जैसें इसने सोनेका घट चिंतन करा है. पाटलिपुत्रका उत्पन्न हूआ बसंतऋतुका अथवा अढाइ द्वीपके संज्ञी जीवांके मनके सूक्ष्म पर्यायांकोंभी जाणे, तिसकों विपुलमति लब्धि कहते है, इसका स्वामी साधुही होवे, यह लब्धि केवल ज्ञानके विना हुआ जाए नही.

चारण लद्धी १०-चारण दो तरेके होते है, एक जंघा चारण १ दूसरा विद्या चारण २ जंघा चारण उसकों कहते है जिसकी जंघायोंमें आकाशमें उडनेकी सक्ति उत्पन्न होवे सो जंधा चारण, उंचातो मेरु पर्वतके शिखर तक उसके जा सकता है, और तिरछा तेरमे रुचक द्वीप तक जा सकता है, और विद्याचारण उंचा मेरु शिखर तक और तिरछा आठमें नंदीश्वर द्वीप तक विद्याके प्रभावसें जा सकता है, येह दोनो प्रकारकी लब्धिकों चारण लब्धि कहते है, यह साधुकों होती है.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आसीविष लद्धी ११-आशी नाम दाढाका है, तिनमें जो विष होवे सो आशीविष. सो दो प्रकारे है, एक जातिआशीविष दूसरा कर्मआशीविष, तिनमें जाति जहरी के चार भेद है. विषु १ सर्प २ मींरुक ३ मनुष्य ४ और तप करने सें जिस पुरुषको आशीविष लब्धि होती है सो शाप देके अन्यकों मार सकता है, तिसकोंनी आशीविष लब्धि कहते है.

केवल लब्धी १२-जिस मनुष्यकों केवलज्ञान होवे, तिसकों केवलि नामे लब्धि है.

गणहर लद्धी १३- जिससें अंतर मुहूर्त्तमें चौदह पूर्व गूंथे और गणधर पदवी पामें, तिसकों गणधर लब्धि कहते है.

पुव्वधर लद्धी १४-जिससें चौदहपूर्व दश पूर्वादि पूर्वका ज्ञान होवे, सो पूर्वधर लब्धि.

अरहंत लद्धी १५-जिससे तीर्थंकर पद पावे, सो अरिहंत लब्धि.

चक्कवट्टि लद्धी १६-चक्रवर्त्तीकों चक्रवर्त्ती लब्धि.

बलदेवलद्धी १७-बलदेवकों बलदेवलब्धि.

वासुदेवलद्धी १८-वासुदेवकों वासुदेवकी लब्धि.

खीरमहुसप्पिआसव लद्धी १९-जिसके वचनमें ऐसी शक्ति है कि तिसकी वाणि सुणके श्रोता ऐसी तृप्त हो जावे के मानु दूध, धृत, शाकर, मिसरीके खाने से तृप्त हुआ है, तिसकों खीरमधुसर्प्पिआसव लब्धि कहते है, यह साधुकों होती है.

कुठय बुद्धि लद्धी २०-जैसे वस्तु कोठे में पडी हुइ नाश नही होती है, ऐसे ही जो पुरुष जितना ज्ञान सीखे सो सर्व वैसे का तैसाही जन्मपर्यंत भूले नही, तिसकों कोष्टक बुद्धि लब्धि कहते है.

पयाणुसारी लद्धी २१-एक पद सुनने सें संपूर्ण प्रकरण कर देवे, तिसकों पदानुसारी लब्धि कहते है.

बीयबुद्धि लद्धी २२-जैसें एक बीजसें अनेक बीज उत्पन्न होते है, तैसेही एक वस्तु के स्वरूपके सुनने सें जिसको अनेक प्रकारका ज्ञान होवे, सो बीजबुद्धि लब्धि है.

तेउलेसा लद्धी २३-जिस साधुके तपके प्रश्नावसें ऐसी शक्ति उत्पन्न

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होवे के जेकर क्रोध चढेतो मुख के फुंकारेसें कितनेही देशांकों बालके भस्म कर देवे, तिसकों तेजोलेश्या लब्धि कहते है.

आहारएलद्धी २४-चउदह पूर्वधर मुनि तीर्थंकरकी ऋद्धि देखने वास्ते, १ वा कोइ अर्थ अवगाहन करने वास्ते, अथवा अपना संशय दूर करने वास्ते अपने शरीरमें हाथ प्रमाण स्फटिक समान पूतला काढके तीर्थंकरके पास भेजता है, तिस पूतलेसें अपने कृत्य करके पाछा शरीर में संहार लेता है, तिसकों आहारक लब्धि कहते है.

सीयलेसा लद्धी १५-तपके प्रभावसें मुनिकों ऐसी शक्ति उत्पन्न होती है के जिससें तेजोलेशाकी उश्नताकों रोक देवे, वस्तुकों दग्ध न होने देवे, तिसकों शीतलेशा लब्धि कहते है.

वेउव्विदेह लद्धी २६-जिसकी सामर्थसें अणुकी तरें सूक्ष्म क्षण मात्रमें हो जावे, मेरुकी तरे भारी देह कर लेवे, अर्क तूलकी तरें लघु हलका देह कर लेवे, एक वस्त्र में से वस्त्र करोकों और एक घटमें से घट करोकों करके दिखला देवे, जैसा इत्ने तैसा रूप कर सके, अधिक अन्य क्या कहिये, तिसका नाम वैक्रिय लब्धि है.

अखीणमहाणसी लद्धी २७-जिसके प्रभावसें जिस साधुनें आहार लाणा है, जहां तक सो साधु न जीमे तहां तक चाहो कितनेही साधु तिस भिक्षामेंसे आहार करे तोभी खूटे नही, तिसकों अक्षीणमहानसिक लब्धि कहते है.

पुलाय लद्धी २८-जिसके प्रभावसें धर्मकी रक्षा करने वास्ते धर्मका द्वेषी चक्रर्वत्त्यादिकों सेना सहित चूर्ण कर सके, तिसकों पुलाकलब्धि कहते है.

पूर्वोक्त येह लब्धियां पुन्यके और तपके और अंत:करणके बहुत शुद्ध परिणामोके होनेसें होवे है, ये सर्व लब्धियां प्रायें तीसरे चौथे आरे में ही होतीयां है, पंचम आरेकी शुरुआतमेंभी होतीयां है.

प्र.१३४. श्री महावीरस्वामीकों ये पूर्वोक्त लब्धियां २८ अठावीस थी ?

उ. श्री महावीरजीकोंतो अनंतीयां लब्धियां थी. येह पूर्वोक्ततो २८ अठावीस किस गिनती में है, सर्व तीर्थंकराकों अनंत लब्धियां होती है.

प्र.१३५. इंद्रभूति गौतमकों ये सर्व लब्धियो थी ?

उ. चक्री, बलदेव, वासुदेव ऋजुमति, ये नही थी, शेष प्राये सर्वही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लब्धियां थी.

प्र.१३६. आप महावीरकों ही भगवंत सर्वज्ञ मानते हो, अन्य देवोंकों नही, इसका क्या कारण है ?

उ. अपने २ मतका पक्षपात छोड के विचारीये तो, श्री महावीरजी में ही भगवंत के सर्व गुण सिद्ध होते है, अन्य देवो में नही.

प्र.१३७. श्री महावीरजीकों हूए तो बहुत वर्ष हुए है, हम क्योंकर जानेके श्री महावीरजी में ही भगवानपणेके गुण थे, अन्य देवों में नही थे ?

उ. सर्व देवोंकी मूर्त्तियों देखने सें और तिनके मतोमें तिन देवोंके जो चरित कथन करे है तिनके वांचने और सुनने सें सत्य भगवंतके लक्षण और कल्पित भगवंतोंके लक्षण सर्व सिद्ध हो जावेगे.

प्र.१३८. कैसी मूर्त्तिके देखने सें भगवंतकी यह मूर्त्ति नही है, ऐसे हम माने ?

उ. जिस मूर्त्तिके संग स्त्रीकी मूर्त्ति होवे तब जाननाके यह देव विषयका भोगी था. जिस मूर्त्तिके हाथ में शस्त्र होवे तब जानना यह मूर्त्ति रागी, द्वेषी वैरीयोके मारने वाले और असमर्थ देवो की है, जिस मूर्त्तिके हाथमें जपमाला होवे तब जानना यह किसीका सेवक है, तिससें कुछ मागने वास्ते तिसकी माला जपता है.

प्र.१३९. परमेश्वरकी कैसी मूर्त्ति होती है ?

उ. स्त्री, जपमाला, शस्त्र, कमंडलुसें रहित और शांत निस्पृह ध्यानारूढ समता मतवारी, शांतरस, मग्नमुख विकार रहित, ऐसी सच्चे देवकी मूर्त्ति होती है.

१४०. जैसे तुमनें सर्वज्ञकी मूर्त्तिके लक्षण कहे है, तैसें लक्षण प्रायें बुद्धकी मूर्त्तिमेंहै, क्या तुम बुद्धको भगवंत सर्वज्ञ मानते हो ?

उ. हम निकेवल मूर्त्तिके ही रूप देखने सें सर्वज्ञका अनुमान नही करते है, किंतु जिसका चरितनी सर्वज्ञके लायक होवे, तिसकों सच्चा देव मानते है.

प्र.१४१. क्या बुद्धका चरित सर्वज्ञ सच्चे देव सरीषा नही है ?

उ. बुद्धके पुस्तकानुसार बुद्धका चरित सर्वज्ञ सरीषा नही मालुम होता है.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्र.१४२. बुद्धके शास्त्रोंमें बुद्धका किसतरेंका चरित है, जिसमें बुद्ध सर्वज्ञ नही है ?

उ. बुद्धका बुद्धके शास्त्रानुसारे यह चरित जो आगे लिखते है, तिसें बुद्ध सर्वज्ञ नही सिद्ध होता है. १ प्रथम बुद्धने संसार छोड के निर्वाणका मार्ग जानने वास्ते योगीयांका शिष्य हुआ, वे योगी जातके ब्राह्मणथे और तिनकों बडे ज्ञानीभी लिखा है, तिनके मतकी तपस्यारूप करनी सें बुद्धका मनोर्थ सिद्ध नही हुआ, तब तीनको छोडके बुद्ध गया के पास जंगलमें जा रहा २, इस उपरके लेखसेतो यह सिद्ध होता है कि बुद्ध कोइ ज्ञानी बुद्धिमानतो नही थी, नहीतो तिनके मतकी निष्फल कष्ट किया काहेको करता, और गुरुयों के छोडने सें स्वच्छंदचारी अविनीतभी इसी लेखसें सिद्ध होता है १ पीछे बुद्धने उग्र ध्यान और तप करने में कितनेक वर्ष व्यतीत करे २ इस लेखसें यह सिद्ध होता है कि जब गुरुयोंकों छोडा निकम्मे जानके तो फेर तिनका कथन करा हुआ, उग्र ध्यान और तप निष्फल काहेको करा, इससेंभी तप करता हुआ, जब मूर्च्छा खाके पडा तहां तकभी अज्ञानी था, ऐसा सिद्ध होता है १ पीछे जब बुद्धने यह विचार कराके केवल तप करने सें ज्ञान प्राप्त नही होता है, परंतु मनके उघाड करने सें प्राप्त करना चाहिये, पीछे तिसने खानेका निश्चय करा और तप छोडा २ जब ध्यान और तप करने सें मन न उघडा तो क्या खाने सें मन उघड शकता है, इससें यहभी तिसकी समझ असमंजस सिद्ध होती है, १ पीछे अजपाल वृक्षके हेठे पूर्व तर्फ बैठके इसने ऐसा निश्चय कराके जहां तक मैं बुद्ध न होवांगा तहां तक यह जगा न छोडुंगा, तिस रात्रि में इसकों इच्छारोध करनेका मार्ग और पुनर्जन्मका कारण और पूर्व जन्मांतरोका ज्ञान उत्पन्न हुआ, और दूसरे दिनके सवेरेके समय इसका मन परिपूर्ण उसका, और सर्वोपरि केवलज्ञान उत्पन्न हुआ २ अब विचारीये जिसने उग्रध्यान और तप बोध दीया और नित्यप्रेत खानेका निश्चय करा तिसकों निर्हेतुक इच्छारोध करनेका और पुनर्जन्मके कारणोंका ज्ञान कैसें हो गया, यह केवल अयौक्तिक कथन है, मोद्गलायन और शारिपुत्र और आनंदकी कल्पनासें ज्ञानी लोको में प्रसिद्ध हुआ है १, बुद्धने यह कथन करा है, आत्मा नामक कोइ पदार्थ नही है, आत्मातो अज्ञानियोने कल्पन करा है २, जब बुद्धने ज्ञानमें आत्मा नही देखा तब केवलज्ञान किसकों हुआ, और बुद्धने पुनर्जन्मका कारण किसका देखा, और पूर्व जन्मांन्तर करने वाला किसकों देखा, और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुन्य पापका कर्त्ताभुक्ता किसकों देखा, और निर्वाण पद किसकों हुआ देखा, जेकर कोइ यह कहे के नवीन नवीन क्षणकों किसकों हुआ देखा, जेकर कोइ यह कहेके नवीन नवीन क्षणकों पिछले २ क्षणोकी वासना लगती जाती है, कर्त्ता पिछला क्षण है, और भोक्त अगला क्षण है, मोक्षका साधन तो अन्य क्षणने करा, और मोक्ष अगले क्षणकी हुइ. निर्वाण उसकों कहते है कि जो दीपककी तरें क्षणोका बुझ जाना, अर्थात् सर्व क्षण परंपराका सर्वथा अभाव हो जाणा, अथवा शुद्ध क्षणोकी परंपराय रह ती है. पांच स्कंधोसें वस्तु उत्पन्न होती है, पांचो स्कंधभी क्षणिक है, कारण कार्य एक कालमे नही हैं, इत्यादि सर्व बौद्ध मतका सिद्धांत अयौक्तिक है १ बुधके शिष्य देवदत्तने बुधको मांस खाना छुडाने वास्ते बहुत उपदेश करा, परंतु बुद्धने न माना, अंतमेंभी सूयरका मांस और चावल अपने उसके घरसें चंद सोनारके घरसें लेके खाया, और वेदना ग्रस्त होकर के मरा, और पाणी के जीव बुद्धकों नही दीखे तिससें कच्चे पानीके पीने और स्नान करनेका उपदेश अपने शिष्योंकों करा, इत्यादि असमंजस मतके उपदेशककों हम क्यों कर सर्वज्ञ परमेश्वर मान सके, जो जो धर्मके शब्द बौद्ध मतमें कथन करे है वे सर्व शब्द ब्राह्मणोके मतमेंतो है नही, इस वास्ते वे सर्व शब्द जैन मतसें लीये है. बुद्धसें पहिलें जैन धर्म था, तिसका प्रमाण हम उपर लिख आए है, बुद्धके शिष्य मौद्गलायन और शारि पुत्रने श्री महावीरके चरितानुसारी बुद्धकों सर्वसें ऊंचा करके कथन करा सिद्ध होता है, इस वास्ते जैनमतवाले बुद्धके धर्मकों सर्वज्ञका कथन करा हुआ नही मानते है.

प्र.१४३. कितनेक यूरोपीयन विद्वान् ऐसे कहते है कि जैन मत ब्राह्मणोंके मतमेसें लीया है, अर्थात् ब्राह्मणोके शास्त्रो की बातां लेके जैन मत रचा है ?

उ. यूरोपीयन विद्वानोने जैन मतके सर्व पुस्तक वांचे नही मालुम होते है, क्योंकि जेकर ब्राह्मणोके मतमें अधिक ज्ञान होवे, और जैनमतमें तिसके साथ मिलता थोडासा ज्ञान होवे, तब तो हमभी जैनमत ब्राह्मणोके मतसें रचा ऐसा मान लेवे, परंतु जैनमतका ज्ञानतो ब्राह्मणादि सर्व मतोके पुस्तकोंसें अधिक और विलक्षहै, क्योंकि जैनमतके बेद पुस्तक और कर्माके स्वरूप कथन करने वाले कर्म प्रकृति, १ पंचसंग्रह, २ षटकर्म ग्रंथादि पुस्तकों में जैसा ज्ञान कथन करा है, तैसा ज्ञान सर्व दुनियाके मतके पुस्तकों मे नही है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तो फिर ब्राह्मणोके मतके ज्ञानसें जैन मत रचा क्योंकर सिद्ध होवे, बल्कि यहतो सिद्धभी हो जावेके सर्व मतोमें जो जो सूक्त वचन रचना है रे सर्व जैनके द्वादशांग समुद्रकेही बिंदु सर्व मतोमें गये हुए है. विक्रमादित्य राजेके पुरोहितका पुत्र मुकंदनामा चार वेदादि चौदह विद्याका पारगामी तिसने वृद्धवादी जैनाचार्य के पास दीक्षा लीनी. गुरुने कुमुदचंद नाम दीना और आचार्यपद मिलने से तिनका नाम सिद्धसेन दिवाकर प्रसिद्ध हुआ, जिनका नाम कवि कालीदासने अपने रचे ज्योतिर्विदाभरण ग्रंथमें विक्रमादित्यकी सभाके पंक्तितोके नाम लेतां श्रुतसेन बत्तीसी ग्रंथमें ऐसा लिखा है, सुनिश्चितं नःपरतंत्र युक्तिषु ।। स्फुरंतिया कश्चिन्सुक्तिसंपदः ।। तवैवतां पूर्वमहार्णवोच्छता ।। जगत्प्रमाणं जिन वाक्य विप्रुष ।।१।। उदधाविव सर्व संघव ।। समुद्दीरणा त्वयि नाथ द्रष्टयः ।। नचतासु भवान्प्रदश्यते ।। प्रविभक्त सरित्स्विवोच्दधिः ।।१।। प्रथम श्लोकका भावार्थ उपर लिख आए है, दूसरे श्लोकका भावार्थ यह है, कि समुद्रमें सर्व नदीयां समा सकती है, परंतु समुद्र किसीभी एक नदीमें नही समा सक्ता है, तैसे सर्व मत नदीयां समान है, वैतो सर्व स्याद्वाद समुद्ररूप तेरे मतमे समा सकते है, परंतु तेरा स्याद्वाद समुद्ररूप मत किसी मतमेंभी संपूर्ण नही समा सकता है, ऐसे ही श्री हरिभद्रसूरिजी जो जातिके ब्राह्मण और चित्रकूटके राजाके पुरोहित थे और वेद वेदांगादि चौदह विद्याके पारगामी थे, तिनोनें जैनकी दीक्षा लेके १४४४ ग्रंथ रचे है, तिनोनेभी उपदेशपद षोडशकादि प्रकरणोमें सिद्धसेन दिवाकरकी तरेही लिखा है तथा श्री जिनधर्मी हुआ पीछे जाना है, जिसने शैवादि सकल दर्शन और वेदादि सर्व मतोंके शास्त्र ऐसे पंकित धनपालने जोके भोजराजाकी सभामें मुख्य पंकित था, तिसने श्री ऋषभदेवकी स्तुतिमें कहा है, पावंति जसं असमंजसावि, वयणेहिं जेहि पर समया, तुह समय महो अहिणो, ते मंदाविंदु निस्संदा ।।१।। अस्यार्थः ।। जैनमतके विना अन्य मतके असमंजस वचनरूप शास्त्र जो जगमें यशको पावें है जैनसे वचनोसें वे सर्व वचन तेरे स्याद्वादरूप महोदधि के अमंद विंह उसके गए हुए है, इत्यादि सैकडो चार वेद वेदांगादिके पाठीयोनें जैनमतमे दीक्षा लीनी है, क्या उन सर्व पंक्तितोकों बौद्धायनादि शास्त्र पठते हुआंको नही मालुम पडा होगा के बौद्धायनादि शास्त्र जैनमतके वचनोसें रचे गये है, वा जैन मत बौद्धायनादि शास्त्रोंसें रचा गया है, जेकर कोइ यह अनुमान शके श्री महावीरजीसें बौद्धायनादि शास्त्र पहिले रचे गए है, इस वास्ते जैनमत पीठेसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हुआ है, यह माननाभी ठीक नही, क्योंकि श्री महावीरजीसें २५० वर्ष पहिलें श्री पार्श्वनाथजी और तिनसें पहिले श्री नेमिनाथादि तीर्थंकर हुए है, तिनके वचन लेके बौद्धायनादि शास्त्र रचे गए है, जैनी ऐसे मानते है, जेकर कोइ ऐसे मानता होवे कि जैनमत थोडा है और ब्राह्मण मत बहुत है, इस वास्ते थोडे मतसें बडा मत रचा क्यों कर सिद्ध होवे, यह अनुमान अतीत कालकी अपेक्षाए कसा मानना ठीक नही, क्योंकि इस हिंदुस्तानमें बुद्धके जीते हुए बुद्धमत विस्तारवंत नही था, परंतु पीछेसे ऐसा फैलाके ब्राह्मणोका मत बहुतही तुच्छ रह गया था, इसी तरे कोइ मत किसी कालमे अधिक हो जाता है, और किसी कालमे न्यून हो जाता है, इस वास्ते थोडा और बडा मत देखके थोडे मतको षेडेसे रचा मानना ये अनुमान सच्चा नही है, नद मोक्षमूलरने यह तो अनुमान करके अपने पुस्तकमें लिखा है कि वेदोंके दोभाग और मंत्रभागके रचेकों २९०० वा ३१०० सौ वर्ष हुए है, तो फेर बौद्धायनादि शास्त्र बहुत पुराने रचे हुए क्यों कर सिद्ध होवेंगे, इस वास्ते अपने मनकल्पित अनुमानसें जो कल्पना करनी सो सर्व सत्य नही हो शक्ती है, इस वास्ते अन्य मतोंमे जो ज्ञान है सो सर्व जैन मतमें है, परंतु जैनमतका जो ज्ञान है सो किसी मतमे सर्व नही है, इस वास्ते जैन मतके द्वादशांगोके ही किंचित वचन लेके लोकोने मनकल्पित उसमें कुछ अधिक मिलाके मत रच लीनै है, हमारे अनुमानसें तो यही सिद्ध होता है.

प्र.१४४. कोइ यूरोपियन विद्वान् ऐसे कहता है कि बौद्धमतके पुस्तक जैन मतसें चढते है ?

उ. जेकर श्लोक संख्या मे अधिक होवे अथवा गिनतिमें अधिक होवे अथवा कवितामें अधिक होवे, तबतो अधिकता कोइ माने तो हमारी कुछ हानि नही है, परंतु जे कर ऐसे मानता होवे के बौद्ध पुस्तकोमें जैन पुस्तकोंसे धर्मका स्वरूप अधिक कथन करा है, यह मानना बिलकुल भूल संयुक्त मालुम होता है, क्योंकि जैन पुस्तकोंमें जैसा धर्मका रूप और धर्म नीतिका स्वरूप कथन करा है, वैसा सर्व दुनीयां के पुस्तको में नही है.

प्र.१४५. जैन के पुस्तक बहुत थोडे है, और बौद्धमतके पुस्तक बहुत है, इस वास्ते अधिकता है ?

उ. संपति काल में जौ जैनमतके पुस्तक है वे सर्व किसी जैनीनेभी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नही देखे है, तो यूरोपीयन विद्वान कहां से देखे, क्योंकि पाटन और जैसलमेरमें ऐसे गुप्त भंकार पुस्तकों के है कि वे किसी इंग्रेजनेभी नही देखे है, तो फेर पूर्वोक्त अनुमान कैसे सत्य होवे.

प्र.१४६. जैनमतके पुस्तक जो जैनी रखते है सो किसीकों दिखाते नही है, इसका क्या कारण है ?

उ. कारण तो हमकों यह मालुम होता है कि मुसलमानोंकी अमलदारी में मुसलमानोने बहुत जैनमतोपरि जुल्म गुजारा था, तिसमें सैंकडो जैनमतके पुस्तकों के भंडार बाल दीये थे, और हजारो जैनमतके मंदिर तोडके मसजिदे बनवा दीनी थी. कुतब दिल्ली अजमेर जुनागढके किलेमें प्रभास पाटणमें रांदेर, भरूचमें इत्यादि बहुत स्थानो में जैन मंदिर तोडके मसजिदो बनवाइ हुइ खडी है, तिस दिनके भरे हूए जैनि किसीकोंभी अपने पुस्तक नही दिखाते है, और गुप्त भंडारोंमें बंध करके रख छोडे है.

प्र.१४७. इस कालमें जो जैनी अपने पुस्तक किसीकों नही दिखाते है, यह काम अब है वा नही ?

उ. जो जैनी लोक अपने पुस्तक बहुत यत्नसें रखते है यह तो बहुत अच्छा काम करते है, परंतु जैसलमेरमें जो भंडारके आगे पथ्थरकी भीत जिनके भंडार बंध कर छोडा है, और कोइ उसकी खबर नही लेता है, क्या जाने व पुस्तक मट्टी हो गये है के शेष कुछ रह गये है, इस हेतुसें तो हम इस काल के जैन मतीयोंको बहुत नालायक समझते है.

प्र.१४८. क्या जैनी लोकों के पास धन नही है, जिससें वे लोक अपने मतके अति उत्तम पुस्तकों का उद्धार नही करवाते है ?

उ. धनतो बहुत है, परंतु जैनी लोकों की दो इंद्रिय बहुत जबरदस्त हो गइ है, इस वास्ते ज्ञान भंडार की कोइभी चिंता नही करता हैं.

प्र.१४९. वे दोनो इंद्रियो कौनसी है जो ज्ञानका उद्धार नही होने देती है ?

उ. एकतो नाक और दूसरी जिव्हा, क्योंकि नाक के वास्ते अर्थात् अपनी नामदारीके वास्ते लाखों रुपइये लगा के जिन मंदिर बनवाने चले जाते है, और जिव्हाके वास्ते खाने मे लाखों रुपहये खरच करते है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चूरमेआदिकके लडुयों की खबर लीये जाते है, परंतु जीर्ण भंडारके उद्धार करणेकी बाततो क्या जाने, स्वप्नमेभी करते होवेंगके नही.

प्र.१५०. क्या जिन मंदिर और साहम्मिवत्सल करने में पाप है, जो आप निषेध करते हो ?

उ. जिन मंदिर बनवानेका और साहाम्मिवत्सल करनेका फलतो स्वर्ग और मोक्षका है, परंतु जिनेश्वर देवनेतो ऐसे कहाकि जो धर्मक्षेत्र बिगडता होवे तिसकी सार संसार पहिले करनी चाहिये, इस वास्ते इस कालमें ज्ञान भंडार बिगडता है, पहिले तिसका उद्धार करना चाहिये. जिन मंदिरतो फेरभी बन सकते है, परंतु जेकर पुस्तक जाते रहेंगे तो फेर कोन बना सकेगा।

प्र.१५१. जिन मंदिर बनवाना और साहम्मिवत्सल करना, किस रीतका करनां चाहिये ?

उ. जिन गामके लोक धनहीन होवें, जिन मंदिर न बना सकें, और जिन मार्गके भक्त होवे, तिस जगे आवश्य जिन मंदिर करानां चाहिये और श्रावकका पुत्र धनहीन होवे तिसकों किसीका रुजगार में लगाके तिसके कुटंबका पोषण होवे ऐसे करे, तथा जिस काममें सीदाता होवे तिसमें मदद करे. यह साहम्मिवत्सल है, परंतु यह न समझनांके हम किसिजगे जिन मंदिर बनानेकों और बनिये लोकों कें जिमावने रुप साहम्मिवत्सलका निषेध करते है, परंतु नामदारीके वास्ते जिन मंदिर बनवाने में अल्प फल कहते है, और इस गामके बनीयोने उस गामके बनियोंकों जिमाया और उस गामवालोंने इस गामके बनियोंकों जिमाया, परंतु साहम्मिकों साहाय्य करने की बुद्धिसें नही, तिसकों हम साहमिवत्सल नही मानते है, किंतु गधे खुरकनी मानते है.

प्र.१५२. जैनमततो तुमारे कहनेसें हमको बहुत उत्तम मालुम होता है, तो फेर यह मत बहुत क्यों नही फैला है ?

उ. जैनमतके कायदे ऐसे कठिन है कि तिन उपर अल्प सत्त्ववाले जिव बहुत नही चल सकते है, गृहस्थका धर्म और साधुका धर्म बहुत नियमोसें नियंत्रित है, और जैनमतका तत्त्व तो बहुत जैन लोकभी नही जान सकते है, तो अन्य मतवालोंको तो बहुतही समझना कितनें है, बौद्धमतके गोविंदआचार्यने भरुचमें जैनाचार्यसें चरचामे हार खाइ, पीछे जैनके तत्व जानने वास्ते कपटसें जैनकी दीक्षा लीनी. कितनेक जैनमतके शास्त्र पढके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

फेर बौद्ध बन गया, फेर जैनाचार्योके साथ जैन मतके खंडन करने में कमर बांधके चरचा करी, फेरभी हारा, फेर जैनकी दीक्षा लीनी, फेर हारा, इसीतरें कितनी वार जैनशास्त्र पढे, परंतु तिनका तत्व न पाया, पिछली विरीया तत्व पाया तो फेर बौद्ध नही हुआ ! जैनमत समझनां और पालनां दोनो तरेसें कठिन है, इस वास्ते बहुत नही फैला है, किसी कालमे बहुत फैलाभी होवेगा, क्या निषेध है, इसीतरे मीमांसाका वार्तिककार कुमारिल भदने और किरणावलिके कर्त्ता उदयननेभी कपटसें जैन दीक्षा लीनी, परंतु तत्व नही प्राप्त हुआ.

प्र.१५३. जैनमतमें जो चौदहपूर्व कहे जाते है, वे कितनेक बडेथे और तिनमें क्या क्या कथन था, इसका संक्षेपसें स्वरूप कथन करो ?

उ. इस प्रश्नका उत्तर अगले यंत्रसें देख लेनां.

पूर्व नाम	पद संख्या	शाहीलिख	विषय क्या है नेमेंकितनी
उत्पाद पूर्व १	एक करोड पद १००००००	१ एक हाथी जितने शाहीके ढेरसें लिखा जावे	सर्व द्रव्य और सर्व पर्यायांकी उत्पत्ति का स्वरूप कथन करा है
आग्रायणी पूर्व २	९६००००० छानवेलाख पद.	२ हाथीप्रमा ण शाही सें एवं सर्वत्र.	सर्व द्रव्य और सर्व पर्याय और वं जी व विशेषांके प्रमाण का कथन है.
वीर्यप्रवाद पूर्व ३	सित्तरलाख पद. ७००००००	४ हाथी प्रमाण. और सर्व	कर्मसहित और कर्म रहित सर्व जीवांका अजीव पदार्थोके वीर्य अर्थात् शक्ति के स्वरूप का कथन है.
अस्ति नास्ति प्रवाद	साठलाख पद ६०००००	८ हाथी प्रमाण.	जो लोक में धर्मास्ति कायादि अस्तिरूप है और जो खर शृंगादि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूर्व ४			नास्तिरूप है तिस का कथन है अथवा सर्व वस्तु स्वरूप कर के अस्तिरूप है और पररूप करके नास्ति रूप है ऐसा कथन है.
ज्ञान प्रवाद पूर्व ५	एक करोड पद १०००००० १ एक पद न्यून.	१६ हाथी प्रमाण	पांचो ज्ञान मति आदि तिनका महा, विस्तार में कथन है.
सत्यप्रवाद पूर्व ६	एककरोड पद १०००००० ६ पद अधिक.	३२ हाथी प्रमाण.	सत्य संयम वचन इन तीनोका विस्तार से कथन है.
आत्मप्रवाद वाद पूर्व स्वरूप ७	छव्वीस करोड पद. २६०००००००	६४ हाथी प्रमाण	आत्मा जीव तिसका सातसौ ७०० नयके मतोंसे कथन करा है.
कर्म्मप्रवाद पूर्व ८	एक करोड अस्सी हजार. १००८००००	१२८ हाथी प्रमाण	ज्ञानावरणीयादि अष्ट कर्मका प्रकृति स्थिति अनुभाव प्रदेशादि सें स्वरूपका कथन करा है.
प्रत्या ख्यान प्रवाद पूर्व. ९	चोरासीलाख पद. ८४०००००	२५६ हाथी प्रमाण.	प्रत्याख्यान त्याग ने योग्य वस्तुयोका और त्यागका विस्ता रसें कथन करा है.
विद्यानु प्रवाद पू र्व. १०	एक करोड दस लाख पद. ११००००००	५१२ हाथी प्रमाण.	अनेक अतिशयवंत चमत्कार करनेवाली अनेक विद्यायोंका कथन है.
अवंध्य	छव्वीस करोड	१०२४ हा	जिसमें ज्ञान, तप,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूर्व.११	पद. २६००००००	प्रमाण थी	संयमादिका शुभ फल और सर्व प्रमादादि पापोंका अशुभ फल कथन करा है
प्राणायु पूर्व १२	एक करोड पचाश लाख. १५००००००	२०४८ हाथी प्रमाण	पांच इंद्रिय और मनबल, प्रमाण वचनबल, कायाबल और उच्छ्वास निःश्वास और आयु इन दशो प्राणाका जहां विस्तार में स्वरूप कथन करा है.
क्रिया विशाल पूर्व. १३	नव करोड पद. ९०००००००	४०९६ हाथी प्रमाण शाही सें लिखा जावे	जिसमे कायक्यादि क्रिया वा संयमक्रिया छंदक्रियादि क्रिया योंका कथन है.
लोक विं दुसार पूर्व १४	साढेवारा करोड पद. १२५०००००००	८१९२ हाथी प्रमाण.	लोक में वा श्रुतज्ञान लोक में अक्षरोपरि षिंदु समान सार सर्वोत्तम सर्वाक्षरोंके मिलाप जाननेकी लब्धिका हेतु जिसमें है.

प्र.१५४. जैन मतके पंच परमेष्टिकी जगे प्राचीन और नवीन मत धारीयोने अपनी बुद्धि अनुसारे लोकोंने अपने अपने मतमें किस रीते सें कल्पना करी है, और जैनी इस जगतकी व्यवस्था किस हेतु सें किस रीतीसें मानते है ? उ. मतधारीयोने जो जैनमतके पंच परमेष्टीकी जगे जूठी कल्पना खडी करी है, सो नीचले यंत्रसें देख लेनां,

जैनमत १	अरिहंत १	सिद्ध २	आचार्य ३	उपाध्याय ४	साधु ५.
सांख्यमत २	कपिल	०	आसुरी	विद्यापाठक	सांख्य साधु
वैदिकमत ३	जैमनि	०	भद्रप्रभाकर	विद्यापाठक	०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नैयायिक मत ४	गौतम	एकईश्वर	आचार्य नैयायिक	न्याय पाठक	साधु
वेदांत मत ५	व्यास	एकब्रह्म	आचार्योस्ति	वेदांत पाठक	परम हंसादि
वैशेषिक मत ६	शिव	एकईश्वर	कणाद	पाठक	साधु
यहूदी मत ७	मूसा	एकईश्वर	अनेक	पाठक	उपदेशक
इसाइमत ८	ईशा	एकईश्वर	पथर समत्त्यादि	पाठक	पादरी
मुलसमान मत ९.	महम्मद	एकईश्वर	अनेक	पाठक	फकीर
शंकर मत १०	शंकर	एकब्रह्म	आनंदगिरी आदि	शंकरभाष्यादि पाठक	गिरिपुरि भारती आदि
रामानुज मत ११.	रामानुज	एकईश्वर रामचंद्र	अनेक	रामानुज मत पाठक	साधु वैश्नव
वलभ मत १२.	वल्लभाचार्य	एक ईश्वर कृष्ण	अनेक	वल्लभ मत पाठक	तिस मत के साधु नही
कबीर मत १३.	कषीर	एक ईश्वर	अनेक	तन्मत पाठक	गृहस्थ वा साधु
नानक मत १४.	नानक	एक ईश्वर	अनेक	ग्रंथ पाठक	उदासी साधु
दादू मत १५.	दादू	एक ईश्वर	सुंदर दासादि	तत् ग्रंथ पाठक	दादू पंथी साधु
गोरख मत १६.	गोरख	एक ईश्वर	अनेक	तत् ग्रंथ पाठक	कानफटे योगी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सामीना रायण १७.	सामीनारायण	एक ईश्वर	स्त्री और परिग्रह धारी	तत् ग्रंथ पाठक	रंगे वस्त्र वाले धोले वस्त्रां वाले
दयानंद मत १८.	दयानंद	एक ईश्वर	अस्ति	तन्मत पाठक	साधु

इत्यादि इस तरे मतधारीयोंने पंच परमेष्टीकी जगे पांच २ वस्तु कल्पना करी है, इस वास्ते पंच परमेष्ठीके बिना अन्य कोइ सृष्टिका कर्त्ता सर्वज्ञ वीतराग ईश्वर नही है, निःकेवल लोकांको अज्ञान भ्रम सें सृष्टि कर्त्ताकी कल्पना उत्पन्न होती है, पूर्व पद्म कोइ प्रश्न करे के जेकर सर्व इस वीतराग ईश्वर जगतका कर्त्ता नही है, तो यह जगत अपने आप कैसे उत्पन्न हुआ, क्योंकि हम देखते है कर्त्ताके विना कुछभी उत्पन्न नही होता है, जैसे धकीलादि वस्तु तिसका उत्तर है परीक्षको ! तुमकों हमारा अभिप्राय यथार्थ मालुम पाडता नही है, इस वास्ते तुम कर्त्ता ईश्वर कहते हो, जो इस जगत में बनाइ हुइ वस्तु है, तिसका कर्त्ता तो हम भी मानते है, जैसें घट, पट शराब, उदंचन, घडियाल, मकान, हाट, हवेली, संकल, जंजीरादि परंतु आकाश, काल, स्वभाव, परमाणु, जीव इत्यादि वस्तुयां किसीकी रची हुइ नही है, क्योंकि सर्व विद्वानोका यह मत है के जो वस्तु कार्य रूप उत्पन्न होती है तिसका उपादान कारण अवश्य होनां चाहिये. विना उपादानके कदापि कार्यकी उत्पत्ति नही होती है, जो कोइ विना उपादान कारण के वस्तुकी उत्पति मानता है, सो मूर्ख, प्रमाणका स्वरूप नही जानता है, तिसका कथन कोइ महा मूढ मानेगा, इस वास्ते आकाश १ आत्मा २ काल ३ परमाणु ४ इनका उपादान कारण कोइ नही है, इस रास्ते ये चारो वस्तु अनादि है, इनका कोइ रचने वाला नही है, इस्सें जो यह कहां नै कि सर्व वस्तुयों ईश्वरने रची है सो मिथ्या है, अब शेष वस्तु पृथ्वी १ पानी २ अग्नि ३ पवन ४ वस्नपति ५ चलने फिरने वाले जीव रहे है, तथा पृथ्वीका भेद नरक, स्वर्ग, सूर्य, चंद्र, ग्रह, नक्षत्र, तारादि है, ये सर्व जड चैतन्यके उपादानसें बने है, जे जीव और जड परमाणुओंके संयोगसें वस्तु बनी है, वे उपर पृथ्वी आदि लिख आये है, ये पृथ्वी आदि वस्तु प्रवाह सें अनादि नित्य है, और पर्याय रूप करके अनित्य है, और ये जड चैतन्य अनंत स्वभाविक शक्तिवाले है, वे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनंत शक्तियां अपने २ कालादि निमित्तांके मिलने सें प्रगट होती है, और इस जगतमें जो रचना पीछे हुइ है, और जो हो रही है, और जो होवेगी, सर्व पांच निमित्त उपादान कारणों सें होती है, वे कारण येह है, काल १ स्वभाव २ नियति ३ कर्म ४ उद्यम ५, इन पांचोके सिवाय अन्य कोइ इस जगतका कर्त्ता और नियंता ईश्वर किसी प्रमाण सें सिद्ध नही होता है, तिसकी सिद्धीका खंडन पूर्वे पहिले सब लिख आए है, जैसे एक बीज में अनंत शक्तियां है, वृक्षमे जितने रंग विरंगे मूल १ कंद २ स्कंध ३ त्वचा ४ शाखा ५ प्रवाल ६ पत्र ७ पुष्प ८ फल ९ बीज १० प्रमुख विचित्र रचना मालुम होती है, सो सर्व बीजमें शक्ति रूपसें रहती है, जब कोइ बीजको जलाके भस्म करे तब तिस बिजके परमाणुयोमें पूर्वोक्त सर्व शक्तियां रहती है, परंतु विना निमित्त के एकभी शक्ति प्रगट नही होती है, जेकर बीज में शक्तियां न मानीये तबतो गेहूंके बीजसें आंब और बंबूल मनुष्य, पशु, पक्षी आदिभी उत्पन्न होने चाहिये. इस वास्ते सर्व वस्तुयोंमे अपनी २ अनंत शक्तियां है. जैसा २ निमित्त मिलता है तैसी २ शक्ति वस्तु में प्रगट होती है, जैसे बीज कोठिमें पडा है तिसमें वृक्षके सर्व अवयवों के होने की शक्तियां है, परंतु बीज के काल विना अंकुर नही हो सकता है, कालतो सृष्टि भुक्ता है, परंतु भूमि और जलके संयोग विना अंकुर नही हो सकता है, काल भूमि जलतो मिले हे परंतु विना स्वभावके कंकर बोवेतो अंकुर नही होवे है. बीजका स्वभाव १ काल २ भूमि ३ जलादितो मिले है, परंतु बीजमे जो तथा तथा भवन अर्थात् होनेवाली अनादि नियतिके विना बीज तैसा लंबा चौडा अंकुर निर्विघ्नसें नही दे सकता है, जो निर्विघ्नपणे तथा तथा रूप कार्यको निष्पन्न करे सो नियति, और जेकर वनस्पतिके जीवोंने पूर्व जन्ममें ऐसे कर्म न करे होते तो वनस्पतिमे उत्पन्न न होते, जेकर बोनेवाला न होवे तथा बीज स्वयं अपने भारीपणे करके पृथ्वीमें न पकेतो कदापि अंकुर उत्पन्न न होवे, इस वास्ते बीजाकुंरकी उत्पत्तिमें पांच कारण है, काल १ स्वभाव २ नियति ३ पूर्वकर्म ४ उद्यम ५ इन पांचोके सिवाय अन्य कोइ अंकुर उत्पन्न करनेवाला कोइ ईश्वर नही सिद्ध होता है, तथा मनुष्य गर्भमें उत्पन्न होता है तहांभी पांच करण से ही होता है, गर्भ धारणे के कालमें ही गर्भ रहै १, गर्भकी जगाका स्वभाव गर्भ धारण का होवे तो ही गर्भ धारण करे २, गर्भका तथा तथा निर्विघ्नपनेसें होना नियतिसें है ३, जीवोंने पूर्व जन्ममें मनुष्य होने के कर्म करे है तोही मनुष्यपणे उत्पन्न

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होते है, ४ माता पिता और कर्म सें आकर्षण न होवे तो कदापि गर्भ उत्पन्न न होवे, ५ इसीतरे जो वस्तु जगत में उत्पन्न होती है सो इनही पांचो निमित्त कारणों सें और उपादान कारणो सें होती है, और पृथ्वी प्रवाह सें सदा रहेगी और पर्याय रूप करके तो सदा नाश और उत्पन्न होती रही है, क्योंकि सदा असंख जीव पृथ्वी पणे ही उत्पन्न होते है, और मरते है तिन जीवां के शरीरों का पिंडही पृथ्वी है. जो कोइ प्रमाणवेत्ता ऐसे समझता है के कार्य रूप होने सें पृथ्वी एक दिनतो अवश्य सर्वथा नाश होवेगी, घटवत्. उत्तर-जैसा कार्य घट है तैसा कार्य पृथ्वी नही है, क्योंकि घटमें घटपणे उत्पन्न होनेवाले नवीन परमाणु नही आते है, और पृथ्वी में तो सदा पृथ्वी शरीरवाले जीव असंख उत्पन्न होते है, और पूर्वले नाश होते है. तिन असंख जीवां के शरीर मिलने और बिछडनेसे पृथ्वी तैसाही रहेगी. जैसे नदीका पाणी अगला २ चला जाता है, और नवीन नवीन आने सें नदी वैसीही रहती है, इस वास्ते घटरूप कार्य समान पृथ्वी नही है, इस वास्ते पृथ्वी सदाही रहेगी और तिसके उपर जो रचना है, सो पूर्वोक्त पांच कारणोसें सदा होती रहेगी. इस वास्ते पृथ्वी अनादि अनंत काल तक रहेगी, इस वास्ते पृथ्वीका कर्त्ता ईश्वर नही है, और जो कितनेक भोलें जीव मनुष्य १ पशु २ पृथ्वी ३, पवन ४, वनस्पतिकों तथा चंद्र, सूर्यकों देखके और मनुष्य पशुयोके शरीरकी हड्डीयांकी रचना आंखके पडदे खोपरीके टुकडे नसा जालादि शरीरोंकी विचित्र रचना देखके हरान होते है, जब कुछ आगा पीछा नही सुझता है, तब हार कर यह कह देते है, यह रचना ईश्वरके विना कौन कर सकता है, इस वास्ते ईश्वर कर्त्ता २ पुकारते है, परंतु जगत् कर्त्ता मानने सें ईश्वरका सत्यानाश कर देते है, सो नही देखते है. काणी हथनी एक पासेकी ही वेलडीयां खाती है, परंतु हे भोले जीव जेकर तेने अष्ट कर्मके १४८ एकसौ अडतालीस भेद जाने होते, तो अपने विचारे ईश्वरकों काहेकी जगत कर्त्ता रूप कलंक देके तिसके ईश्वरत्वकी हानी करता, क्योंकि जो जो कल्पना भोले लोकोनें ईश्वर में करी है, सो सो सर्व कर्म द्वारा सिद्ध होती है, तिन कर्मांका स्वरूप संक्षेप मात्र यहां लिखते है, जेकर विशेष करके कर्म स्वरूप जानने की इच्छा होवे तदा षटकर्म ग्रंथ १ कर्म प्रकृति प्राभृत २ पंचसंग्रह ३ शतक ४ प्रमुख ग्रंथ देख लेने, प्रथम जैनमतमें कर्म किसेकों कहते तिसका स्वरूप लिखते है.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैसें तेलादिसें शरीर चोपडीने कोइ पुरुष नगरमें फिरे, तब तिसके शरीर उपर सूक्ष्म रज पडनेसे तेलादिके संयोगसें परिणामांतर होके मल रूप होके शरीरसें चिप जाती है, तैसेही जीवां के जीवहिंसा १ जुठ २ चोरी ३ मैथुन ४ परिग्रह ५ क्रोध ६ मान ७ माया ८ लोभ ९ राग १० द्वेष ११ कलह १२ अभ्याख्यान १३ पैशुन १४ परपारिवाद १५ रतिअरति १६ मायामृषा १७ मिथ्यादर्शन शल्य १८ रूप जो अंतः करणके परिणाम है, वे तेलादि चीकास समान है, तिनमें जो पुद्गल जडरूप मिलता है, तिसकों वासना रूप सूक्ष्म कारमण शरीर कहते है, यह शरीर जीव के साथ प्रवाह सें अनादि संयोग संबंध वाला है, इस शरीर में असंखतरेंकी पाप पुण्य रूप कर्म प्रकृति समा रही है. इस शरीरको जैनमतमें कर्म कहते है. और सांख्यमतवाले प्रकृति, और वेदांति माया, और नैयायिक वैशेषिक अद्रष्ट कहते. कोइक मतवाले क्रियमाण संचित प्रारब्धरूप भेद करते है, बौद्ध लोक वासना कहते है, विना समझके लोक इन कर्माको ईश्वरकी लीला व कुदरत कहते है, परंतु कोइ मतवाला इन कर्माका यथार्थ स्वरूप नही जानता है, क्योंकि इनके मतमें कोइ सर्वज्ञ नही हुआ है, जो यथार्थ कर्माका स्वरूप कथन करे, इस वास्ते लोक भ्रम अज्ञानके वश होकर अनेक मनमानी उटपटंग जगत कर्त्तादिककी कल्पना करके, अंधाधुंध पंथ चलाये जाते है, इस वास्ते भव्य जीवां के जानने वास्ते आठ कर्मका किंचित् स्वरूप लिखते है. ज्ञानावरणीय १ दर्शना वरणीय २ वेदनीय ३ मोहनीय ४ आयु ५ नाम ६ गोत्र ७ अंतराय ८ इनमे सें प्रथम ज्ञानावरणीय के पांच भेद है, मतिज्ञानावरणीय १ श्रुतज्ञानावरणीय २ अवधिज्ञानावरणीय ३ मनः पर्यायज्ञानावरणीय ४ केवलज्ञानावरणीय ५. तहां पांच इंद्रिय और छट्ठा मन इन छहो द्वारा जो ज्ञान उत्पन्न होवे, तिसका नाम मतिज्ञान है. तिस मतिज्ञानके तीनसौ छत्तीस ३३६ भेद है. वे सर्व कर्मग्रंथकी वृत्तिसें जानने. तीन सर्व ३३६ भेदांका आवरण करनेवाला मतिज्ञानावरण कर्मका भेद है, जिस जीव के आवरण पतला हुआ है. तिस जीवकी बहुत बुद्धि निर्मल है, जैसें जैसे आवरण के पतलेपणेकी तारतम्यता है, तैसें तैसें जीवां मे बुद्धिकी तारतम्यता है. यद्यपि मतिज्ञान मतिज्ञानावरण के क्षयोपशम सें होता है, तोभी तिस क्षयोपशमके निमित्त मस्तक, शिर, विशाल मस्तक मे भेज्जा, चरबी, चीकास, मांस, रुधिर, निरोग्य हृदय, दिल निरुपद्रव और सूंठ, ब्राह्मी वच, धृत, दूध, शाकर, प्रमुख अच्छी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वस्तुका खान पानादिसें अधिक अधिकतर मतिज्ञानारवणके क्षायोपशमके निमित्त है, और शील संतोष महाव्रतादि करणी, और पठन करानेवाला विद्यावान् गुरू, और देश काल श्रद्धा, उत्साह, परिश्रमादि ये सर्व मतिज्ञानारवण के क्षयोपशम होने के कारण है. जैसें जैसें जीवां कों कारण मिलते है तैसी तैसी जीवांकी बुद्धि होती है. इत्यादि विचित्र प्रकार सें मतिज्ञानावरणीका भेद है. इति मतिज्ञानावरणी १. दूसरा श्रुतज्ञानावरण श्रुतज्ञानका आवरण श्रुतज्ञान, तिसकों कहते है, जो गुरु पासों सुनके ज्ञान होवे और जिसके बलसें अन्य जीवांकों कथन करा जावे, तिसके निमित्त पूर्वोक्त मति ज्ञानवाले जानने, क्योंके ये दोनो ज्ञान एक साथ ही उत्पन्न होते है, परं इतना विशेष है, मतिज्ञान वर्त्तमान विषयिक होता है, और श्रुतज्ञान त्रिकाल विषय होता है, श्रुतज्ञानके चौदह १४ तथा वीस भेद २० है, तिनका स्वरूप कर्मग्रंथसें जानना. पठन पाठनादि जो अक्षरमय वस्तुका ज्ञान है, सो सर्व श्रुतज्ञान है, तिसका आवरण आच्छादन जो है, जिसकी तारतम्यतासें श्रुतज्ञान जीवां कों विचित्र प्रकारका होता है, तिसका नाम श्रुतज्ञानावरणीय है, इसके क्षायोपशमके वेही निमित्त है, जौनसें मतिज्ञान के है, इति श्रुतज्ञानावरण २. तीसरा अवधिज्ञानका आवरण अवधिज्ञानावरणीय ३. ऐसेंही मनः पर्यायज्ञानावरण ४. केवलज्ञानावरण ५. इन पांचों ज्ञानो में सें पिछले तीन ज्ञान इस कालके जीवांकों नही है, सामग्री और साधन के अभाव सें. इस वास्ते इनका स्वरूप नंदी आदि सिद्धांतोसें जानना. ये पांच भेद ज्ञानावरण कर्मके है. यह ज्ञानावरणकर्म जिन कर्त्तव्यों सें बांधता है, अर्थात् उत्पन्न करके अपने पांचों ज्ञान शक्तियांका आवरण कर्त्ता है सो येह है, मति, श्रुत प्रमुख पांच ज्ञानकी १ तथा ज्ञानवंतकी २ तथा ज्ञानोपकरण पुस्तकादिकी ३ प्रत्यनीकता अर्थात् अनिष्टपणा प्रतिकुलपणा करे, जैसें ज्ञान और ज्ञानवंतका बुरा होवे तैसें करे १. जिस पांसों पढा होवे तिस गुरु का नाम न बतावे, तथा जानी हुइ वस्तुकों अजानी कहे २, ज्ञानवंत तथा ज्ञानोपकरणका अग्निशास्त्रादिकसें नास करे ३, तथा ज्ञानवंत उपर तथा ज्ञानोपकरण उपर प्रद्वेष अंतरंग अरुची मस्तर ईर्ष्या करे ४, पढनेवालों को अन्न वस्त्र वस्ती देनेका निषेध करें, पढनेवालोंको अन्य काममें लगावे, बातों मे लगावे, पठन विच्छेद करे ५, ज्ञानवंतकी अति अवज्ञा करे, यह हीन जाति वाला है, इत्यादि मर्म प्रगट करने के वचन बोले, कलंक देवे, प्राणांत कष्ट देवे, तथा आचार्य उपाध्यायकी अविनय मत्सर करे,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अकालमे स्वाध्याय करे, योगोपधान रहित शास्त्र पढे, अस्वाध्यायमें स्वाध्याय करे, ज्ञानके उपकरण पास हूयां दिसा मात्रा करे, ज्ञानोपकरणकों पग लगावे, ज्ञानोपकरण सहित मैथुन करे, ज्ञानोपकरणकों थूंक लगावे, ज्ञानके द्रव्य का नाश करे, नाश करते को मना न करे, इन कामों सें ज्ञानावरणीय पंच प्रकारका कर्म बांधे, तिसके उदय क्षयोपशमसें नाना प्रकारकी बुद्धिवाले जीव होते महाव्रत संयम तपसें ज्ञानावरणीय कर्म क्षय करे, तब केवलज्ञानी सर्व वस्तुका जानने वाला होवे, इति प्रथम ज्ञानावरणीय कर्मका संक्षेप मात्र स्वरूप.१

अथ दूसरा दर्शनावरणीय कर्म तिसके नव ९ भेदहै. चक्षुदर्शनावरण १ अचक्षुदर्शनावरण २ अवधिदर्शनावरण ३ केवल दर्शनावरण ४ निद्रा ५ निद्रानिद्रा ६ प्रचला ७ प्रचला प्रचला ८ स्त्यानर्द्धी ९ अब इनका स्वरूप लिखते है. सामान्य रूप करके अर्थात् विशेष रहित वस्तुके जानने की जो आत्माकी शक्ति है तिसकों दर्शन कहते है, तिनमें नेत्रांकी शक्तिकों आवरण करे सो चक्षुदर्शनावरणीय कर्मका भेद है, इसके क्षयोपशमकी विचित्रतासें आंखवाले जीवों की आंख द्वारा विचित्र तरेंकी द्रष्टि प्रवर्त्ते है, इसके क्षयोपशम होने में विचित्र प्रकारके निमित्त है, इति चक्षुदर्शनावरणीय १. नेत्र वर्जके शेष चारों इंद्रियोकों अचक्षुदर्शन कहते है, तिनके सुनने, सूंघने, रस लेने, स्पर्श पिछाननेका जो सामान्य ज्ञान है सो अचक्षुदर्शन है, चारो इंद्रियोंकी शक्तिका आच्छादन करने वाला जो कर्म है तिसको अचक्षुदर्शन कहते है, इसके क्षयोपशम होने में अंतरंग बहिरंग विचित्र प्रकारके निमित्त है, तिन निमित्तों द्वारा इस कर्मका क्षय उपशम जैसा जैसा जीवां के होता है तैसी ऐसी जीवों की चार इंद्रियकी स्व स्व विषयमें शक्ति प्रगट होती है, इति अचक्षुदर्शनावरणी २. अवधिदर्शनावरणीय, और केवलदर्शनावरणीयका स्वरूप शास्त्रसें देख लेनां, क्योंकि सामग्रीके अभावसें ये दोनो दर्शन इस काल क्षेत्र के जीवां कों नही है, एवं दर्शनावरणीयके चार भेद हुए ४. पांचमा भेद निद्रा जिसके उदयसें सुखें जागे सो निद्रा १ जो बहुत हलाने चलाने सें जागे सो निद्रा निद्रा २ जो बैठेकों नींद आवे सो प्रचला ३ जो चलते कों आवे सो प्रचला प्रचला ४ जो नींदमें उसके अनेक काम करे नींद में शरीर में बल बहुत होवे है, तिसका नाम स्त्यानर्द्धी निद्रा है ५. पांच इंद्रियां के ज्ञान मे हानि करती

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है, इस वास्ते दर्शनावरणीयकी प्रकृति है, एवं ९ भेद दर्शनावरणीय कर्म के हुए, इस कर्मके बांधने के हेतु ज्ञानावरणीयकी तरे जानने, परं ज्ञानकी जगे दर्शन पद कहनां, दर्शन चक्षु अचक्षु आदि, दर्शनी साधु आदि जीव, तिनकी पांच इंद्रियाका बुरा चिंते, नाश करे अथवा सम्मति तत्वार्थ द्वादशार नयचक्रवाल तर्कादि दर्शनप्रभावक शास्त्रके पुस्तक वाल तर्कादि दर्शनअभावक शास्त्र के पुस्तक तिनका प्रत्यनीकपणादि करे तो दर्शनावरणीय कर्मका बंध करे, इति दूसरा कर्म २.

अथ तीसरा वेदनीय कर्म तिसकी दो प्रकृति है, साता वेदनीय १ असाता वेदनीय २ साता वेदनीय सें शरीर कों अपने निमित्त द्वारा सुख होता है, और असाता वेदनीय के उदय सें दुःख प्राप्त होता है, एवं दो भेदों के बांधने के कारण प्रथम साता वेदनीयके बंध करणे के कारण गुरु अर्थात् अपने माता पिता धर्माचार्य इनकी भक्ति सेवा करे १ क्षमा अपनें सामर्थके हुए दूसरायोंका अपराध सहन करना २ परजीवांकों दुःखी देखके तिनके दुःख मेटनेकी वांछा करे ३ पंच महाव्रत अनुव्रत निर्दूषणा पाले ४ दशविध चक्रवाल समाचारी संयम योग पालने सें ५ क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति अरति, शोक, भय, जुगुप्सा इनके उदय आया इनको निष्फल करे ६ सुपात्र दान, अभय दान, देता सर्व जीवां उपर उपकार करे, सर्व जीवांका हित चिंतन करे ७ धर्ममें स्थिर रहे, मरणांत कष्टकेभी आये, धर्म सें चलायमान न होवे, बाल वृद्ध रोगीकी वैयावृत्त करतां धर्मीकों धर्ममें प्रवर्त्ततां सहाय करे, चैत्य जिन प्रतिमाकी अच्छी भक्ति करतां सराग संयम पाले, देशव्रतीपणा पाले, अकाम निर्जरा अज्ञान तप करें, सौच्य सत्यादि सुंदर अंतः करणकी वृत्ति प्रवर्त्तावे तो साता वेदनीय कर्म बांधे, इति साता वेदनीयके बंध हेतु कहे १ इनसें विपर्यय प्रवर्त्ते तो असाता वेदनीय बांधे २ इति वेदनीय कर्म स्वरूप ३.

अथ चौथा मोहनीय कर्म तिसके अठावीस भेद है, अनंतानुबंधी क्रोध १ मान २ माया ३ लोभ ४ अप्रत्याख्यान क्रोध ५ मान ६ माया ७ लोभ ८ प्रत्याख्यानावरण क्रोध ९ मान १० माया ११ लोभ १२ संज्वलका क्रोध १३ मान १४ माया १५ लोभ १६ हास्य १७ रति १८ अरति १९ शोक २० भय २१ जुगुप्सा २२ स्त्रीवेद २३ पुरुषवेद २४ नपुंसकवेद २५ सम्यक्त मोहनीय २६ मिश्र मोहनीय २७ मिथ्यात्व मोहनीय २८. अथ इनका स्वरूप लिखते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है, प्रथम अनंतानुबंधी क्रोध मान माया लोभ जां तक जीवे तां तक रहे, हटे नही, तिनमे सें अनंतानुबंधी क्रोध तो ऐसा कि जाव जीव सुधी क्रोध न छोडे, अपराधी कितनी आधीनगी करे तोभी क्रोध न छोडे, यह क्रोध ऐसा है जैसे पर्वतका फटना फेर कदापि न मिले मान पथ्थरके स्तंभ समान किंचित् मात्रभी न नमे, माया कठिन वांसकी जक समान सूधी न होवे, लोभ कृमिके रंग समान फेर उतरे नही. ये चारों जिसके उदय में होवे सो जीव मरके नरक में जाता है, और इस कषाय के उदय में जीवांकों सच्चे देवगुरु धर्मकी श्रद्धा रूप सम्यक्त नही होता है, ४ दूसरा अप्रत्याख्यान कषाय तिसकी स्थिति एक वर्षकी है. एक वर्ष तक क्रोध मान माया लोभ रहै तिनमें क्रोधका स्वरूप पृथ्वी के रेखा फाटने समान बडि यतन सें मिले, मान हाडके स्तंभे समान मुसकलसें नमे, माया मिंढेके सींगके बल समान सिधा कतनतासें होवे, लोभ नगरकी मोरीके कीचमके दाग समान, इस कषाय के उदय सें देशव्रतीपणा न आवे और मरके पशु तीर्यंचकी गतिमें जावे ८ तीसरी प्रत्याख्यानावरण कषाय तिसकी स्थिति चार मासकी है. क्रोध वालुकी रेखा समान, मान काष्ठके स्तंभे समान, माया बैलके मूत्र समान वांकी, लोभ गाडी के खंजन समान, इसके उदयसे शुध साधु नही होता है ऐसा कषायवाला मरके मनुष्य होता है १२ चौथी संज्वलनकी कषाय, तिसकी स्थिति एक पक्षकी. क्रोध पाणीकी लकीर समान, मान बांसकी शींखके स्तंभे समान, माया बांसकी छिल्लक समान, लोभ हलदी के रंग समान, इसके उदयसें वीतराग अवस्था नही होती है. इस कषायवाला जीव मरके स्वर्गमें जाता है १६ जिसके उदयसें हांसी आवे सो हास्य प्रकृति १७ जिसके उदयसें चित्तमें निमित्त निर्निमित्तसें रति अंतरमें खुशी होवे सो रति १८ जिसके उदयसें चित्तमे सनिमित्त निर्निमित्तसें दिलगीरी उदासी उत्पन्न होवें सो अरति प्रकृति १८ जिसके उदयसें इष्ट विजोगादिसें चित्तमें उद्वेग उत्पन्न होवे सो शोक मोहनीय प्रकृति २० जिसके उदय सें सात प्रकारका भय उत्पन्न होवे सो भय मोहनीय २१ जिसके उदय सें मलीन वस्तु देखी सूग उपजे सो जुगुप्सा मोहनीय २३ जिसके उदयसें स्त्रीके साथ विषय सेवन करने की इच्छा उत्पन्न होवे, सो पुरुषवेद मोहनीय २३ जिसके उदयसें पुरुषके साथ विषय सेवनेकी इच्छा उत्पन्न होवे, सो स्त्री वेद मोहनीय २४ जिसके उदय सें स्त्री पुरुष दोनों के साथ विषय सेवने की अभिलाषा उत्पन्न होवे, सो नपुंशकवेद मोहनीय, २५ जिसके उदय सें शुद्ध देव गुरु,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धर्मकी श्रद्धा न होवे सो मिथ्यात्व मोहनीय २६ जिसके उदयसें शुद्ध देव गुरु धर्म अर्थात् जैनमतके उपर रागभी न होवे, और द्वेषभी न होवे, अन्य मतकीभी श्रद्धा न होवे सो मिक्ष मोहनीय २७ जिसके उदयसें शुद्ध देव गुरु धर्मकी श्रद्धातो होवे परंतु सम्यक्तमें अतिचार लगावे सो सम्यक्त मोहनीय २८ इन २८ प्रकृतियोंमें आदिकी २५ पच्चीस प्रकृतिकों चारित्र मोहनीय कहते है, और उपली तीन प्रकृतियोंकों दर्शनमोहनीय कहते है एवं २८ प्रकृति रूप मोहनीय कर्म चौथा है, अथ मोहनीय कर्मके बंध होने के हेतु लिखते है. प्रथम मिथ्यात्व मोहनीय के बंध हेतु उन्मार्ग अर्थात् जे संसार के हेतु हिंसादिक आश्रव पापकर्म, तिनकों मोक्ष हेतु कहे तथा एकांत नयसें निःकेवल क्रिया कष्टानुष्टानसें मोक्ष प्ररु तथा एकांत नयसें निःकेवल ज्ञान मात्र सें मोक्ष कहे ऐसेही एकले विनयादिकसें मोक्ष कहै १ मार्ग अर्थात् अर्हत भाषित सम्यग् दर्शन ज्ञान चारित्ररूप मोक्ष मार्ग तिसमे प्रवर्त्तनेवाले जीवकों कुहेतु, कुयुक्ति, करके पूर्वोक्त मार्ग सें भ्रष्ट करे २ देवद्रव्य ज्ञान द्रव्यादिक तिनमें जो भगवानके मंदिर प्रतिमादिके काम आवे काष्य, पाषाण, मृतीकादिक तथा तिस देहरादिके निमित्त करा हुआ रूपा, सोनादि धन तिसका हरण करे, देहराकी भूमि प्रमुखकों अपनी कर लेवे, देवकी वस्तुसें व्यापार करके अपनी आजीवीका करे तथा देवद्रव्यका नाश करे, शक्ति के हुए देव द्रव्यके नाश करनेवाले को हटावे नही, ये पूर्वोक्त काम करनेवाला मिथ्याद्रष्टि होता है, सो मिथ्यात्व मोहनीय कर्मका बंध करता है, तथा दूसरा हेतु तीर्थंकर केवलीके अवर्णवाद बोले, निंदा करे तथा भले साधुकी तथा जिन प्रतिमाकी निंदा करे तथा चतुर्विध संघ साधु साध्वी श्रावक श्राविका का समुदाय तिसकी श्रुतज्ञानकी निंदा अवज्ञा हीलना करता हुआ, और जिन शासनका उड्डाह करता हुआ अयश करता कराता हुआ निकाचित महा मिथ्यात्व मोहनीय कर्म बांधे. इति दर्शन मोहनीयके बंध हेतु. ॥ अथ चारित्रमोहनीय कर्मके बंध हेतु लिखते है। चारित्र मोहनीय कर्म दो प्रकारका है, कषाय चारित्र मोहनीय १. नोकषाय चारित्र मोहनीय २. तिनमें सें कषाय चारित्र मोहनीयके १६ सोलां भेद हे, तिनके बंध हेतु लिखते है. अनंतानुबंधी क्रोध, मान माया, लोभमें प्रवर्त्ते तो सोलाही प्रकारका कषाय मोहनीय कर्म बांधे. अप्रत्याख्यानमे वर्त्ते तो उपल्या बारां कषाय बांधे. प्रत्याख्यानमें प्रवर्त्ते तो उपल्या आठ कषाय बांधे, संज्वलनमें प्रवर्त्ते तो चार संज्वलनका कषाय बांधे. इति कषाय चारित्र मोहनीयके बंध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हेतु. नोकषाय हास्यादि तिनके बंध हेतु यह है, प्रथम हास्य हांसी करे, भांड कुचेष्टा करे, बहुत बोलेतो हास्य मोहनीय कर्म बांधे १ देश देखनेके रससें, विचित्र क्रीडाके रससें, अति वाचाल होने सें कामण मोहन टूणा वगेरे करे, कुतुहल करे तो रति मोहनीय कर्म बांधे २. राज्य भेद करे, नवीन राजा स्थापन करे, परस्पर झडाइ करावे, दूसरायोंकों अरति उच्चाट उत्पन्न करे, अशुभ काम करने कराने में उत्साह करे, और शुभ कामके उत्साहकों भांजे, निष्कारण आर्त्तध्यान करे तो अरति मोहनीय कर्म बांधे ३. परजीवांकों त्रास देवे तो, निर्दय परिणामी भय मोहनीय कर्म बांधे ४. परकों शोक चिंता संताप उपजावे, तपावे तो शोक मोहनीय कर्म बांधे ५. धर्मी साधु जनोकी निंदा करे, साधुका मलमलीन गात्र देखि निंदा करे तो जुगुप्सा मोहनीय कर्म बांधे ६. शब्द रूप, रस, गंध, स्पर्शरूप, मनगती विषयमें अत्यंताशक्त होवे, दूसरे की इर्षा, करे, माया मृषा सेवे, कुटिल परिणामी होवे, पर स्त्रीसें भोग करे तो जीव स्त्रीवेद मोहनीय कर्म बांधे ७. सरल होवे, अपनी स्त्रीसें उपरांत संतोषी होवे, इर्षा रहित मंद कषायवाला जीव पुरुषवेद बांधे ८. तीव्र कषायवाला, दर्शनी दूसरे मतवालोंका शील अंग करे, तीव्र विषयी होवे, पशुकी घात करे, मिथ्याद्रष्टि जीव नपुंसकवेद बांधे ९. संयमीके दूषण दिखावे, असाधुके गुण बोले, कषायकी उदीरणा करता हुआ जीव चारित्र मोहनीय कर्म समुच्चय बांधे. इति मोहनीय कर्म बंध हेतु. यह मोहनीय कर्म मदिरेके नशेकी तरें अपने स्वरूपसें भ्रष्ट कर देता है. इति मोहनीय कर्मका स्वरूप संक्षेप मात्रसें पुरा हुआ ४.

अथ पांचमा आयुकर्म, तिसकी चार प्रकृति जिनके उदयसें नरक १ तिर्यंच २ मनुष्य ३ देव ४ भव में खैंचा हुआ जीव जावे है, जैसें चमकपाषाण लोहकों आकर्षण करता है, तिसका नाम आयुकर्म. नरकायु १ तिर्यंचायु २ मनुष्यायु ३ देवायु ४ प्रथम नरकायुके बंध हेतु कहते है. महारंभ चक्रवर्त्ती प्रमुखकी ऋद्धि भोगने में महामूर्त्ती परिग्रह सहित, व्रत रहित अनंतानुबंधी कषायोदयवान् पंचेंद्रिय जीवकी हिंसा निशंक होकर करे, मदिरा पीवे, मांस खावे, चौरी करे, जूया खेले, परस्त्री और वेस्या गमन करे, शिकार मारे कृतघ्नी होवे, विश्वासघाती, मित्र द्रोही, उत्सूत्र प्ररूपे मिथ्यामतकी महिमा बढावे, कृष्ण, नील, कापोत लेश्यासें अशुभ परिणामवाला जीव नरकायु

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बांधे १ तिर्यंचकी आयुके बंध हेतु यह है. गूढ हृदयवाला, अर्थात् जिसके कपटकी किसीकों खबर न पडि, धूर्त्त होवे, मुखसें मीठा बोले, हृदयमें कतरणी रखे, जूठे दूषण प्रकाशे, आर्त्तध्यानी इस लोक के अर्थे तप क्रिया करे, अपनी पूजा महिमाके नष्ट होने के भयसें कुकर्म करके गुरुआदिकके आगे प्रकाशे नही, जूठ बोले, कमथी देवे, अधिक लेवे, गुणवानकी इर्षा करे, आर्त्तध्यानी कृष्णादि तीन मध्यम लेश्यावाला जीव तिर्यंच गतिका आयु बांधे. इति तिर्यंचायु २ अथ मनुष्यायुके बंध हेतु मिथ्यात्व कषायका स्वप्नावेही मंदोदय वाला प्रकृतिका भद्रिक धूल रेखा समान कषायोदयवाला सुपात्र कुपात्रकी परीक्षा विना विशेष यश कीर्त्तिकी वांच्छा रहित दान देवे, स्वभावे दाने देनेकी तीव्र रुचि होवे, क्षमा, आर्जव, मार्दव, दया, सत्य शौचादिक मध्यम गुणामें वर्त्ते, सुसंबोध्य होवे, देव गुरुका पूजक, पूजाप्रिय कापोत लेश्याके परिणामवाला मनुष्य तिर्यंचादि मनुष्यायु बांधे ३ अथदेव आयु अविरति सम्यगद्रष्टि मनुष्य तीर्यंच देवताका आयु बांधे, सुमित्रके संयोगसें धर्मकी रुचिवाला देशविरति सरागसंयमी देवायु बांधे, बालतप अर्थात् दुःखगर्भित, मोहगर्भित वैराग्य करके दुष्कार कष्ट पंचाग्नि साधन रस परित्यागसें, अनेक प्रकारका अज्ञान तप करने सें निदान सहित अत्यंत रोष तथा अहंकारसें तप करे, असुरादि देवताका आयु बांधे तथा अकाम निर्जरा अजाणपणे भूख, तृषा, शीत, उष्ण रोगादि कष्ट सहने सें स्त्री अनमिलते शील पाले, विषयकी प्राप्तिके अभावसें विषय न सेंवनेसें इत्यादि अकाम निर्झरासें तथा बाल मरण अर्थात् जलमें कूद मरे, अग्निसें जल मरे, उंपापातसें मरे, शुभ परिणाम किंचितवाला तो व्यंतर देवताका आयु बांधे, आचार्यादिककी अवज्ञा करे तो, किल्विष देवताका आयु बांधे, तथा मिथ्याद्रष्टीके गुणांकी प्रशंसा करे, महिमा बढावे, अज्ञान तप करे, और अत्यंत क्रोधी होवे तो, परमाधार्मिकका आयु बांधे. इति देवायुके बंध हेतु. यह आयु कर्म हड्डिके बंधन समान है. इसके उदयसें चारों गतके जीव जीवते है, और जब आयु पूर्ण हो जाता है तब कोइभी तिसकों नही जीवा सक्ता है, जेकर आयुकर्म विना जीव जीवे तो मतधारीयो के अवतार पैगंबर क्यों मरते १ जितनी आयु पूर्व जन्ममें जीव बांधके आया है तिससें एक क्षण मात्रभी कोइ अधिक नही जीव सकता है, और न किसीकों जीवा सकता है । मतधारी जो कहते है हमारे अवतारादिकनें अमुक अमुककों फिर जीवता करा, यह वाते महा मिथ्या है, क्योंकि जेकर उनमें ऐसी शक्ति होती

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तो आप क्यों मर गये. १ सदा क्यों न जीते रहे १ ईशा महम्मदादि जेकर आज तक जीते रहते तो हम जानते ये सच्चे परमेश्वरकी तर्फसें उपदेश करने आये है. हम अब उनके मतमें हो जाते. मतधारीयोकों मेहनत न करनी पडती, जब साधारण मनुष्योके समान मर गये तब क्योंकर शक्तिमान हो सकते है १ ते सर्व जूठी वातों की अणधक गप्पे जंगली गुरुयोने जंगलीपणोसें मारी है, इस वात्से सर्व मिथ्या है. इति आयु कर्म पंचमा.

अथ छठ्ठा नाम कर्म, तिसका स्वरूप लिखते है. तिसके ९३ तिरानवे भेद है. नरकगति नामकर्म १ तिर्यंच गति नाम २ मनुष्य गति नाम ३ देवगति नाम ४ एकेंद्रिय जाति १ द्वींद्रिय जाती २ तीनेंद्रिय जाति ३ चार इंद्रिय जाति ४ पंचेंद्रिय जाति ५ एवं ९ उदारिक शरीर १० वेक्रिय शरीर ११ आहारिक शरीर १२ तैजस शरीर १३ कार्मण शरीर १४ उदारिकांगोपांग १४ वैक्रियांगोपांग १६ आहारिकांगोपांग १७ उदारिकबंधन १८ वैक्रिय बंधन १५ आहारिक बंधन २० तैजस बंधन २१ कार्मण बंधन २२ उदारिक संघातन २३ वैक्रिय संघातन २४ आहारिक संघातन २५ तैजस संघातन २६ कार्मण संघातन २७ वज्र ऋषभ नराच संहनन २८ ऋषभ नराच संहनन २९ नराच संहनन ३० अर्द्ध नराच संहनन ३१ कीलिका संहनन ३२ सेवर्त्त संहनन ३३ सम चतुरस्र संस्थान ३४ निग्रोध्र परिमंडल संस्थान ३५ सादि संस्थान ३६ कुब्ज संस्थान ३७ वामन संस्थान ३८ हुंडक संस्थान ३९ कृष्ण वर्ण ४० नील वर्ण ४१ रक्त वर्ण ४२ पीत वर्ण ४३ शुक्ल वर्ण ४४ सुगंध ४५ दुर्गंध ४६ तिक्त रस ४७ कटुक रस ४८ कषाय रस ४९ आम्ल रस ५० मधुर रस ५१ कर्कश स्पर्श ५२ मृदु स्पर्श ५३ हलका ५४ भारी ५५ शीत स्पर्श ५६ उष्ण स्पर्श ५७ स्निग्ध स्पर्श ५८ रुक्ष स्पर्श ५९ नरकानुपूर्वी ६० तिर्यंचानुपूर्वी ६१ मनुष्यानुपूर्वी ६२ देवानुपूर्वी ६३ शुभविहायगति ६४ अशुभविहायगति ६५ परघात नाम ६६ उच्छवास ६७ आतप ६८ उद्योत नाम ६९ अगुरुलघु ७० तीर्थंकर नाम ७१ निर्माण ७२ उपघात नाम ७३ त्रसनाम ७४ बादर नाम ७५ पर्याप्त नाम ७६ प्रत्येकनाम ७७ स्थिर नाम ७८ शुभ नाम ७९ सुभग नाम ८० सुस्वर नाम ८१ आदेय नाम ८२ यशकीर्ति नाम ८३ स्थावर नाम ८४ सूक्ष्म नाम ८५ अपर्याप्त नाम ८६ साधारण नाम ८७ अस्थिरनाम ८८ अशुभ नाम ८९ दुर्भग नाम ९० दुस्वर नाम ९१ अनादेय नाम ९२ अयश नाम ९३ ये तिरानवे भेद नाम कर्मके है. अब इनका स्वरूप लिखते है.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गति नाम कर्म जिस कर्मके उदयसें जीव नरक १ तिर्यंच २ मनुष्य ३ देवताकी गति पर्याय पामें, नरकादि नाम कहनेमें आवे, और जीव मरे तब जिस गतिका गतिनामकर्म, आयुकर्म मुख्यपणे और गतिनाम कर्म सहचारी होवे है, तब जीवकों आकर्षण करके ले जाते है, तब वो जीव तिस गति नाम और आयु कर्मके वश हुआ थका जहां उत्पन्न होना होवे तिस स्थान में पहुंचे है, जैसे दोरेवाली सूइकों चमक पाषाण आकर्षण कर्त्ता है और सूइ चमक पाषाणकी तर्फ जाती है, दोराभी सूइके साथही जाता है, इस तरे नरकादि गतियोंका स्थान चमक पाषाण समान है, आयु कर्म और गतिनाम कर्म लोहेकी सूइ समान है, और जीव दोरे समान बीचमें पोया हुआ है, इस वास्ते परभवमें जीवकों आयु और गतिनाम कर्म ले जाते है, जैसा २ गतिनाम कर्मका जीवां ने बंध करा है, शुभ वा अशुभ तैसी गतिमें जीव तिस कर्मके उदयसें जा रहता है, इस वास्ते जो अज्ञानीयोने कल्पना कर रखी है कि पापी जीवकों यम और धर्मी जीवकों स्वर्गके दूत मरा पीछे ले जाते है तथा जबराइल फिरस्ता जीवांकों ले जाता है, सो सर्व मिथ्या कल्पना है, क्योंकि जब यम और स्वर्गीय दूत फिरस्ते मरते होगे, तब तिनकों कौन ले जाता होवेगा, और जीवतो जगतमें एक साथ अनंते मरते और जन्मते, तिन सबके लेजाने वास्ते इतने यम कहांसे आते होवेंगे, और इतने फिरस्ते कहां रहते होवेगे १ और जीव इस स्थूल शरीरसें निकला पीछे किसीकेभी हाथमें नही आता है, इस वास्ते पूर्वोक्त कल्पना जिनोंने सर्वज्ञका शास्त्र नही सुना है तिन अज्ञानीयोंने करी है. इस वास्ते मुख्य आयुकर्म और गतिनाम कर्मके उदयसेंही जीव परभवमें जाता है. इति गतिनाम कर्म ४. अथ जातिनाम कर्मका स्वरूप लिखते है, जिसके उदयसें जीव पृथ्वी, पाणी, अग्नि, पवन, वनस्पतिरूप एकेंद्रिय, स्पर्शेन्द्रियवाले जीव उत्पन्न होते है, सो एकेंद्रिय जातिनाम कर्म १ जिसके उदयसें दोइंद्रियवाले कृम्यादिपणें उत्पन्न होवे, सो द्वींद्रिय जातिनाम कर्म २ एवं तीनेंद्रि कीदी आदि, चतुरिंद्रिय उदरादि, पंचेंद्रिय नरक पंचेंद्रिय पशु गोमहिष्यादि मनुष्य देवतापणे उत्पन्न होवे, सो पंचेंद्रिय जातिनाम कर्म. एवं सर्व ८ उदारिक शरीर अर्थात् एकेंद्रिय, द्वींद्रिय, त्रींद्रिय, चतुरिंद्रिय, पंचेंद्रिय, तिर्यंच मनुष्यके शरीर पावनेकी तथा उदारीक शरीरपणे परिणामकी शक्ति, तिसका नाम उदारिक शरीर नाम कर्म १० जिसकी शक्तिसें नारकी देवता का शरीर पावे, जिससें मन इच्छित रूप बणावे तथा वैक्रिय शरीरपणे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गल परिणामनेकी शक्ति सौ वैक्रिय शरीरनाम कर्म ११ एवं आहारिक लब्धीवालेके शरीरपणे परिणामावे १२ तैजस शरीर अंदर शरीरमें उक्षता, आहार पचावनेकी शक्तिरूप, सो तैजस नाम कर्म १३ जिसकी शक्तिसें कर्मवर्गणाकों अपने अपने कर्म प्रकृतिके परिणामपणे परिणामावे सो कार्मण शरीर नामकर्म १४ दो बाहु २ दो साथल ४ पीठ ५ मस्तक ६ उरुछाती ७ उदर पेट ८ से आठ अंग और अंगोके साथ लगा हुआ, जैसें हाथसें लगी अंगुली साथलसें लगा जानु, गोठा आदि इनका नाम उपांग है, शेष अंगुलीके पर्व रेखा रोम नखादि प्रमुख अंगोपांग है, जिसके उदयसें ये अंगोपांग पावे और इनपणे नवीन पुद्गल परिणमावे ऐंसी जो कर्मकी शक्ति तिसका नाम उपांग नामकर्म है. उदारीकोपांग १५ वैक्रियोपांग, १६ आहारिकोपांग, १७ इति उपांग नामकर्म ॥ पूर्वे बांध्या हुआ उदारिक शरीरादि पांच प्रकृति और इन पांचोके नवीन बंध होते को पितले साथ मेलकर के बधावे जैसे राल लाखादि दो वस्तुयोंकों मिला देते है, तैसेही जो पूर्वापर कर्मको संयोग करे, सो बंधन नामकर्म शरीरोंके समान पांच प्रकारका है, उदारिकबंधन वैक्रियबंधन इत्यादि एवं, २२ प्रकृति हुइ. पांच शरीरके योग्य बिखरे हुए पुद्गलांको एकठे करे, पीछे बंधन नामकर्म बंध करे, तिस एकठे करणे वाली कर्म प्रकृतिका नाम संघातन नामकर्म है, सो पांच प्रकारका है, उदारिक संघातन, वैक्रिय संघातन इत्यादि एवं, २७ सत्ताइस प्रकृति हुइ, अथ उदारिक शरीरपणे जो सात धातु परिणमी है तिनमें हाडकी संधिको जो द्रढ करे तो संहनन नामकर्म, सो छ ६ प्रकारका है, तिनमेंसें जहां दोनो हाड दोनों पासे मर्कट बंध होवे, तिसका नाम नराच है, तिन दोनों हाडों के उपर तीसरा हाठ पट्टेकी तरें जकड बंध होवे तिसका नाम ऋषभ है, इन तीनो हाडके भेदनेवाली उपर खीली होवे तिसका नाम वज्र है, ऐसी जिस कर्मके उदयसें हाडकी संधी द्रढ होवे तिसका नाम वज्र ऋषभ नराच संहनन नामकर्म है. २८ जहां दोनों हाडों के छेदके मर्कटबंध मिले हुए होवे, और उनके उपर तीसरे हाडका पट्टा होवे, ऐसी हाड संधी जिस कर्मके उदयसें होवे सो ऋषभ नराच संहनन नाम कर्म २९ जिन हाडोका मर्कटबंध तो होवे परंतु पटा और कीली न होवे, जिसके उदयसें सो नाराच संहनन नामकर्म, ३० जहां एक पासें मर्कटबंध और दूसरे पासे खीली होवे जिस कर्मके उदयसें सो अर्द्ध नराच संहनन नाम कर्म ३१ जैसें खीली सेंदो कष्ट जोडि होवे तैसें हाडकी संधी जिस कर्मके उदयसें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होवे, सो कीलिका संहनन नामकर्म ३२ दोनो हाडों के छेहडे मिले हुए होवे जिस कर्म सें सो सेवार्त्त संहनन नामकर्म ३३ जिस कर्मके उदयसें सामुद्रिक शास्त्रोक्त संपूर्ण लक्षण जिसके शरीर में होवे तथा चारो अंस बराबर होवे, पलाठी मारके बैठे तब दोनों जानुका अंतर और दाहिने जानुसें वामास्कंध और वामेजानुसें दाहिनास्कंध और पलाठी पीठसें मस्तक मापता चारों डोरी बराबर हौवे, और बत्तीस लक्षण संयुक्त होवे, ऐसा रूप जिस कर्म के उदयसें होवे तिसका नाम समचतुस्त्र संस्थान नामकर्म ३४ जैसें वड वृक्षका उपत्या भाग पूर्ण होवे है, तैसेही जो नाभीसें उपर संपूर्ण लक्षणवाला शरीर होवे और नाभी सें नीचे लक्षण हीन होवे, जिस कर्मके उदयसें सो निग्रोध परिमंडल संस्थान नामकर्म ३५ जिसका शरीर नाभीसें नीचे लक्षणयुक्त होवे, और नाभीसें उपर लक्षण रहित होये, जिस कर्मके उदयसें सो सादिया संस्थान नामकर्म ३६ जहां हाथ पग मुख ग्रीवादिक उत्तम सुंदर होवे, और हृदय, पेट, पूंठ लक्षण हीन होवे जिस कर्मके उदय सें सो कुब्ज संस्थान नामकर्म ३७ जहां हाथ पग लक्षण हीन होवे, अन्य अंग लक्षण संयुक्त अछे होवें, जिस कर्मके उदयसें सो वामन संस्थान नामकर्म ३८ जहां सर्व शरीर के अवयव लक्षण हीन होवे सो हुंडक संस्थान नामकर्म, ३९ जिस कर्म के उदय सें जीवका शरीर मषी, स्याही नील समान काला होवे तथा शरीरके अवयव काले होवे सो कृष्णवर्ण नामकर्म ४० जिसके उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरके अवयव सूर्यकी पुष्ठ तथा जंगाल समान नील अर्थात् हरित वर्ष होवें, सो नीलवर्ण नामकर्म ४१ जिसके उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरके अवयव लाल हिंगलुं समान रक्त होवे, सो रक्त वर्ण नामकर्म ४२ जिस कर्मके उदयसें जीवका शरीर तथा शरीर के अवयव पीत हरिताल, हलदी चंपकके फूल समान पीले होवे, सो पीतवर्ण नामकर्म ४३ जिस कर्मके उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरके अवयव संख स्फटिक समान उज्वल होवे, सो शुक्ल वर्ण नामकर्म ४४ जिसके उदयसें जीवके शरीर तथा शरीर के अवयव सुरभि गंध अर्थात् कर्पूर, कस्तूरी, फूल सरीखी सुगंधी होवे, सो सुरभीगंध नामकर्म ४५ जिस कर्मके उदयसें जीवके शरीर तथा शरीरके अवयव दुरभिगंध लशुन मृतक शरीर सरीखी दुरभिगंध होवे, सो दुरभिगंध नामकर्म ४६ जिसके उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरके अवयव नींब चिरायते सरीसा रस होवे, सो तिक्तरस नामकर्म ४७ जिसके उदयसें जीवका शरीरादि सूंठ,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मरिचकी तरे कटुक होवे, सो कटुकरस नाम कर्म ४८ जिसके उदयसें जीवका शरीरादि हरक, छहेकें समान कसायलारस होवे, सो कसायरस नामकर्म ४९ जिस कर्मके उदयसें जीवके शरीरादिका रस लिंबू, आम्ली सरीषा खट्टा रस होवे, सो खट्टारस नामकर्म ५० जिस कर्मके उदयसें जीवके शरीरादि खांडि, साकरादि समान रस होवे, सो मधुर रस नामकर्म ५१ इति रस नाम कर्म जिसके उदयसें जीवके शरीरमें तथा शरीरके अवयव कठिन कर्कस गायकी जीभ समान होवे, सो कर्कस स्पर्श नामकर्म ५२ जिसके उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरके अवयव माखणकी तरे कोमल होवे, सो मृदु स्पर्श नामकर्म ५३ जिसके उदयसें जीवका शरीर तथा अवयव अर्क तूलकी तरे हलकें होवे, सो लघु स्पर्श नामकर्म ५४ जिसके उदयसें लोहेवत् भारी शरीर के अवयव होवे, सो गुरु स्पर्श नामकर्म ५५ जिस कर्मके उदयसें जीवका शरीर तथा अवयव हिम बर्फवत् शीतल होवे, सो शीत स्पर्श नामकर्म ५६ जिसके उदयसें जीवका शरीर तथा अवयव उष्ण होवे, सो उष्ण स्पर्श नामकर्म ५७ जिस कर्मके उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरावयव घृतकी तरे स्निग्ध होवें, सो स्निग्ध स्पर्श नामकर्म ५७ जिस कर्मके उदयसें जीवका शरीरावयव राखकी तरे रूखे होवे, सो रुक्ष स्पर्श नामकर्म ५९ इति स्पर्श नाम कर्म नरक, तिर्यंच, मनुष्य, देव ए चार जगें जब जीव गति नाम कर्मके उदयसें वक्र बांकी गति करे, तब तिस जीवकों बांके जाते को जो अपने स्थानमें ले जावे, जैसे बैलके नाक में नाथ तैसे जीवके अंतराल वक्र गतिमें अनुपूर्वीका उदय तथा जो जीवके हाथ पगादि सर्व अवयव यथायोग्य स्थानमें स्थापन करे, सो अनुपूर्वी नामकर्म. सो चार प्रकार का है, नरकानुपूर्वी १ तिर्यंचानुपूर्वी २ मनुष्यानुपूर्वी ३ देवतानुपूर्वी ४ एवं सर्व ६३ हूइ, जिसके उदयसें हाथी वृषभकी तरे शुभ चलनेकी गति होवे, सो शुभ विहाय गति ६४ जिस कर्मके उदयसें ऊंटकी तरे बुरी चाल गति होवे, सो अशुभ विहाय गति नामकर्म ६५ जिसके उदयसें परकी शक्ति नष्ट हो जावे, परसें गंज्या पराभव करा न जाय, सो पराघात नामकर्म ६६ जिसके उदयसे सासोस्वासके लेनेकी शक्ति उत्पन्न होवे, सो उत्स्वास नामकर्म ६७ जिसके उदयसें जीवांका शरीर उष्ण प्रकाश वाला होवे, सूर्य मंडलवत्, सो आतप नाम कर्म ६८ जिसके उदयसें जीवका शरीर अभुष्ण प्रकाशवाला होवे, सो उद्योत नामकर्म, चंद्र मंडलवत् ६८ जिसके उदयसें जीवका शरीर अति भारी अति हलका न

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होवे, सो अगुरु लघु नाम कर्म ७० जिसके उदयसें चतुर्विध संघ तीर्थ थापन करके तीर्थंकर पदवी लहे, सो तीर्थंकर नामकर्म ७१ जिस कर्मके उदयसें जीवके शरीरमें हाथ, पग, पिंडी, दांत, मस्तक, केश रोम शरीरकी नशांकी विचित्र रचना, हाडोंकी यथार्थ विचित्र रचना, आंख, मस्तक प्रमुखके पडदे यथार्थ यथा योग्य अपने २ स्थानमे उत्पन्न करे होवे, संचयसें जैसें वस्तु बनती है तैसेही निर्माण कर्मके उदयसें सर्व जीवांके शरीरोंमे रचना होती है, सो निर्माणकर्म ७२ जिसके उदयसें जीव अधिक तथा न्यून अपने शरीरके अवयव करके पीडा पामे, सो उपघात नामकर्म ७३ जिसके उदयसें जीव थावरपणा थोडी हलने चलने की लब्धि शक्ति पावे, सो त्रस नाम कर्म है ७४ जिस कर्मके उदयसें जीव सूक्ष्म शरीर छोड के बादर चक्षु ग्राह्य शरीर पावे, सो बादर नामकर्म ७५ जिस कर्मके उदयसें जीव प्रारंभ करी हुइ छ ६ पर्याप्ति अर्थात् आहार पर्याप्ति १ शरीर पर्याप्ति २ इंद्रिय पर्याप्ति ३ सासोत्स्वास प्रर्याप्ति ४ भाषा पर्याप्ति ५ मनः पर्याप्ति ६ पूरी करे, सो पर्याप्त नामकर्म ७६ जिसके उदयसें एक जीव एकही उदारिक शरीर पावे, सो प्रत्येक नामकर्म ७७ जिस कर्म के उदयसें जीवके हाड दातादि द्रढ बंध होवे, सो थिर नामकर्म ७८ जिस कर्मके उदय सें नाभिसें उपल्या भाग शरीरका पावे, दूसरे के तिस अंगका स्पर्श होवे तोभी बुरा न माने, सो शुभ नामकर्म ७९ जिस कर्मके उदयसें विना उपकारके करयांमी तथा संबंध विना वल्लभ लागे, सो सौभाग्य नामकर्म ८० जिस कर्मके उदयसें जीवका कोकलादि समान मधुर स्वर होवे, सो सुस्वर नामकर्म ८१ जिस कर्मके उदयसें जीवका वचन सर्वत्र माननीय होवे, सो आदेय नामकर्म ८२ जिस कर्मके उदयसें जगतमें जीवकी यशकीर्त्ति फैले, सो यश कीर्त्ति नामकर्म ८३ जिस कर्मके उदयसें जीव त्रसपणा छोडी स्थावर पृथ्वी, पानी, वनस्पत्यादिकका जीव हो जावे, हली चली न सके, सो स्थावर नाम कर्म ८४ जिस कर्मके उदयसें सूक्ष्म शरीर जीव पावे, सो सूक्ष्म नामकर्म ८५ जिस कर्मके उदयसें प्रारंभी हुइ पर्याप्ति पूरी न कर सके, सो अपर्याप्त नामकर्म ८६ जिस कर्मके उदयसें अनंते जीव एक शरीर पामे, सो साधारण नामकर्म ८७ जिस कर्मके उदयसें जीवके शरीर में लोहु फिरे, हाडादि सिथल होवे, सो अथिर नामकर्म ८८ जिस कर्मके उदयसें नाभीसें नीचेका अंग उपांगादि पावे, सो अशुभ नामकर्म ८९ जिस कर्मके उदयसें जीव अपराधके विना करेही बुरा लगे, सो दौर्भाग्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नामकर्म ९० जिस कर्मके उदयसें जीवका स्वर मार्जार, उंट सरीखा होवे, सो दुःस्वर नामकर्म ९१ जिस कर्मके उदयसें जीवका वचन अच्छाभी होवे, तोभी लोक न माने सो अनादेय नामकर्म ९२ जिस कर्मके उदयसें जीवका अपयश अकीर्त्ति होवे, सो अयश कीर्त्ति नामकर्म, ९३ इति नामकर्म.६

अथ नामकर्मके बंध हेतु लिखते है ।। देव गत्यादि तीस ३० शुभ नामकर्मकी प्रकृतिका बंधक कौन होवे सो लिखते है. सरल कपट रहित होवे जैसी मनमें होवे तैसीही कायकी प्रवृत्ति होवे. किसी कों भी अधिक न्यून तोला मापा करके न ठगे, परवंचन बुद्धि रहित होवे, शुद्धिगारव, रसगारव, सातागारव, करके रहित होवे, पाप करता हुआ डरे, परोपकारी सर्व जन प्रिय क्षमादि गुण युक्त ऐसा जीव शुभ नामकर्म बांधे तथा अप्रमत्त यतिपणे चारित्रियों आहारकद्विक बांधे, १ और अरिहंतादि वीस स्थानककों सेवता हुआ तीर्थंकर नामकर्मकी प्रकृति बांधे । और इन पूर्वोक्त कामोसें विपरीत करे अर्थात् बहुत कपटी होवे, झूठा, तोला, मान, मापा करके परकों ठगे, परद्रोही, हिंसा, जूठ, चौरी, मैथुन, परिग्रहमें तत्पर होवे, चैत्य अर्थात् जिनमंदिरादिककी विराधना करे, व्रत लेकर नग्न करे, तीनो गौरवमें मत्त होवे, हीनाचारी ऐसा जीव नरक गत्यादि अशुभ नाम कर्मकी ३४ चौतीस प्रकृति बांधे, येह सतसठ ६७ प्रकृतिकी अपेक्षा करके बंध कथन करा, इति नामकर्म ६ संपूर्ण.

अथ गोत्रकर्म तिसके दो भेद. प्रथम उंच्च गोत्र, विशिष्ट जाती, क्षत्रिय कास्यपादिक उग्रादी कुल उत्तम बल विशिष्ट रूप ऐश्वर्य तपोगुण विद्यागुण सहित होवे, सो उंच्चगोत्र १ तथा भिक्षाचरादिक कुल जाती आदीक लहे सो नीचगोत्र २ अथ उंच्चगोत्रके बंध हेतु ज्ञान, दर्शन, चारित्रादीक गुण जिसमें जितना जाने, तिसमें तितना प्रकाशकर गुण बोले, और अवगुण देखके निंदे नही, तिसका नाम गुण प्रेक्षीहै, ऐसा गुण प्रेक्षी होवे, जातिमद १ कुलमद २ बलमद ३ रूपमद ४ सूत्रमद ६ ऐश्वर्यमद ६ लाभ मद ७ तपोमद ८ ये आठ मदकी संपदा होवे, तोभी मद न करे, सूत्र सिद्धांत तिसके अर्थके पढने पढानेकी जिसकों रुचि होवे, निराहंकारसें सुबुद्धि पुरुषकों शास्त्र समझावे, इत्यादि परहित करनेवाला जीव उंच्चगोत्र बांधे, तीर्थंकर सिद्ध प्रवचन संघादिकका अंतरंगसें भक्तीवाला जीव उंच्चगोत्र बांधे, इन पूर्वोक्त गुणोसें विपरीत गुणवाला अर्थात् मत्सरी १ जात्यादि आठ मद सहित अहंकारके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उदयसें किसिकों पढावे नही, सिद्ध प्रवचन अरिहंत चैत्यादिककी निंदा करे, भक्ति न होवे, सो जीव हीन जाति नीच गोत्र बांधे ।। इति गोत्रकर्म ७.

अथ आठमा अंतराय कर्मका स्वरूप लिखते है, तिसके पांच भेद है, जिस कर्मके उदयसें जीव शुद्ध वस्तु आहारादिकके हूएभी दान देनेकी इतनी करे, परंतु दे नही सके, सो दानांतराय कर्म १ जिस कर्म के उदय सें देने वाले के हूएभी इष्ट वस्तु याचनेसेभी न पावे. व्यापारादिमें चतुरभी होवे तोभी नफा न मिले, सो लाभांतराय कर्म २ जिस कर्मके उदयसें एक वार भोगने योग्य फूलमाला मोदकादिकके हूएभी भोग न कर सके, सो भोगांतराय कर्म ३ जिस कर्मके उदयसें जो वस्तु बहुत वार भोगने में आवे, स्त्री आभर्ण वस्त्रादि तिनके हूएभी वारंवार भोग न कर सके, उपभोगांतराय कर्मक जिस कर्मके उदयसें मिथ्या मतकी क्रिया न कर सके, सो बालवीर्यांतराय कर्म १ जिसके उदयसें सम्यगद्रष्टी, देश वृत्ति धर्मादि क्रिया न कर सके, सो बाल पंडित वीर्यांतराय कर्म, जिसके उदयसें सम्यग् द्रष्टी साधु मोक्ष मार्गकी संपूर्ण क्रिया न कर सके, सो पंडित वीर्यांतराय कर्म. अथ अंतराय कर्मके बंध हेतु लिखते है, श्री जिन प्रतिमाकी पुजाका निषेध करे, उत्सूत्रकी प्ररूपणा करे, अन्य जीवांकों कुमार्गमें प्रवर्त्तावे, हिंसादिक अठारह पाप सेवनेमें तत्पर होवे तथा अन्य जीवांको दान लाभादिकका अंतराय करे, सो जीव अंतराय कर्म बांधे, इति अंतराय कर्म ९.

इस तरें आठ कर्मकी एकसो अडतालीस १४८ कर्म प्रकृतिके उदयसें जीवोंके शरीरादिककी विचित्र रचना होती है, जैसें आहारके खानेसें शरीर में जैसें जैसें रंग और प्रमाण संयुक्त हाड, नशा, जाल, आंखके पडदे मस्तकके विचित्र अवयवपणें तिस आहारका रस परिणमता है, यह सर्व कर्माके उदयसें शरीर की सामर्थ्यसें होता है, परंतु यहां ईश्वर नही कुछभी कर्त्ता है, तैसेंही काल १ स्वभाव २ नियति ३ कर्म ४ उद्यम ५ इन पांचो कारणोंसें जगतकी विचित्र रचना हो रही है. जेकर ईश्वर वादी लोक इन पूर्वोक्त पांचोके समवायका नाम ईश्वर कहते होवे, तब तो हमभी ऐसे ईश्वरकों कर्त्ता मानते है. इसके सिवाय अन्य कोइ कर्त्ता नही है, जेकर कोइ कहे जैनीयोंने स्वकपोल कल्पनासें कर्माके भेद बना रखे है. यह कहना महा मिथ्या है, क्योंकि कार्यानुमानसें जो जैनीयोने कर्मके भेद माने है वे सर्व सिद्ध होते है, ओर पूर्वोक्त सर्व कर्मके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भेद सर्वज्ञ वीतरागने प्रत्यक्ष केवल ज्ञानसें देखे है, इन कर्मांके सिवाय जगतकी विचित्र रचना कदापि नही सिद्ध होवेगी, इस वास्ते सुज्ञ लोकोंकों अरिहंत प्रणीत मत अंगीकार करना उचित है, और ईश्वर वीतराग सर्वज्ञ किसी प्रमाणसे भी जगतका कर्ता सिद्ध नही होता है, जिसका स्वरूप उपर लिख आये है.

प्र.१५५. जैन मतके ग्रंथ श्री महावीरजीसें लेके श्री देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण तक कंठाग्र रहै क्योंकर माने जावे, और श्वेतांबर मत मूलका है और दिगंबर मत पीछेसें निकला, इस कथनमें क्या प्रमाण है.

उ. जैन मतके आचार्य सर्व मतोंके आचार्योसें अधिक बुद्धिमान थे, और दिगंबराचार्योंसे श्वेतांबर मतके आचार्य अधिक बुद्धिमान् आत्मज्ञानी थे, अर्थात् बहुत काल तक कंठाग्र ज्ञान रखने में शक्तिमान थे, क्यों कि दीगंबर मतके तीन पुस्तक धवल ७०००० श्लोक प्रमाण १ जयधवल ६०००० श्लोक प्रमाण २ महाधवल ४०००० श्लोक प्रमाण ३ श्री वीरात् ६८३ वर्षे ज्यैष्ठशुदि ५ के दिन भूतवलि १ पुष्पदंत नामें दो साधुयोंनें लिखे थे, और श्वेतांबर मतके पुस्तक गिणती में और स्वरुपमें अलग-अलग कोटि १०००००० पांचसौ आचार्योने मिलके और हजारो सामान्य साधुयोने श्री विशत् ९८० वर्षे वल्लभी नगरीमें लिखे ले, और बौद्धमतके पुस्तकतो श्री वीरात् थोडेसें वर्षो पीछे ही लिखे गये थे, जिनोकी बुद्धि अल्प थी तिनोनें अपने मतके पुस्तक जलदीसें लिखलीने, और जिनोकी महा प्रौढ धारण करनेकी शक्तिवाली बुद्धिथी तिनोंने पीछे सें लिखे. यह अनुमानसें सिद्ध है, और दिगंबर मतमें श्री महावीरके गणधरादि शिष्योंसें लेके ५८५ वर्ष तकके काल लग हुए हजारों आचार्योमेसें किसी आचार्यका रचा हुआ कोइ पुस्तक वा किसी पुस्तकका स्थल नही है, इस वास्ते दिगंबर मत पीछेसें उत्पन्न हुआ है.

प्र.१५६. देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमणनें जो ज्ञान पुस्तकोंमे लिखा है, सो आचार्योकी अविच्छिन्न परंपरासें चला आया सो लिखा है, परं स्वकपोल कल्पित नही लिखा, इसमें क्या प्रमाण है, जिससें जैन मतका ज्ञान सत्य माना जावे.

उ. जनरल कनिंगहाम साहिब तथा डाक्तर हाँरनल तथा डाक्तर बूलर प्रमुखोंनें मथुरा नगरीमें से पुरानी श्री महावीरस्वामीकी प्रतिमाकी पलांठी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपरसें तथा कितनेक पुराने स्तंभों उपरसें जो जूने जैनमत सबंधी लेख अपनी स्वच्छ बुद्धिके प्रभावसें वांचके प्रगट कर है, और अंग्रेजी पुस्तकोंमें छापके प्रसिद्ध करे है तिन जूने लेखां सें निसंदेह सिद्ध होता है कि, श्री महावीरजीसें लेके श्री देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण तक जैन श्वेतांबर मतके आचार्य कंठाग्र ज्ञान रखने में बहुत उद्यमी और आत्मज्ञानी थे, इस वास्ते हम जैन मतवाले पूर्वोक्त यूरोपीयन विद्वानोका बहुत उपकार मानते है, और मुंबई समाचार पत्रवालाभी तीन लेखोंकों बांचके अपने संवत् १८४४ के वर्षाके चार मासके एक प्रतिदिन प्रगट होते पत्रमें लिखता है, ज़ेनमतका कल्पसूत्र कितनेक लोक कल्पित मानते थे, परंतु इन लेखोंसें जैनमतका कल्पसूत्र सच्चा सिद्ध होता है.

प्र.१५७. वे लेख कौनसें है, जिनका जिकर आप उपले प्रश्नोत्तरमें लिख आए है, और तिन लेखों सें तुमारा पूर्वोक्त कथन क्यों कर सिद्ध होता है.

उ. वे लेख जैसे डाक्टर बूलर साहिबने सुधारके लिखे है, और जैसे हमकों गुजराती भाषांतरमे भाषांतर कर्त्ताने दीये है तैसेंही लिखते है, येह पूर्वोक्त लेख सर ए. कनिंगहामकें आर्चिउलोजिकल (प्राचीन कालकी रही हुइ वस्तुयों सबंधी) रिपोर्टका पुस्तक ८ आठमेमें चित्र १३-१४ तेरमे चौदवें तक प्रगट करे हुए मथुरांके शिला लेख तिनमें केवल जैन साधुयोंका संप्रदाय आचार्योकी पंक्तियां तथा शाखायों लिखी हुए है, केवल इतनाही नही लिखा हुआ है, किंतु कल्पसूत्रमें जे नव गण (गच्छ) तथा कुल तथा शाखायों कही है, सोभी लिखी हुई है, इन लेखोंमे जो संवत् लिखा हुआ है, सो हिंदुस्थान और सीथीया देशके वीचके राजा कनिश्क १ हविश्क २ और वासुदेव ३ इनके समयके संवत् लिखे हुए है और अब तक इन संवतोकी शरूआत निश्चित नही हुइ है, तो भी यह निश्चय कह सकते है कि येह हिंदुस्थान और सीथीया देशके राजायोंका राज्य इसवी सनके प्रथम सैकेके अंतसें और दूसरे सैकेके पहिले पौणेभागसें कम नही तरा सकते है, क्योंकि कनिश्क सन इशवी सनके ७८ वा ७९ मे वर्षमें गद्दी उपर बैठा सिद्ध हुआ है, और कितनेक लेखोंमे इन राजायोंका संवत् नही है, सो लेख इन राजायोंको राज्यसें पहिलेंकी है, ऐसे डाक्तर बूलर साहिब कहता है.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रथम लेख सुधरा हुआ नीचे लिखा जाता है. सिद्धं ।सं.२०। ग्रामा १ । दि १० + ५ । कोटियतो, गणतो, वाणियतो, कुलतो, वएरितो, शाखातो, शिरिकातो, भत्तितो वाचकस्य अर्य्य संघ सिंहस्य निर्व्वर्त्त नंदत्तिलस्य...वि.-लस्य कोटुंबिकिय, जयवालस्य, देवदासस्य, नागदिनस्य च नागदिनाये, च मातु श्राविकाये दिनाये दानं ।इ। वर्द्धमान प्रतिमा. इस पाठका तरजुमा रूप अर्थ नीचे लिखते है, ``फतेह'' संवत् २० का उस कालका मास १ पहिला मिति १५ ज्वल (जयपाल) की मात वी...लाकी स्त्री दत्तिलकी (बेटी) अर्थात् (दिन्ना अथवा दत्ता) देवदास और नागदिन (नागदिन्न अथवा नागदत्त) तथा नागदिना (अर्थात् नागदिन्ना अथवा नागदत्ता) की संसारिक स्त्री शिष्यकी बत्रीस कीर्त्तिमान् वर्द्धमानकी प्रतिमा (यह प्रतिमा) कौटिक गच्छमेंसें वाणिज नामे कुलमेंसें वैरी शाखाकी सीरीका भागके आर्य संघ सिंहकी निर्वरतन है, अर्थात् प्रतिष्टित है. ।। इति डाक्टर बूलर ।।

अथ दूसरा लेख. नमो अरहंतानं, नमो सिद्धानं, सं. ६० + २ ग्र.३ दि. ५ एताये पुर्वायेरारकस्य अर्यककसघ स्तस्य शिष्या आतापेको गहवरी यस्य निर्वतन चतुवस्यर्न संघस्य या दिन्ना पडिभा (भो.१) ग. (१ ?) वैहिका ये दत्ति ।। इसका तरजमा ।। अरहंतने प्रणाम, सिद्धने प्रणाम, संवत ६२ यह तारीख हिंदुस्थान और सीथीआ बीचके राजायों के संवत् के साथ संबंध नही रखती है, परंतु तिनोसें पहिलें के किसी राजेका संवत् है, क्योंकि इस लेखकी लिपी बहुत असल है. उष्ण कालका तीसरा मास ३ मिति ५ उपरकी तारीख में जिस समुदायमें चार वर्गका समावेश होता हैं, तिस समुदायके उपभोग वास्ते अथवा हरेक वर्गके वास्ते एकैक हिस्सा इस प्रमाणसें एकाया। देनेमें आया था ।या। यह क्या वस्तु होवेगी सो मैं नही जानता हुं, पति भोग अथवा पति भाग इन दोनों में सें कौनसा शब्द पसिंद करने योग्य है के नही, यहभी मैं नही कह सकता हूं (आ) आतपीको गहवरीरारा (राधा) कारहीस आर्य-कर्क सघस्त (आर्य-कर्क सघशीत) का शिष्यका निर्वतन (होइके) वइहीक (अथवा वइहीता) का बत्रीस, यह नाम तोडके इस प्रमाणे अलग कर सकते है, आतपीक-औगहब-आर्य पीछेके भागमें यह प्रगट है कि निर्वतन याके साथ एकही विभक्ति में है, तिस वास्ते अन्य दूसरे लेखोमेंभी बहुत करके ऐसीही पद्धतिके लेख लिखे हुए है, निर्वर्तयतिका अर्थ सामान्य रीते सो रजु करता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है, अथवा सो पूरा करता है ऐसा है, तिससें बहुत करके ऐसे बतलाता है के दीनी हुइ वस्तु रजु करने में आइथी, अर्थात् जिस आचार्यका नाम आगे आवेगा तिसकी इच्छासें अर्पण करने में आइथी, अथवा तिससें सो पूरी करनेमें आइथी, अर्थात् पवित्र करने में आइथी. गणतो, कुलतो इत्यादि पांचमी विभक्ति के रूप वियोजक अर्थमें लेने चाहीये, स्येइजरका संस्कृतकी वाक्य रचनाका पुस्तक ११६ । १ देखो । इति डाक्तर बूलर. अथ तीसरा लेख ।। सिद्धं महाराजस्य कनिश्कस्य राज्ये संवतसरे नवमें ।।९।। मासे प्रथ १ दिवसे ५ अस्यां पूर्वाये कोटियतो, गणतो, वाणियतो, कुलतो, वइरीतो, साखातो वाचकस्य नागनंदि सनिर्वरतनं ब्रह्मधूतुये भद्दिमितस कुटुंबिनिये विकटाये श्री वर्द्धमानस्य प्रतिमा कारिता सर्व सत्वानं हित सुखाये, यह लेख श्री महावीरकी प्रतिमा उपर है ।। इसका तरजुमा नीचे लिखते है ।। फतेह महाराजा कनिश्यके राज्यमें ९ नवमें वर्षमें का १ पहिले महीनेमें मिति ५ पांचमीमें ब्रह्माकी बेटी और भद्दिमित (भदिमित्र) की स्त्री विकटा नामकीनें सर्व जीवां के कल्याण तथा सुखके वास्ते कीर्त्तिमान वर्द्धमानकी प्रतिमा करवाइ है, यह प्रतिमा कोटिक गण (गच्छ) का वाणिज कुलका और वइरी शाखका आचार्य नागनंदिकी निवर्तन है, (प्रतिष्टित है), अब जो हम कल्पसूत्र तर्फ नजर करीये तो तिस मूल प्रतके पत्रे । ९१-९२ । इस. वी. इ. वाल्युम (पुस्तक) २२ पत्रे २९२, हमकों मालम होता है कि सुठिय वा सुस्थित नामे आचार्य श्री महावीरके आठमें पदके अधिकारीनें कोटिक नामे गए (गच्छ) स्थापन करा था, तिसके विभाग रूप चार शाखा तथा चार कुल हुए, जिसकी तीसरी शाखा वइरीथी और तीसरा वाणिज नामे कुल था, यह प्रगट है कि गण कुल तथा शाखा के नाम मथूरांके लेखों मे जो लिखे है वे कल्पसूत्रके साथ मिलते आते है, कोटिय कुछक कोडीयका पुराना रूप है, परंतु इस बात की नकल लेनी रसिक है कि वइरी शाखा सीरीकाभत्ती (स्त्रीकाभक्ति) जो नंबर ६ के लेख में लिखी हुइ है तिसके भागका कल्पसूत्रके जानने में नही था, अर्थात् जब कल्पसूत्र हूआ था तिस समय में सो भाग नही था. यह खाली स्थान ऐसा है कि जो मुहकी दंत कथा (परंपरायसें चला आया कथन) सें लिखी हुइ यादगीरीसें मालुम होता है. इति डाक्तर बूलर ।।

अथ चौथा लेख ।। संवत्सरे ९० व...स्य कुटुबनि. वदानस्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वोधुय...क...गणता...वहुकतो, कालातो, मझमातो, शाखाता...सनिकाय अतिगालाए थवानि...सिद्ध=स ५ हे १ दि १० + २ अस्य पूर्वा येकोटो...इस लेखकी लीनी हुइ नकल मेरे वसमे नही है, इस वास्ते इसका पूर्ण रूप मै स्थापन नही कर सकता हूं, परंतु पहली पंक्तिके एक टुकडि के देखने सें ऐसा अनुमान हो सकता है के यह अर्पण करनेका काम एक स्त्रीसें हुआ था, ते स्त्री एक पुरुषकी वहु (कुटुंबनी) तरीके और दूसरे के बेटेकी बहु (वधु) तरीके लिखने में आइथी ।। दूसरी पंक्तिका प्रथम सुधारे साथ लेख नीचे लिखे मूजब होता है ।। कोटीयतो गणतो (प्रश्न) वाहनकतो कुलतो मज्जमातो साखातो...सनीकाये के समाजमें कोटीय गच्छके प्रभवाहनकी मध्यम शाखा में के कोटीय और प्रश्नवाहनकये दो नाम होवेंगे, ऐसें मुझकों निसंदेह मालुम होता है, क्योंकि इस लेख की खाली जगा तिस पूर्वोक्त शब्द लिखने सें बराबर पूरी हो जाती है, और दूसरा कारण यह है कि कल्पसूत्र एस.वी. इ. पत्र-२९३ मेमें मध्यम शाखा विषयक हकीकतभी पूर्वोक्तही सूचन करती है, यह कल्पसूत्र अपने कों ऐसे जनाता है कि सुस्थित और सुप्रतिबद्धका दूसरा शिष्य प्रीयग्रंथ स्थविरे मध्यमा शाखा स्थापन करी थी, हमकों इन लेखोपरसे मालुम होता है कि प्रोफेसर जेकूबीका करा हुआ गण, कुल तथा शाखायोंकी संज्ञाका खुलासा खरा है, और प्रथम संज्ञा शाला बताती है, दूसरी आचार्योकी पंक्ति और तीजी पंक्तिमें से अलग हो गइ, शाखा बतावे है, तिससें ऐसा सिद्ध होता है, कल्पसूत्रमें गण (गच्छ) तथा कुल जणाया विना जो शाखायोंका नाम लिखता है, सो शाखा इस उपरल्ये पिछले गणके ताबेकी होनी चाहिये, और तिसकी उत्पत्ति तिस गच्छके एक कुलमें से हुइ होइ चाहिये, इस वास्ते मध्यम शाखा निसंदेह कौटिक गच्छमें समाइ हुइथी, और तिसके एक कुलमे सें फटी हुई बांकी शाखाथी के जिसके बीचका चौथा कुल प्रश्नवाहनक अर्थात् पणहवाहणय कहलाता है, इस अनुमान की सत्यता करने वाला राजशेखर अपने रचे प्रबंध कोशमें जो कोश तिनोंने विक्रम संवत् १४०५ में रचा है, तिसकी समाप्तिमें अपनी धर्म संबंधी उलाद विषयिक लिखी हुइ हकीकतसें साबूत होती है, सो अपनेकों जनाता है कि मै कोटिक गण प्रश्नवाहन कुल मध्यम शाखा हर्षपुरीय गच्छ और मलधारी संतान, जो मलधारी नाम अभयदेव सूरिकों विरद मिला था, तिसमेंसेंहुं ।।१, २, के पिछले शब्दोंको सुधारे करने में मै समर्थ नही हुं, परंतु इतना तो कह सकता हुं के यह बक्षीस स्तंभोकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लिखी हुइ मालुम होती है, ५, कोटीय गण अंत नंबर २ में लिग्खा हुआ मालुम होता है, जहां १, १, की २ दूसरी तर्फकी यथार्थ नकल नीचे प्रमाणे वंचाती है, सिद्ध = स ५ हे १ दी १० + २ अस्य पुरवाये कोटो...सर ए. कनिंगहामकी लीनी हुइ नकल से मैं पिछले शब्द सुधार सकता हूं, सो ऐसे अस्यापुरवाये कोट (हिय) मालुम होता है, परंतु टकारके उपरका स्वर स्पष्ट मालुम नही होता है, और यकारके वामे तर्फका स्थान थोडासाही मालुम होता है ॥६ एक आगे के गणका तथा तिसके एक कुलके नामोंका अपभ्रंसरूप नंबर १० वाला चित्र चौदवे में १४ मालुम होता है, जहां यथार्थ नकल नीचे लिखे प्रमाणे वांचने में आती है ॥ पंक्ति पहिली ॥ स ४० + ३ ग्र २ ठी २० एतासय पुरवायेवरणे गतीपेती वमीकाकु नवचकस्यरेहेनदीस्यसास स्यसेनस्यनीवतनंसावकद ॥ पंक्ति दूसरी ॥ पशानवधयगीह...ग.भ... प्रपा... ना...मात.. ॥ मैं निसंदेह कहताहूं के गती भूलसें वांचनेमें आया है, और सो खरेखरा गणे है, जेकर इसतरें होवे तो वरणेभी इस सरीषाही शब्द चारणे के बदले भूलसें वांचनेमें आया होना चाहिये, क्योंकि यह गण जो कल्पसूत्र एस.वी.इ. वाल्युम पत्रे २९१ प्रमाणे आर्य सुहस्तिका पांचमा शिष्य श्री गुप्तसें स्थापन हुआ था, तिसका दूसरा कुल प्रीतिधार्मिक है, (पत्रे. २९२) यह सहज सें मालुम होता है कि, यह नाम पेतिवमिक कुलके आचार्यका संयुक्त नाम पेतिवमिक कुल वाचकस्य में गुप्त रहा हुआ है, जोके पेतिवमिक संभवित शब्द है, और संस्कृत प्रइति वर्मिकके दर्शक दाखल प्रीतिवर्मनका साधिक शब्द तद्धित गिणतीमें करीएतोभी मैं ऐसे मानताहूं के यह यथार्थ नकलकी खामी उपर तथा ध और व की बीचमें निजीकके मिलते हुए उपर विचार करतां, सो बदलाके पेतिधमिक होना चाहिये, वांचणे में दूसरी भूल यह आचार्य के नाममें जहां ह्र के ऊपर ए-मात है सो असली पिछले व अक्षरके पेटेकी है, इस नामका पहिला भाग अवस्य रेहे नही थी, परंतु रोह था के जो रोह गुप्त, रोहसेन और अन्य शब्दों में मालुम पडता है. दुसरी पंक्तिमें थोडासा ही सुधारनेका है, जो प्रपा यह अक्षर शुद्ध होवें और तिनका शब्द बनता होवे, तबतो अर्पणकरा हुआ पदार्थ एक पाणी पीनेका ठाम होना चाहिये, अब में नीचे लिखे मूजब थोडासा बीचमें प्रक्षेप करना सूचन करता हुं ॥ स ४७ ग्र २ डि २० एतस्य पुरवाये चारणेगणे पेतीधमीक कुलवाचकस्य, रोहनदीस्य, सिसस्य, सेनस्य, निवतनं सावक. दर...प्रपा (दी) ना...इसका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तरजुमा नीचे लिखते है ।

संवत् ४७ उष्ण कालका महीना २ दूसरा मिति २० उपर लिखी मितिमें यह संसारी शिष्य द...का...।...यह एक पाणी पीनेका ठाम देने में आया था, यह रोहन दी (रोहनंदि) का शिष्य और चारण गणके पेतिधमिक (प्रइतिधर्मिक) कुलका आचार्य सेनका निवतन (है) ।।८ पिछला लेख जो ऐसीही रीती सें कल्पसूत्रमें जनाया हुआ एक गण कुल तथा शाखाका कुछक अपभ्रंस और क्षरे हुए नामाकों बतलाता है, सो नंबर २० चित्र १५का लेख है, तिसकी असली नकल नीचे लिके मूजब वंचाती है ।। पंक्ति पहिली ।। सिद्धउ नमो अरहतो महावीरस्ये देवनासस्य राज्ञा वासुदेवस्य संवतसरे । ९ + ८ । वर्ष मासे ४ दिवसे १० + १ एतास्या ।। पंक्ति दूसरी ।। पूर्ववया अर्यरेहे नियातो गण पुरीध. का कुल व पेत पुत्रीका ते शाखातो गणस्य अर्य-दे-वदत्त. वन. ।। पंक्ति तीसरी ।। रयय-क्शेमस्य ।। पंक्ति ४ ।। प्रकगीरीणे ।। पंक्ति ५ मी ।। किहदिये प्रज. ।। पंक्ति ६ छछी ।। तस्य प्रवरकस्य धीतु वर्णस्य गत्व कस्यम. युय मित्र (१) स...दत्तगा ।। पंक्ति ७ मी ।। ये...वतो मह तीसरी पंक्तिसें लेके सातमी पंक्तितांइतो सुधारा हो सके तैसा है नही, और मैं तिनके सुधारनेकी मेहनतभी नही करता हुं, क्योंके मेरे पास मुझकों मदत रे तैसी तिसकी लीनी हुइ नकल नही है, इतछठी टीका करनी बस है के नी पंक्तिमें बेटी का शब्द धितु और तिस पीछेका म. युयसो बहुलतासें (माताका) मातुयेके बदले भूलसें बांचनेमें आया है, सो लेख यह बतलाता है, के यह अर्पणभी एक स्त्रीने करा था ।। पंक्ति २ ।३।। दूसरी तीसरीमें लिखे हुए नामवाले आचार्योके नामोकों यह बक्षीस साथका संबंध अंधेरे में रहता है, पिछले बार बिंदुयेकी जगे दूसरा नमस्कार नमो भगवतो महावीरस्यकी प्रायें रही हुइ है, प्रथम पंक्तिमें सिद्धओ के बदले निश्चित शब्द प्रायें करके सिद्धं है, सर ए. कनिंगहामे आ बांचा हुआ अक्षर मेरी समझ मूजब विराम के साथें म है, दूसरा महावीरस्येकी जगें महावीरस्य धरना चाहिये, दूसरी पंक्तिमें पूर्व वयाके बदले पूर्ववाये गणके बदले गणतो, काकुलवके बदले० काकुलतो० टे के बदले पेतपुत्रिकातो और गणस्यके बदले गणिस्य वांचनेकी जरुरीआत हरेक कोइकों प्रगट मालुम पडेगी, नामोके संबंध में अर्य-रेहनीय अशक्य रूप है, परंतु जेकर अपने ऐसे मानीयेके हकी ऊपर इका असल खरेखरा पि छले

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चिन्हके पेटेका है, तद पीछे सो अर्यरोहनिय (आर्य रोहनके ताबेका) अथवा आर्य रोहनने स्थाप्या हुआ, अर्थात् संस्कृतमें आर्य रोहण होता है, इस नामका आचार्य जैन दंत कथामें अच्छीतरे प्रसिद्ध है, कल्पसूत्र एस.बी.इ. पत्र २९१ में लिखे मूजब सो आर्य सुहस्तिका पहिला शिष्य था, और तिसनें उद्देह गण स्थापन करा था, इस गणकी चार शाखा और छकुल हुए थे, तिसकी चौथी शाखाका नाम पूर्ण पत्रिका मुख्यकरके तिसके विस्तारकी बाबतमें इस लेखके नाम पेतपुत्रिकाके साथ प्रायें मिलता आता है, और यह पिछला नाम सुधारके तिसकों पोनपत्रिका लिखनेमें मैं शंकाभी नही करता हूं, सोइ नाम संस्कृतमें पौर्ण पत्रिकाकी बराबर होवेगी, और सो व्याकरण प्रमाणे पूर्ण पत्रिका करते हूए अधिक शुद्ध नाम है, इन छहों कुलोंमे सें परिहासक नामभी एक कुल है, जो इस लेखमें क्षर गए हूए नाम पुरधि-क के साथ कुछक मिलतापणा बतलाता है, दूसरे मिलते रूपों उपर विचार करता हूआ मैं यह संभवित मानताहूंके, यह पिछला रूपपरिहा.क के बले भूलसें बांचने में आया है, दूसरी पंक्तिके अंतमे पूरुषका नाम प्रायें छट्ठी विभिक्तिमें होवे, और देवदत्त व सुधारके देवदतस्य कर सकते है ।। ऐसें पूर्वोक्त सुधारेसें प्रथम दो पंक्तियां नीचे मूजब होती है ।। १ सिद्ध (म्) नमो अरहतो महावीर (अ) स्य् (अ) देवनासस्या. २. पूर्य्यव्, (ओ) य् (ए) अर्य्य-र् (ओ) ह् (अ) नियतोगण (तो) प् (अ) रि (हास) क् (अ) कुल (तो) प् (ओन्) अप् (अ) त्रिकात् (ओ) साखातोगण (इ) स्य अर्य्य-देवदत्त (स्य) न...

इसका तरजुमा नीचे लिखे मुजब होवेगा.

'फतेह' देवतायोंका नाश करता अरहत महावीरकों प्रणाम (यह गुण वाचक नामके खरेपणे में मेरेकों बहुत शक है, परंतु तिसका सुधारा करनेकों में असमर्थ हूं) राजा वासुदेवके संवत्के ९८ मे वर्षमें वर्षाऋतुके चौथे महीनेमें मिति ११ मीमें इस मितिमें...परिहासक (कुल) में कापोन पत्रिका (पौर्णपत्रिका) शाखाका अरय्य रोहने (आर्यरोहने) स्थापन करी शाला (गण) मेंका अरयय देवदत (देवदत्त) ए शालाका मुख्य गणि ।। यह लेख एकल्ले देखने सें यह सिद्ध करते है के मथुरांके जैन साधुयोंने संवत् ५ सें ९ अठानवें तक वा इसवी सन ८३ । वा ८४ सें लेके सन इसवी १६६ वा १६७ के बीचमें जैनधर्माधिकारी हुदेवालोंने परस्पर एक संप करा था, और तिनमे सें कितनेक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गच्छोमें मतानुचारीयो में विभाग पडाथा, और सो भाग हरेक शाला (गण) का कितनेक तिसके अंदर भाग हुए थे. ऊपर लिखे हूए नामों वाले पुरुषांको वाचक अथवा आचार्यका इलकाब मिलता है, जो बुद्धिष्ट माणकके साथ मिलता है और सो इलकाब (पदवीका नाम) बहुत प्रसिद्ध रीतीसें जैनके जो यति लोक साधु धर्म संबंधी पुस्तकों श्रावक साधुयोंकों समझने लायक गिणनेमे आतेथे तिनको देनेमें आते थे, परंतु जो साधु गणि (आचार्य) एक गच्छका मुखीया कहने में आताथा, तिसका यह भारी इलकाब था, और हालमेंभी पिछली रीती प्रमाणे बडे साधु मुख्य आचार्यकों देने मे आता है शाला (गणो) मेसें कोटिक गणके बहुत फांटे है, और तिसके पेटे भाग होके दो कुल, दो साखायों और एक भत्ति हुआ है, इस रास्ते तिसका बडा लंबा इतिहास होना चाहिये, और यह कहना अधिक नही होवेगा, क्योंकि लेखोंके पुरावे उपरसें तिसकी स्थापना अपणे ईसरी सनकी शुरूआतसें पहिले थोडेसें थोडा काल एक सैंकडा (सौ वर्ष) में हूइथी, वाचक और गणि सरीषे इलकाबोंकी तथा ईसवी सन पहिले सैकेके अंतमें असलकी शालाकी हयाती बतलावे है के तिस बखतमें जैन पंथकी बहुत मुदत हुआं चलती आत्मज्ञानीकी हयाती हो चुकीथी (कितनेही कालसें कंठाग्र ज्ञानवान् मुनियोकि परंपरायसें संतति चली आतीथी) तिस संततिमें साधु लोक तिस वखतमें अपने पंथकी वृद्धिकी बहुत हुस्यारीसें प्रवृत्ति राखते थे, और तिस कालसें पहिलेभी राखी होनी चाहिये, जेकर तिनोमें वाचकथे तो यहभी संभवित है के कितनेक पुस्तक वंचाने सीखाने वास्ते बराबर रीतीसें मुकरर करा हुआ संप्रदाय तथा धर्म सबंधी शास्त्रभी था. कल्पसूत्रके साथ मिलने सें येह लेखों श्वेतांबरमतकी दंत कथाका एक बडा भागकों (श्वेतांबरके शास्त्रके बडे भागकों) बनावटके शक (कलंक) सें मुक्त करते है, (श्वेतांबर शास्त्रके बहुत हिस्से बनावटके नही है किंतु असली सच्चे है) और स्थिविरावलिके जिस भाग ऊपर हालमे हम अख्तियार चला सकते है, सो भाग निःकेवल जैन के श्वेतांबर शाखा की वृद्धिका भरोंसा राखने लायक हवाल तिसमें हयाती साबित कर देता है, और तिस भागमेंभी ऐसीयां अकस्मात् भूले तथा खामीयों मालुम होती है, के जैसे कोइ कंठाग्रकी दंत कथाकों हालमें लिखता हुआ बीचमे रही जाए ऐसे हम धार सकते है, यह परिणाम (आशय) प्रोफेसर जेकोबी और मेरी माफक जे सखस तकरार करता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होवे के जैन दंत कथा (जैन श्वेतांबर लिखे हुए शास्त्रों की बात) टीका के असाधारण कायदे हेतु नही रखनी चाहिये, अर्थात् तिसमेके इतिहास संबंधी कथनो अथवा दूसरे पंथो की दंत कथा मे सें मिली हुइ दूसरी स्वतंत्र खबरोंसें पुष्टी मिलती होवे तो, सो माननी चाहिये, और जो ऐसी पुष्टी न होवे तो जैनमतकी कहनी (स्यादवा) तिसकों लगानी चाहिये, तैसें सखसौंकों उत्तेजन देनेवाला है, कल्पसूत्रकी साथें मथुरांके शिला लेखोंका जो मिलतापणा है, सो दूसरी यह बातभी तबलाता है कि इस मथुरां सहरके जैनलोक श्वेताबरी थे ।। इति डाक्तर बूलर ।। अब हम (इस ग्रंथके कर्त्ता) नी इन लेखोंकों वांचके जो कुछ समझे है सोइ लिख दिखलाते है ।। जैनमतमें वाचक १ दिवाकर २ क्षमाश्रमण ३ यह तीनो पदके नाम जो आचार्य इग्यारे अंग, और पूर्वोके पढे हुए थे तिनकों देनेमें आते थे, जैसे उमास्वातिवाचक १ सिद्धसेन दिवाकर २ देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण ३, इस वास्ते मथुरांके शिला लेखो में जो वाचकके नाम सें आचार्य लिखे है, वे सर्व इग्यारे अंग और पूर्वोके कंठाग्र ज्ञानवाले थे, और सुस्थित नामे आचार्यका नाम जो बूलरसाहिबने लिखा है सो सुस्थित नामे आचार्य विरात् तीसरे सैकेमे हुआ है, तिससें कोटिक गणकी स्थापना हुइ है, और जो वइरी शाखा लिखी है सो विरात् ५८५ वर्षे स्वर्ग गये, वज्रस्वामीसें स्थापन हुइथी वइरी शाखा के विना जो कुल और शाखा के आचार्य स्थापनेवालें सुस्थित आचार्य के लगभग कालमें हुए संभव होते है, इन लेखोंकों देखके हम अपने भाइ दिगंबरोंसें यह विनती करते है कि जरा मतका पक्षपात छोड के इन लेखों की तर्फ जरा ख्याल करोके इन लेखोंमें लीखे हुए गए, कुल शाखा के नाम श्वेतांबरोंके कल्पसूत्रके साथ मिलते है, वा तुमारेभी किसी पुस्तकके साथ मिलते है, मेरी समझमें तो तुमारे किसी पुस्तकमें ऐसे गण, कुल, शाखा के नाम नही है, जे मथुरांके शिला लेखों के साथ मिलते आवे इससें यह निसंदेह सिद्ध होता है, कि मथुरांके शिला लेखों में सर्व गण, कुल शाखा, आचार्योंके नाम श्वेतांबरोंके है, तो फेर तुमारे देवनसेनाचार्यनें जो दर्शन सार ग्रंथमें यह गाथा लिखी है कि बत्तीस बाससए, विक्कम निवस्स, मरण पत्तस्स, सोरछे वल्लहीए, सेवक संघस मुपन्नो ।।१।।

अर्थ विक्रमादित्य राजाके मरां एकसौ छत्तीस १३६ वर्ष पीछे सोरठ देशकी वल्लभी नगरीमें श्वेतपट (श्वेतांबर संघ उत्पन्न हुआ) यह कहनां

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्योंकर सत्य होवेगा, इस वास्ते इन शिला लेखोंसें तुमारा मत पीछे सें निकला सिद्ध होता है, इस वास्ते श्री विरात् ६०९ वर्ष पीछे दिगंबर मतोत्पत्ति. इस वाक्यसें श्वेतांबरोका कथन सत्य मालुम होता है, और अधुनक मतवाले लुंपक, ढुंढक, तेरापंथी वगेरे मतोंवालों से भी हम मित्रतासें विनती करते है के, तुमभी जरा इन लेखों कों बांचके बिचार करोके श्री महावीरजीकी प्रतिमाके उपर जो राजा वासुदेवका संवत् ९८ अठानवेका लिखा हुआ है, और एक श्री महावीरजीकी प्रतिमाकी पलांती उपर राजा विक्रमसें पहिले हो गए किसी राजेका संवत् विसका लिखा हुआ है, और इन प्रतिमाके बनवनेवाले श्रावक श्राविकांके नाम लिखे हुए है, और दश पूर्वधारी आचार्यो के समय के आचार्यो के नाम लखे हुए है ।। जिनोंने इन प्रतिमाकी प्रतिष्ठा करी है, तो फेर तुम लोक शास्त्रां के अर्थ तो जिनप्रतिमाके अधिकार में स्वकल्पनासें जूठे करके जिन प्रतिमाकी उत्स्थापना करते हो, परंतु यह शिला लेख तो तुमारे सें कदापि जते नही कहे जाएंगे, क्योंके इन शिला लेखोंकों सर्व यूरोपीयन अंग्रेज सर्व विद्वानाने सत्य करके माने है, इस वास्ते मनुष्य जन्म फेर पाना हर्लभ है, और थोडे दिनकी जिंदगी है, इस वास्ते पक्षपात बोझके तुम सच्चा धर्म तप गबादि गबोंका मानो, और स्वकपोल कल्पित बावीस २२ टोलेका पंथ और तेरापंथीयोंका मत छोड देवो, यह हित शिक्षा में आपकों अपने प्रियबंधव मानके लिखी है ।।

प्र.१५८ हमारे सुननेमें ऐसा आयाहै कि जैनमतमें जो प्रमाण अंगुल (भरत चक्रीका अंगुल) सो उत्सेधांगुल (महावीर स्वामिका आधाअंगुल) सें चारसौ गुणा अधिक है, इस वास्ते उत्सेधांगुलके योजनसें प्रमाणांगुलका योजन चारसौ गुणा अधिकहै, ऐसे प्रमाण योजनसें ऋषभदेवकी विनीता नगरी लांबीबारां योजन और चौडीनव योजन प्रमाणथी जब इन योजनाके उत्सेद्धांगुलके प्रमाणसें कोस करीये, तब १४४०० चौद हजार चारसौ कोस विनीता चौडी और १९२०० कोस लंबी सिद्ध होती है, जब एक नगरी विनिता इतनी बडी सिद्ध हूइ, तबतो अमेरिका, अफरीका, रूस, चीन, हिंदुस्थान प्रमुख सर्व देशों में एकही नगरी हुइ, और कितनेक तो चारसौ गुणेसेंभी संतोष नही पाते है, तो एक हजार गुणा उत्सेध योजनसें प्रमाण योजन मानते है, तब तो विनीता ३६००० हजार कोस चौकी और ४८०००

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हजार कोस लांबी सिद्ध होती है, इस कालके लोकतो इस कथन को एक मोटी गप्प समान समझेंगे, इस वास्ते आपसें यह प्रथम पूछते है कि जैनमतके शास्त्र मुजब आप कितना बडा प्रमाण अंगुलका योजन मानते हो ?

उ. जैनमतके शास्त्र प्रमाणे तो विनीता नगरी और द्वारकांका मापा और सर्व द्वीप, समुद्र, नरक, विमान, पर्वत प्रमुखका मापा जिस प्रमाण योजनसें कहा है सो प्रमाण योजन उत्सेधांगुलके योजनसें दश गुणा और श्री महावीर स्वामीके हाथ प्रमाणसें दो हजार धनुषके एक कोस समान (श्री महावीरस्वामी के मापे सें सवायोजन) पांच कोस जो क्षेत्र होवे सो प्रमाण योजन एक होता है, ऐसे प्रमाण योजनसें पूर्वोक्त विनीता जंबूद्वीपादिका मापा है, इस हिसाबसें विनीता द्वारकांदि नगरीयां श्री महावीर के प्रमाण के कोसों से चौडीयां ४५ पैतालीस कोस और लंबीयां साठकोस प्रमाण सिद्ध होतीयां है, इतनी बडी नगरी को कोइभी बुद्धिमान् गप्प नही कह सकता है, क्योंकि पीछले काल में कनोज नगरी में ३०००० तीस हजार दुकानो तो पान वेचनेवालोंकी थी, ऐसे इतिहास लिखनेवाले लिखते है तो, सो नगर बहुत बडा होनां चाहिये. अन्यभी इस काल में पैकिन नंदन प्रमुख बडे बडे नगर सुने जाते है, तो चौथे तीसरे आरेके नगर इनसें अधिक बडे होवे तो क्या आश्चर्य है, और जो चारसौ गुणा तथा एक हजार गुणा उत्सेधांगुलके योजनसें प्रमाणांगुलका योजन मानते है, वे शास्त्रके मतसें नही है, जो श्री अनुयोगद्वार सूत्रके मूल पाठमें ऐसा पाठ है, उत्सेधांगुलसें सहस्सगुणं पमाणंगुलं भवति इस पाठका यह अभिप्राय है कि एक प्रमाणांगुल उत्सेधांगुलसें चारसौ गुणीतो लांबी है, और अढाइ उत्सेधांगुल प्रमाण चौडी है, और एक उत्सेधांगुल प्रमाण जाडी (मोटी) है, इस प्रमाण अंगुलके जब उत्सेधांगुल प्रमाण सूची करीये तब प्रमाणांगुलके तीन टुकडे करीये, तब एक टुकडा एक उत्सेधांगुल प्रमाण चौडा और एक उत्सेधांगुल प्रमाण जाडा (मोटा) और चारसौ उत्सेधांगुलका लंबा होता है, ऐसा ही दूसरा टुकडा होता है, और तीसरा टुकडा एक उत्सेधांगुल प्रमाण चौडा और इतनाही जाडा (मोटा) और दोसो उत्सेधांगुल प्रमाण लंबा होता है, अब इन तीनों टुकडोंकों क्रमसें जोडीये तब एक उत्सेधांगुल प्रमाण चोडी और एक उत्सेधांगुल प्रमाण जाडी (मोटी) और एक हजार उत्सेधांगुल प्रमाण लांबी आठ हजार गुणी कहता है, सो इस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूर्वोक्त सूचीकी अपेक्षासें कहता हें, परंतु प्रमाणांगुलका स्वरूप नही है, प्रमाणांगुल जैसी उपर चारसौ गुणी लिख आए है तैसी है, इस चारसौ गुणी प्रमाणांगुलसें ऋषभदेव भरतकी अवगाहनादिका मापा है, परंतु विनीता, द्वारकां पृथ्वी, पर्वत, विमान, द्वीप, सागरोंका मापा हजार गुणी वा चारसौ गुणी अंगुलसें नही है, इन नगरी द्वीपादिकका मापा तो प्रमाणांगुल अढाइ उत्सेधांगुल प्रमाण चौडी है, तिससें मापा करा है, यह जैनमतके सिद्धांतकारोका मत है, परंतु चारसौ तथा एक हजार गुणी उत्सेधांगुलसें विनीता, द्वारकां, द्वीप, सागर, विमान, पर्वतोका मापा करतां यह जैन सिद्धांतका मत नही है, यह कथन जिनदास गणि क्षमाश्रमणजी श्री अनुयोगद्वारकी चूर्णिमें लिखते है, तथा च चूर्णिका पाठः जेअपमाणंगुलाउपुढवायपमाणाणिति तेअपमाणंगुल-विस्कंभणआणेयव्वानपुणसूइ अंगुलेणंतिएयं चविक्तगुणएणकेइएअस्सजं पुणमिणंतिअन्नेउसूइअंगुलमाणेणनसुत्तभणियंतं ।। इस पाठकी भाषा ।। जिस प्रमाणांगुलसें पृथ्वीस पर्वत, द्वीपादिका प्रमाण करीये है सो प्रमाणांगुलका जो विस्कंभ (चौडापणा) अढाइ उत्सेधआंगुल प्रमाण सें करनां, परंतु सूची आंगुलसें पृथ्वी आदिकका प्रमाण न करनां, और कितनेक ऐसे कहते है कि एक प्रमाणांगुलमें एक हजार उत्सेधांगुल मावे, ऐसे प्रमाणांगुलसें मापनां, और अन्य आचार्य ऐसे कहता है कि उत्सेधांगुलसें चारसौ गुणी ऐसे प्रमाणांगुलसे पृथ्वी आदिक का मापा करनां, अब चूर्णिकार कहता है कि ये दोनों मत हजार गुणी अंगुल और चारसौ गुणी अंगुलके मापेसें पृथ्वी आदिक के मापनेके मत, सूत्र भणित नही (सिद्धांत सम्मत नही) है, और अंगुल सत्तरी प्रकरणके कर्त्ता श्री मुनिचंद्रसूरिजी (जो के विक्रम संवत् ११६१ मे विद्यमान थे) इन पूर्वोक्त दोनो मतोंकों दूषण देते है तथा च तत्पाठः ।। किंचमये सुदोसुगमगहंवकलिंगमा-इआसव्वेपायेणरियदेसाएगंमियजोयणहुंति ।।१६।। गाथा ।। इसकी व्याख्या ।। जेकर ऐसे मानीयेके एक प्रमाण अंगुल में एक सहस्त्र उत्सेधांगुल अथवा चारसौ उत्सेधांगुल मावे, ऐसे योजनोंसे पृथ्वी आदिक मापीए, तबतो प्रायें मगधदेश, अंगदेश, कलिंगदेशादि सर्व आर्य देश एकही योजनमें मा जावेंगे, इस बास्ते दशगुणें उत्सेधांगुलके विस्कंभपणेसें मापना सत्य है, इस चर्चासें अधिक पांचसौ धनुषकी अवगाहनावाले लोक इस छोटेसे प्रमाणवाली नगरी में क्योंकर मावेंगे, और द्वारकांके करोडो घर कैसें मावेंगे, और चक्रवर्तीके बनावे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९६ करोड गाम इस छोटेसे भरतखंडमें क्योंकर वसेंगे, इनके उत्तर अंगुलसत्तरीमें बहुत अच्छीतरेंसें दीन है, सो अंगुलसत्तरी वांचके देखनां. चिंता पूर्वोक्त नही करनी, यह मेरा इस प्रश्नोत्तरका लेख बुद्धिमानोंकों तो संतोषकारक होवेगा, और असत् रूढीके माननेवालोंकों अच्चंभा जनक होवेगा, इसी तरें अन्यभी जैनमतकी कितनीक वाते असत्रूढिसें शास्त्रसें जो विरुद्ध है, सो मान रखी है, तिनका स्वरूप इहां नही लिखते है।

प्र.१५९. गुरु कितने प्रकारके किस किसकी उपमा समान और रूप १ उपदेश २ क्रिया ३ कैसी औरकैसे के पासों धर्मोपदेश नही सुननां, और किस पासों सुननां चाहिये.

उ. इस प्रश्न उत्तर संपूर्ण नीचे मुजब समझ लेनां.

एक गुर चास (नीलचास) पक्षी समान है. १

जैसें चाष पक्षीमें रूप है, पांच वर्ण सुंदर होने सें और शकुनमेंभी देखने लायक है १ परंतु उपदेश (वचन) सुंदर नही है, २ कीडे आदिके खाने सें क्रिया (चाल) अच्छी नही है ३ तैसेही कितनेक गुरु नामधारीयोमें रूप (वेष) तो सुविहित साधुका है १ परं अशुद्ध (उत्सूत्र) प्ररूपणेसे उपदेश शुद्ध नही, २ और क्रिया मूलोत्तर गुण रूप नही है, प्रमादसे निरवद्याहारादि नही गवेषण करते है ३ यदुक्तं ॥ दगपाणंपुप्फफलंअणेसणिज्जं गिहच्छकिच्चाइंअजया-पडिसेवंतिजइवेसविडंब गानवरं ॥१॥ इत्यादि ॥ अस्यार्थः ॥ सच्चित्त पाणी, फूल, फल, अनेषणीय आहार गृहस्थके कर्त्तव्य जिवहिंसा १ असत्य २ चोरी ३ मैथुन ४ परिग्रह ५ रात्रि भोजन स्नानादि असंयमी प्रति सेवते है, वेभी गृहस्थ तुल्यही है, परंतु यतिके वेषकी विटंबना करने सें इस वात सें अधिक है, ऐसे तो संप्रति कालमें दुःषम आरेके प्रभावसें बहुत है, परंतु तिनके नाम नही लिखते है, अतीत कालमें तो ऐसे कुलवालकादिकोंके द्रष्टांत जान लेने, कुलवालक में सुविहित यतिका वेषतो था. १ परं मागधिका गणिकाके साथ मैथुन करने में आशक्त था, इस वास्ते अच्छी क्रिया नही थी २ और विशाला अंगादि महा आरंभादिका प्रवर्त्तक होनेसे उपदेशभी शुद्ध नही था, सामान्य साधु होने से वा उपदेशका तिसकों अधिकार नही था, ३ ऐसे ही महाव्रतादि रहित १ उत्सूत्र प्ररूपक (गुरु कुलवास त्यागी) सो कदापि शुद्ध मार्ग नही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्ररूप शक्ता है २ निकेवल यति वेषधारक है ३ इति प्रथमो गुरु भेद स्वरूप कथनं ॥१॥

दूसरा गुरु क्रोंच पक्षी समान है. २

क्रोंचपक्षीमें सुंदर रूप नही है, देखने योग्य वर्णादिके अभावसें १ क्रियाभी अच्छी नही, कीडे आदिकों के भक्षण करने सें २ केवल उपदेश (मधुर ध्वनि रूप) है ३ ऐसे ही कितनेक गुरुयों में रूप नही, चारित्रिये साधु समान वेष के अभावसें १ सत क्रियाभी नही, महाव्रत रहित और प्रमादके सेवनेसें २ परंतु उपदेशशुद्ध मार्ग प्ररूपण रूप है ३ प्रमादमें पडे और परिव्राजकके वेषधारी ऋषभ तीर्थंकरके पोते मरीच्यादिवत् अथवा पासस्थे आदिवत् क्योंकि पासस्थेमें साधु समान क्रियातो नही है १ और प्रायें सुविहित साधु समान वेषभी नही, यदुक्त ॥ वस्त्रंदुपडिलेहियमपाणसकन्नि अंदुकूलाई इत्यादि ॥ अर्थः-वस्त्र दुप्रतिलेखित प्रमाण रहित सदशक पवडी रखनेसें सुविहितका वेष नही २ परं शुद्ध प्ररूपक है, एक यथाछंदेकों वर्जके पासस्था १ अवसन्ना २ कुशील ३ संसक्त ४ ये चारों शुद्ध प्ररूपक हो सकते है, परंतु दिन प्रतिदश जणोका प्रतिबोधक नंदिषेण सरीषे इस भांगेमें न जानने, क्योंके नंदिषेणके श्रावकका लिंग था । इति दुसरा गुरु स्वरूप भेद ॥२॥

तीसरा गुरु भ्रमरे समान है. ३

भ्रमर में सुंदर रुप नही, कृश्न वर्ण होने सें १ उपदेश (तिसका उदात्त मधुर स्वर) नही है २ केवल क्रिया है उत्तम फूलों में सें फूलोंकों विना दुःख देनेसे तिनका परिमल पीनेसें ३ तैसेही कितने क गुरु यतिके वेषवालेभी नही है १ और उपदेशकभी नही है २ परंतु क्रिया है, जैसे प्रत्येक बुद्धादिकों मे प्रत्येक बुद्ध, स्वयंबुद्ध तीर्थंकरादि यद्यपि साधुतो है, परंतु तीर्थगत साधुयोंके साथ प्रवचन १ लिंग से २ साधर्मिक नही है, इस वास्ते यति वेष भी नही, १ उपदेशक भी नही २ ``देशनाऽनासेवकः प्रत्येकबुद्धादिरित्यागमात्'' क्रियातो है, क्योंकि तिस भवसेंही मोक्ष फल होना है ॥ इति तृतियो गुरु स्वरूप भेद ॥३॥

चौथा गुरु मोर समान है. ४

जैसें मोर में रूपतो है पंच वर्ण मनोहर १ और शब्द मधुर केकारूप

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है २ परं क्रिया नही है, सर्प्पादिकोंभी भक्षण कर जाता है, निर्दय होनेसें ३ तैसें गुरुयों कितनेक में वेष १ उपदेशतो है २ परंतु सत्क्रिया नही है, ३ मंग्वाचार्यवत् ।। इति चोथा गुरु स्वरूप भेद ।।४।।

पांचमा गुरु कोकीला समान है. ५

कोकिला में सुंदर उपदेश (शब्द) तो है, पंचम स्वर गाने सें १ और क्रिया आंब की मांजरादि शुचि आहारके खाने रूप है. तथा चाहुः ।। आहारे शुचिता, स्वरे मधुरता, नीके निरारंभता ।। बंधौ निर्ममता, वने रसिकता, वाचालता माधवे ।। त्यक्तातद्विज कोकीलं, मुनिवरं दूरात्पुनर्दांभिकं । वंदंते वत खंजनं, कृमि भुजं चित्रा गतिः कर्मणां ।।१।। परंतु रूप नही काकादिसेंभी हीनरूप होनेसें ३ तैसेंही कितनेक गुरुयोंमें सम्यक् क्रिया १ उपदेश २ तोहै, परंतु रूप (साधुका वेष) किसी हेतु सें नही है, सरस्वतीके छुडाने वास्ते यति वेष त्यागि कालिकाचार्यवत् ।। इति पांचमा गुरु स्वरूप भेद ।।५।।

छट्ठा गुरु हंस समान है. ६

हंसमे रूप प्रसिद्ध है १ क्रिया कमल नालादि आहार करने सें अच्छी है २ परंतु हंसमे उपदेश (मधुर स्वर) पिक शुकादिवत् नही है ३ तैसें ही कितने एक गुरुयों में साधुका वेष १ सम्यक् क्रियातो है २ परंतु उपदेश नही, गुरुने उपदेश करने की आज्ञा नही दीनी है, अनधिकारी होने सें धन्यशालिभद्रादि महाऋषियोंवत् ।। इति छट्ठा गुरु स्वरूप भेद ।।६।।

सातमा गुरु पोपट तोते समान है. ७

तोता इहां बहुविध शास्त्र सूक्त कथादि परिज्ञान प्रागल्यवान् ग्रहण करनां. तोता रूप करके रमणीय है १ क्रिया आंब कदली दामित फलादि शुचि आहार करता है. इस वास्ते अपनी है २. उपदेश वचन मधुरादि तोतेका प्रसिद्ध है ३ तैसें कितनेक गुरु वेष १ उपदेश २ सम्यक् क्रिया. ३ तीनो करके संयुक्त है, श्रीजंबु श्रीवज्रस्वाम्यादिवत् इति सातमा गुरु स्वरूप भेद ।।७।।

आठमा गुरु काक समान है. ८

जैसे काकमें रूप सुंदर नही है १, उपदेशभी नही, ककुया शब्द बोलनेसें २ क्रियाभी अपनी नही है, रोगी, बूढे बलदादिकोंके आंख कढ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लेनी, चूंच रगकनी और जानवरोंका रुधिर मांस, मलादि अशुचि आहारि होने सें ३ ऐसे ही कितनेक गुरुयों में रूप १ उपदेश २ क्रिया ३ तीनोही नही है, अशुद्ध प्ररूपक संयम रहित पासने आदि जानने, सर्व परतीर्थीकभी इसी भंगमे जानने ।। इति आठमा गुरु स्वरूप भेद ।।८।।

इनमे सें उपदेश सुनने योग्यायोग्य कौन है.

इन आठेही भांगोमें जो भंग क्रिया रहित (संयमरहित) है वे सर्व त्यागने योग्य है, और जो भंग सम्यक् क्रिया सहित है वे आदरने योग्य है, परंतु तिनमें भी जो उपदेश विकल अंग है वे स्वतारकभी है, तोभी परकों नही तारसक्ते है, और जे अंग अशुद्धोपदेशक है, वेतो अपनेकों और श्रोताकों संसार समुद्रमें डबोनेही वाले है, इस वास्ते सर्वथा त्यागने योग्य है, और शुद्धोपदेशक, क्रियावान् पक्ष कोकिलाके द्रष्टांत सूचित अंगीकार करने योग्य है, त्रीक योगवाला पक्ष तोते के द्रष्टांत सूचित सर्वसें उत्तम है । और शुद्ध प्ररूपक पासस्थादि चारोंके पास उपदेश सुननाभी शुद्ध गुरुके अभावसें अपवादमें सम्मत है.

प्र.१६०. इस जगतमें धर्म कितने प्रकारके और कैसी उपमासें जानने चाहिये.

उ. इस प्रश्नोत्तरका स्वरूप नीचेके लिखे यंत्रसें जानना धर्म पांच प्रकारका है ।

एक धर्म कथेरीवन समान है, जैसें कंथेरी वन निष्फल है. सर्व प्रकारसें केवल कांटो करके व्याप्त होने से लोकांकों विदारणादि अनर्थ जनक होता है, और तिस वनमे प्रवेश निर्गमन भी दुष्कर है ।।१।।	इस वन समान नास्तिक मतियोंका माना हुआ धर्म है, सर्वथा थोडासाभी शुभ फल नही देता है, और परभव में नरकादि गतियोंमे दुःख अनर्थकों देता है, और इस लोक में लोक निंदा, धिक्कार नृप दंडादिके भयसें इस कुकर्मी नास्तिक मतमें प्रवेश करनां मुशकल है, और जो इस मतमें प्रवेश कर गये है, तिनकों स्व इतानुसार मद्य मांसादि भक्षण मात, बहिन, बेटीकी अपेक्षा रहित स्त्रीयोंसें भोगादि विषयके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुस्वादके सुखकी लंपटता सें तिस नास्तिक मतमे सें निकलनाभी मुशकल है, इस वास्ते यह धर्म सर्वथा सुज्ञजनो को त्यागने योग्य है, इस मतमें धर्मके लक्षणतो नही है, परंतु तिसके माननेवाले लोकोने धर्म मान रखा है, इस वास्ते इसका नामभी धर्मही लिखा है ।। इति प्रथम धर्म भेद ।।१।।

एक धर्म शमी खेजडी वंबूल कीकर खदिर वेरी करीरादि करके मिश्रित वन समान है यह वन विशिष्ट शुभ फल नही देता है किंतु सांगरी वव्वूल फलादि सामान्य नीरस फल देते है, सांगरी पक्की शुष्क हुइ होइ किंचित् प्रथम खाते हुए मीठी लगती है परंतु कंटका कीर्ण हो नेसें विदारणादि अनर्थका हेतु होवे है ।२।

इस वन समान बौद्धांका धर्म है, क्योंकि ब्रह्मचर्यादि कितनीक सत् क्रिया और ध्यान योगाभ्यासादिक के करने सें मरां पीछे व्यंतर देवता की गतिमे उत्पन्न होने सें कुछक शुभ सुख रूप फल भोगमें देता है, तथा चोक्तं बौद्ध शास्त्रे ।। मृदीशय्या प्रातरुय पेया ।। भक्तं मध्ये पानकंचा परान्हे ।। द्राक्ष पाणं शर्कराचार्द्धरात्रौ ।। मोक्षश्चांत शाक्य पुत्रेण द्रष्टः ।।१।। मणुन्न भोयणं, भुच्चा मणुन्नं, सयणासणं मणुन्नं, सिअ गारंसि मणुन्नं, झायए मुणी ।।२।। इत्यादि ।। बौद्ध मतके शास्त्रानुसारे अपने शरीरकों पुष्ट करनां, मनके अनुकूल आहार, शय्यादिकके भोग सें और बौद्धभिक्षिके पात्रमें कोइ मांस दे देवे तो तिसकोभी खा लेनां, स्नानादिकके करने सें पांचो इंद्रियोंके पोषन रूप और तप न करने सें आदि में तो मीठा (अच्छा) लगता है, परंतु भवांतर में दुर्गति आदिक अनर्थ फल उत्पन्न करता है, इस वास्ते यह धर्मभी त्यागने योग्य है ।। इति दूसरा धर्म भेद ।।२।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक धर्म पर्वतके वन तथा जंगली वन समान है, इस वनमें थोहर, कंथेरी, कुमार प्रमुखके फल देनेवाले वृक्ष है और कंटकादिसमें विदारण करणे सें अनर्थकेभी जनक है १ और कितनेक धव सल्लकी के सुपलाश पनस सीसमादि वृक्ष है, इनके फलतो निःसार है, परंतु विशिष्ट अनर्थ जनक नही है २ और कितनेक वेरी खेजडी खयरादि निःसार अशुभ फल देते है कंटकों सें विदारणादि अनिष्टके जनकभी होते है ३ और कितनेक किंपाकादि वृक्ष है. मुख मीठे परिणाममें विरस फलगके देनेवाले है ४ कितनेक उडुबर (गूलर) विल्वादि फल निःसार शुभ फलवाले कंटकादिके अभावसें अनर्थ जनक नही है ५ कितनेक नारिंग, जंबीर, करणादि मध्यम, फलों के वृक्ष है, परंतु अनर्थ जनक नही है ६ कितनेक रायण (खिरणी) आंब, प्रियंगु प्रमुख सरस शुभ पुष्प इस वन समान तापस १ नैयायिक, वैशेषिक, जैमनीय, सांख्य, वैभव आदि आश्रित सर्व लौकिक धर्म और चरक परिव्राजक इनके विचित्रपणेसें विचित्र प्रकारका फल है सोइ दिखाते है, कितनेक वेदोक्त महा यज्ञ, पशु वध रूप स्नान होमादि करके धर्म मानते है, वे कंथेरी वनवत् है, परभवमें अनर्थरूप जिनका प्राये फल होवेगा, और कितनेक तो तुरमणीश दत्तराजाकी तरे निकेवल नरकादि फल वाले होते है । तथाचोक्तं आरण्य के ॥ येवैइहयथा २ यज्ञेपुपशुन्विश संतितेतथा २ इत्यादि ॥ तथा शुकसंवादे ॥ यूपं छित्वा, पशून् हत्वा, कृत्वा रुधिर कर्दमं, यद्येवं गम्यते स्वर्गे, नरके केन गम्यतेः ॥१॥ स्कंधपुराणे ॥ वृक्षां च्छिंत्वा, पशून् हत्वा, कृत्वा रुधिर कर्दमं, दग्ध्वा वन्हौ तिलाज्यादि, चित्रं स्वर्गोभिलष्यते ॥१॥ कितनेक अपात्रकों अशुद्ध दान गायत्र्यादिके जापादि धव पलाशादिवत् प्राय फलदेनेवालेभी सामग्री विशेष मिले किंचित् फल जनक है, परं अनर्थ जनक नही, विवक्षित है, इस स्थल में प्रतिदिन लक्ष दान देनेवाला मरके हाथी हूए सेतवत्, तथा दानशालादि कराने वाले नंदमणिकारवत् और सेचनक हाथीके जीव लक्ष भोजी ब्राह्मणवत् द्रष्टांत जानने ॥२॥ कितनेक तो सावद्य (सपाप) अनुष्ठान, तप, नियम दानादि अन्याय सें द्रव्यो पार्जन करी कुपात्र दानादि वेरी खेजकीवत् किंचित् राज्यादि असार शुभ फल दुर्लभ बोधिपणा हीन जातित्व परिणाम विरसादि अनर्थभी देवे है, कौणिक पिछले नवमें तपस्वीवत् और जैनमति नाम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

फलवाले है, ये सर्व मालकी रहित जानने ७ ऐसे तारत म्यतासें अधम, मध्यम, उत्तम वृक्षोंकी विचित्रता सें पर्वतके वनोंकीभी विचित्रता जाननी ॥३॥

मिथ्या द्रष्टी सुसढादि देव गतिमें गए बहुल संसारी हूए, वेभी मिथ्या तप करने में तत्पर हुए होए, इसी भंगमे जानने ॥३॥ कितनेके किंपाकादिकी तरें असत् आग्रह देव गुरुके प्रत्यनीकादि भाव वाले तथाविध तपोनुष्टा नादि करके एकवार स्वर्गादि फल देके बहुत संसार तिर्यंच नरकादिके दुःख देनेवाले होते है, गौशालक, जमालि आदिवत् ॥४॥ तथा कितनेक भद्रभाव विशेष पात्र गुणादि परिज्ञान रहित दान पूजादि मिथ्यात्वके रागसें करते है, वे उडुंबरादिवत् किंचित् राज्यमनुष्य के भोग सामग्र्यादि असार शुभ फलही देते है, दूसरे के उपरोधसें दान देनेवाले सुंदर वाणीयेकी तरें जैनधर्माश्रित भी निदान सहीत अविधिसें तप अनुष्ठान दानादि करनेवालेभी इसी अंगमें जान लेने, चंद्र, सूर्य वहु पुत्रिकादिके द्रष्टांत जान लेने ॥५॥ कितनेक तापसादिधर्मी बहुत पाप रहित तपोनुष्ठान कंदमूल फलादि सच्चित्त भोजन करनेवाले अल्प तपवाले नारंग, जंबीर, करणादि तरुवत् ज्योतिषि भवनपत्यादि तरुवत् ज्योतिषि भवनपत्यादि बि मध्यम देवर्द्धि फलदायी है. श्री वीर पिछले भवोंमें परिव्राजक पूर्ण तापसवत् तथा जैन मति सरोस गोरव प्रमाद संयमी आदि मंडुकी वध करने वाले क्षपक मुनि मंगु आचार्यादि वत् ॥६॥ कितनेक तामलि ऋषिकी तरें उग्र तप करनेवाले चरक परिव्राजकादि धर्मवाले आंबादि वृक्षोंवत् ब्रह्मदेवलोकावधि सुख फल देते है ॥७॥ ये सर्व प्रर्वतके वन समान कथन करे, परंतु

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्यग् द्रष्टीकों ये सर्व त्यागने योग्य है ।। इति तीसरा धर्म भेद ।।३।।

एक धर्म नृपवन समान श्रावक धर्म है राजेके वनमें अंब, जंबू राजादनादि जघन्य वृक्ष है केला, नाली-केरसोपारी आदि मध्यम माधवी लता तमाला एला, लवंग चंदना गुरुतगरादय उत्तम चंपक राजचंपक जाति पाढलादि फूल तरुविचित्र है, ये सर्व गिरिवनके वृक्षों से सींचे, पाले हुए होने सें अधिक फल, पत्र पुष्पवाले है, सदा सरस बहु मोले फलादि देते है ।।४।।

इस वन समान श्राद्ध (श्रावक) धर्म सम्यक्त्व पूर्वक बारांव्रताकी अपेक्षा तेरासौकरोड अधिक भेद होने सें विचित्र प्रकारका सम्यग् गुरु समीपे अंगीकार करनेसें परिगृहीत है, अज्ञान मए लोकिधर्मसें अधिक है, और अतिचार विषय कषायादि चौर श्वापदादिकोंसे सुरक्षित है, और गुरु उपदेश आगमाभ्यासादि करके सदा सुसिंच्य मान है, सौ धर्मदेवलोक के सुख जघन्य फल है, सुलभबोधि होनेसे और निश्चित जलदी सिद्धि सुखांके देनेवाले होने से और मिथ्यात्वीके सुखांसें बहुत सुभग आनंदादि श्रावकोंकीतरें देते है, और उत्कर्षसें तो जीर्ण सेठादिकी तरें बारमे अच्युत देवलोकके सुख देते है ।। इस बास्ते बारांव्रत रूप श्राद्ध (श्रावक) धर्म यत्नसें अंगीकार गृहस्थ लोकोने करनां, और अधिक अधिक शुद्धभावोंसें पालनां आराधनां चाहिये ।। इति चौथा धर्म भेद ।।४।।

एक धर्म देवताके वन समान साधु धर्म है, देवता के वनमें देवतायोंकी तारतम्यतासें ऋद्धि मानोके क्रीडा करने के नंदनवनादिमेंभी राजाके वनवत् जघन्य, मध्यम, उत्तम वृक्ष होते है, सर्वऋतु के फलवान् वृक्षों के होनेसें और देवताके प्रभाव सें सर्व

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रोग विषादि दूर करे, मनचिंतित रूप करण जरा पलित नाशक इत्यादि बहु प्रभाववाली उषधीयां पत्र फलादि करके संयुक्त है, पिछले सर्व वनोसें यह प्रधान वन है ॥५॥

इस वन समान चारित्र धर्मभी पुलाक बकुश कुशील निर्ग्रंथ स्नातकादि विचित्र भेदमय है, विराधक श्रावक साधुयोंका धर्म तीसरे मिथ्यात्व धर्ममें ग्रह करनेसें इस धर्ममें अविराधक यति धर्मवाले जाननें, तिनकों जघन्य सौधर्म देवलोकके सुख रूप फल है. आराधिक श्रावक धर्मवाले सें अधिक और बारा कल्प देवलोक, नव ग्रैवेयकादि मध्यम सुख और उत्कृष्टतो अनुत्तर विमानके सुख संसारिक और संसारातीत मोक्ष फल देते है, इस वास्ते ते यह धर्म सर्व शक्तिसें उत्तरोत्तर अधिक अधिक आराधना चाहिये, यह सर्व धर्मासें उत्तम धर्म है, यह कथन उपदेश रत्नाकरसें किंचि लिखा है ॥

इति पांचमा धर्म भेद ॥५॥

प्र.१६१. जो जैनमतमें राजे जैनधर्मी होते होवेंगे, वे जैनधर्म क्योंकर पाल सक्ते होवेंगे, क्योंकि जैनधर्म राज्यधर्मका विरोधी हमकों मालुम होता है.

उ. गृहस्थावस्थाका जैनधर्म राज्यधर्म (राज्यनीति) का विरोधी नही है. क्योंकि राज्यधर्म चौर यार खूनी असत्यभाषी प्रमुखाकों कायदे मूजब दंड देना है. इस राज्य नीतिका जैनराजाके प्रथम स्थूल जीवहिंसा रूप व्रतका विरोध नही है, क्योंकि प्रथम व्रतमें निरपराधिकों नही मारना ऐसा त्याग है, और चौर यार खूनी असत्यभाषी आदिक अन्याय करनेवालेतो राजाके अपराधी है, इस वास्ते तिनके यथार्थ दंड देने से जैन धर्मी राजाका प्रथम व्रत भंग नही होता है, इसीतरे अपने अपराधि राजा के साथ लडाइ करने से भी व्रत भंग नही होता है, चेटक महाराज संप्रति कुमारपालादिवत्, और जैनधर्मी राजे बारांव्रत रूप गृहस्थका धर्म बहुत अच्छी तरेसें पालते थे, जैसे राजा कुमारपालने पाले.

प्र.१६२. कुमारपाल राजाने बारांव्रत किस तरेंके करे, और पाले थे.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उ. श्री कुमारपाल राजा के श्री सम्यक्त मूल बारांव्रत पालनके थे ॥ त्रिकाल जिन पूजा. १ अष्टमी चतुर्दशीमें पोषधोपवासके पारणे में जो देखने में कोइ पुरुष आया तिसकों यथार्थ वृत्ति दान देकर संतोष करना २ और जो कुमारपालके साथ पोषध करते थे तिनको अपने आवास में पोषध करते थे तिनको अपने आवास में पारणा करानां ३ टूटे हुए साधर्मिकका उद्धार करनां, एक हजार दीनार देना ४ एक वर्षमें साधर्मियोकों एक करोड दीनार दीने ऐसे चौदह वर्ष में चौदह करोड दीनार दीने ५ अठनवे लाख ९८ रूपक उचित दान में दीने, ६ बहत्तर ७२ लक्ष रूपक द्रव्यके पत्र निसंतान रोनेवालीके फाडे ७ इक्कीस २१ कोश (ज्ञानभंडार) लिखवाए १८ नित्य प्रतें श्री त्रिभुवनपाल विहार (जो कुमारपालने छानवे ९६ करोड रुपकके रचसें जिन मंदिर बनवाया था) तिसमें स्नात्रोत्सव करनां ९ श्री हेमचंद्रसूरि के चरणोंमे द्वादशावर्त्त वंदन करनां १० पीछे क्रमसें सर्व साधुयोको वंदन करतां ११ जिस श्रावकने पहिलां पोषधादि व्रत करे होघे तिसको वंदन, मान, दानादि करनां १२ अठारह देशो मे अमारीपटह कराया १३ न्याय घंटा बजानां १४ और अठारह देशोके सिवाय अन्य चौदह देशो में धनबल सें मैत्रीबलसें जीव रक्षाका करानां १५ चौदहसौ चौतालीस १४४४ नवीन जिन मंदिर बनवाए १६ सोलेसौ १६०० जीर्ण जिन मंदिरोका उद्धार कराया १७ सातवार तीर्थ यात्रा करी १८ ऐसे सम्यक्तकी आराधना करी ॥ पहिलें व्रतमे अपराधी विना मारो ऐसे शब्दके कहने से एक उपवास करनां १ दूसरे व्रतमे भूलसे जूठ बोला जावे तो आचाम्लादि तप करनां २ तीसरे व्रतमें निसंतान मरेका धन नही लेनां ३ चौथे व्रतमें जैनी हुआ पीछे विवाह करणेका त्याग और चौमासेके चार मास त्रिधा शील पालनां, मनसें भंगे एक उपवास करनां, वचनसें भंगे एकाचाम्ल, कायसें भंगे एकाशन. एक परनारी सहोदर बिरुद धरनां. भोपलदेवी आदि आठों राणीयोंके मरे पीछे प्रधानादिकों के आग्रहसेंभी विवाह करनां नही, ऐसा नियम भंग नही करा. आरात्रिकार्थ सोनेमयि भोपलदेवीकी मूर्त्ति करवाइ, श्री हेमचंद्रसूरिजीए वासक्षेप पूर्वक राजर्षि बिरुद दीना ४ पांचमे व्रतमें छ करोडका सोना, आठ करोडका रूपा, हजार तुला प्रमाण महर्ध्य मणिरत्न, बत्तीस हजार मणधृत, बत्तीस हजार मण तेल, लक्षा शालि चने, जुवार, मूंग प्रमुख धान्योके मूंढक रखे पांच लाख ५००००० अश्व, पांच हजार ५०००, हाथी, पांचसौ ५०० ऊंट, घर, हाट, सभायान पात्र गाडि वाहिनीये सर्व अलग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अलग पांचसौ पांचसौ रखे. इग्यारेसो हाथी ११००, पंचास हजार ५००० संग्रामी रथ, इग्यारे लाख ११००००० धोडे, अठारह लाख १८००००० सुभट. ऐसें सर्व सैनका मेल रखा. ५ छठे व्रतमें वर्षाकालमें पटनके परिसरसें अधिक नही जाना ६ सातमें भोगोपभोग व्रतमें मद्य, मांस, मधु, भ्रक्षण, बहुबीज पंचोडुं बरफल, अभक्ष, अनंतकाय, धृत पूरादि नियम देवताके विना दीना वस्त्र, फल आहारादि नही लेनां. सचित्त वस्तुमें एक पानकी जाति तिसके बीडे आठ, रात्रिमें चारों आहारका त्याग. वर्षाकालमें एक घृत विकृती लेनी, हरित शाक सर्वका त्याग, सदा एकाशनक करनां, पर्वके दिन अब्रह्मचर्य सर्व सचित्त विगयका त्याग ७ आठमें व्रतमें सातों कुव्यसन अपने देशसें काढ देने, ८ नवमें व्रतमें उभय काल सामायिक करनां, तिसके करे हुए श्री हेमचंद्रसूरिके विना अन्य जनसें बोलनां नही, दिनप्रते १२ प्रकाश योग शास्त्रके २० वीस वीतराग स्तोत्रके पढने ९. दशमें व्रतमें चतुर्मासेमें शत्रू ऊपर चढाइ नही करनी १० पोषधोपवासमें रात्रिमें कायोत्सर्ग करनां, पोषधके पारणे सर्व पोषध करनेवालोंकी भोजन करानां ११ अतिथि संविभाग व्रतमें दुखिये साधर्मि श्रावक लोकांका, ७२ लक्ष द्रव्यका कर छोडनां, श्री हेमचंद्रसूरिके उत्तरनेकी धर्मशालामें जो मुखवस्त्रिकाका प्रतिलेखक साधर्मिकों ५०० पांचसौ धोडे और बारां गामका स्वामी करा, सर्व मुखवस्त्रिकाके प्रतिलेखकांकों. ५०० पांचसौ गाम दीने १२ इत्यादि अनेक प्रकारकी शुभकरणी विवेक शिरोमणि कुमारपाल राजाने करीथी. यह गुरु १ धर्म २ और कुमारपालके व्रताके स्वरूप उपदेशरत्नाकरसें लिखे है.

प्र.१६३. इस हिंदुस्थानमें जितने पंथ चल रहे है, वे प्रथम पीछे किस क्रमसें हूए है, जैसें आपके जानने में होवे तैसें लिख दीजिये ?

उ. प्रथम ऋषभदेवसें जैनधर्म चला १ पीछे सांख्यमत २ पीछे वैदिक कर्म कांड का ३ पीछे वेदांत मत ४ पीछे पातंजलि मत ५ पीछे नैयायिक मत ६ पीछे बौद्ध मत ७ पीछे वैशेषिक मत ८ पीछे शैव मत ९ पीछे वामीयोंका मत १० पीछे रामानुज मत ११ पीछे मध्व १२ पीछे निंबार्क १३ पीछे कबीर मत १४ पीछे नानक मत १५ पीछे बल्लभ मत १६ पीछे दाउमत १७ पीछे रामानंदीयोंका मत १८ पीछे स्वामिनारायणका मत १९ पीछे ब्रह्म समाज मत २० पीछे आर्या समाज मत दयानंद सरस्वतीने स्थापन करा. २१ इस कथन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में जैनमतके शास्त्र १ वेद भाष्य २ दंतकथा ३ इतिहासके पुस्तकादिकोंका प्रमाण है ।। इत्यलम् ।। अहमदावादका वासी और पालणपुरमें न्यायाधीश राज्याधिकारी श्रावक गिरधरलाल हीराभाई कृत कितनेक प्रश्न तिनके उत्तर पालिताणेंमें चार प्रकार महा संघके समुदायने आचार्य पद दत्त नाम विजयानंदसूरि अपर प्रसिद्ध नाम आत्माराम मुनि कृत समाप्त हुए है ।। इन सर्व प्रश्नोंत्तरोमें जो वचन जिनागम विरुद्ध भूल सें लिखा होवे तिसका मिथ्या दुःकृत देता हुं। सर्व सुज्ञ जन आगमानुसार सुधार के लिख दीजो, और मेरे कहे उत्सूत्रका अपराध माफ करजो ।। इति प्रश्नोत्तरावलि नाम ग्रंथ समाप्तम्.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(अथ गुरु प्रशस्तिः)

(अनुष्टुप् वृत्तम्-)

श्रीमद्वीर जिनेशस्य शिष्य रत्नेषु ह्युत्तमः
सुधर्म इति नाम्नाऽभूत् पंचमः गण भृतसुधीः १

अयमेव तपागच्छ महाद्रोर्मूलमुच्चकैः
ज्ञेयः पौरस्त्यपट्टस्य भूषणं वाग्विभूषणं २

परंपरायां तस्यासीत् शासनोत्तेजकः प्रधीः
श्रीमद्विजयसिंहाव्हः कर्मठः धर्म कर्मणि ३

तस्य पट्टांबरे चंद्रः विजयः सत्यपूर्वकः
अभूत् श्रेष्ठगुणग्रामैः संसेव्यः निखिलैर्जनैः ४

पट्टे तदीयके श्रीमत् कर्पूरविजयाभिधः
आसीत् सुयशाः ज्ञान क्रिया पात्रं सदोद्यमः ५

तत्पट्ट वंश मुक्तासु मणिरिवेप्सितप्रदः
सिद्धांत हेमनिकषः क्षमा विजय इत्यभूत् ६

जिनोत्तम पद्म रूप कीर्त्ति कस्तूर पूर्वकाः
विजयांता क्रमेणैते बभूवुर्बुद्धिसागराः ७

तस्य पट्टाकरे चिंता मणिरिवेप्सितप्रदः
मणिविजय नामाऽभूत् धोरेण तपसाकृशः ८

ततोऽभूत् बुद्धि विजयः बुद्धयष्टगुणगुम्फितः
प्रस्तुतस्यास्मदीयस्य गच्छवर्यस्य नायकः ९

चक्रे शिष्येण तस्यें जैन प्रश्नोत्तरावली
सद्युक्तया श्रीमदानंद विजयेन सविस्तरा १०

संवत् बाण युगांऽ के दुंः पोषमास्यऽसितछदे,
त्रयोदश्यां तिथौ रम्ये वासरे मंगलात्मनि ११

पल्लवि पार्श्वनाथाऽधिष्ठिते प्रल्हादनेपुरे
स्थित्वाऽयं पूर्णतांनीतः ग्रंथः प्रश्नोत्तरात्मकः १२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री
जैन धर्म विषयक प्रश्नोत्तर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org
RAJUL 25010863